प्रश्न-पत्र : प्रथम

ग्रन्थालय एवम् समाज (Library and Society)

प्रश्न-1 : लाइब्रेरी शब्द की व्याख्या कीजिए तथा आधुनिक समाज में ग्रन्थालयों की भूमिका की विवेचना कीजिए ?

लाइब्रेरी (Library) शब्द जिसका हिन्दी अनुवाद पुस्तकालय अथवा ग्रन्थालय होता है का साधारण बोलचाल की भाषा में आशय एक ऐसे भवन से होता है जहाँ ग्रन्थ संकलित रहते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर व्यक्ति उनका उपयोग कर सकते हैं। इस प्रकार के भवन जहाँ ग्रन्थ संकलित रहते हैं वे पुस्तक प्रकाशक तथा पुस्तक विक्रेता के यहाँ भी होते हैं लेकिन वे ग्रन्थालय नही कहे जाते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि ऐसे भवन जहाँ ग्रन्थ अध्ययन के उद्देश्य से संकलित किये जाते हैं **ग्रन्थालय** कहलाते हैं।

आज ग्रन्थालय ग्रन्थों के संकलित करने के भवन तक ही सीमित नही रह गये हैं बल्कि आज वे उपयोक्ताओं द्वारा अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करने एवम् कराने की कार्यशाला माने जाते हैं। आज के ग्रन्थालय केवल ग्रन्थों का संग्रह करके उन्हें उपयोक्ताओं को आदान-प्रदान करने का कार्य ही नहीं करते हैं बल्कि परम्परागत पाठ्य सामग्रियों जैसे – पत्र-पत्रिकाएँ, समाचार-पत्र, शोध-पत्र, हस्तलिखित ग्रन्थ, पाण्डुलिपियाँ, फिल्म, नक्शे, चार्ट आदि के साथ-साथ नवीनतम प्रलेखों तथा आधुनिकतम पाठ्य-सामग्रियों जैसे – डिस्क, टेप्स, फ्लॉपी, सीडी-रोम, डेटाबेस आदि का भी सकलन एवम् संग्रह करते हैं यहाँ तक कि आज ग्रन्थालय डिजीटल रूप में भी स्थापित किए जा रहे हैं तथा इन नवीनतम सूचना स्रोतों से उपयोक्ताओं को उनकी वान्छित सूचना उपलब्ध करा रहे हैं। इस प्रकार आज के ग्रन्थालय असीम सूचना एवम् ज्ञान के कोष बन चुके हैं और कोई भी व्यक्ति इन ग्रन्थालयों का उपयोग आसानी से कर सकता है। इतने पर भी ग्रन्थालय की आज तक कोई मान्यता प्राप्त परिभाषा नहीं है।

आधुनिक समाज में ग्रन्थालयों की भूमिका (Role of Libraries) :

1. शिक्षा के क्षेत्र में (In education) – शिक्षार्थी अपनी कक्षाओं में पढ़ाये गये पाठ्यक्रम के अतिरिक्त ग्रन्थालयों में उपलब्ध ग्रन्थों से ज्ञान प्राप्त करते हैं। ग्रन्थालयों में शैक्षिक पाठ्यक्रमों से अतिरिक्त मानव-ज्ञान से सम्बन्धित अनेक विषयों से सम्बन्धित ज्ञान-सामग्री संकलित की जाती है जिससे अवगत होने हेतु छात्रों में प्रेरणा एवम् जिज्ञासा उत्पन्न होती है। इस प्रकार प्रत्येक विषय के छात्र को ग्रन्थालय में अपने ज्ञान में वृद्धि करने में सहायता मिलती है। भूगोल पढ़ने वाला छात्र ग्रन्थालय में उपलब्ध नक्शों तथा एटलसों का उपयोग

अपने अनुसंधान के लिए करता है और इसी प्रकार एक कलाकार श्रेष्ठ चित्रों के संकलन का उपयोग चित्रकला के अध्ययन में करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि छात्रों को उनके पाठ्यक्रम से सम्बन्धित ग्रन्थों के अतिरिक्त गहन अध्ययन, नवीन विषयों का अन्वेषण तथा किसी विस्तृत अध्ययन के लिए उपयुक्त एवम् प्रचुर मात्रा में ज्ञान-सामग्री का उपयोग करने की सुविधा केवल ग्रन्थालयों में ही प्राप्त होती है।

2. व्यवसाय के क्षेत्र में (In profession) — कुछ व्यवसाय ऐसे होते हैं जिनसे सम्बन्धित समस्त ज्ञान ग्रन्थों में ही निहित होता है जो ग्रथालयों में ही उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार के व्यवसायों में वकील, डाक्टर, इन्जीनियर, ग्रन्थालयी, मैकेनिक आदि प्रकार के व्यवसाय आते हैं। इसीलिए इन व्यवसायों से सम्बन्धित ख्याति प्राप्त व्यक्ति अपने व्यक्तिगत ग्रन्थालय इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु स्थापित करते हैं।

3. उद्योग एवम् व्यापार के क्षेत्र में (In industries and business) — उद्योग एवम् व्यापार में संलग्न बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ अपने यहाँ सुसज्जित आधुनिक ग्रन्थालयों की व्यवस्था करती हैं क्योंकि उन कम्पनियों में उनके स्वयं के वैज्ञानिक अनुसंधान कार्य में रत रहते हुए उन ग्रन्थालयों से ग्रन्थों की सहायता प्राप्त करते हैं। इस प्रकार के ग्रन्थालयों में NTPC, ONGC, BHEL, SAIL, BEL भारत पेट्रोलियम आदि प्रमुख हैं।

4. अनुसंधान के क्षेत्र में (In research field) — किसी भी अनुसंधान से सम्बन्धित नवीन तथ्यों की जानकारी ग्रन्थालयों में उपलब्ध नवीनतम् सामयिक धारावाहिकों एवम् पत्रिकाओं में प्राप्त होती है जो ग्रन्थालयों में ही उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार अनुसंधानों को प्रोत्साहित करने में ग्रन्थालयों की मुख्य भूमिका होती है। इसलिए सभी प्रकार के अनुसंधान केन्द्र अपने यहाँ ग्रन्थालयों की व्यवस्था अवश्य करते हैं।

5. सांस्कृतिक क्षेत्र में (In cultural field) — प्राचीन ग्रन्थों एवम् महान विद्वानों की पाण्डुलिपियों में तत्कालीन समाज के ऐतिहासिक एवम् सांस्कृतिक तथ्य उल्लिखित होते हैं। इस प्रकार इन ग्रन्थों में निहित ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता रहता है।

6. आध्यात्मिक तथा भावनात्मक क्षेत्र में (In spiritual and ideological realms) — ग्रन्थालयों में समाज के हितार्थ अनेक उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ग्रन्थ संग्रहीत किये जाते हैं जिनमें समाज के हितार्थ ईश्वर प्रेरणा सम्बन्धी ग्रन्थ भी होते हैं जिनमें आध्यात्मिक एवम् भावनात्मक विचारों को प्रतिपादित करने वाले ग्रन्थ तथा उच्च कोटि के स्थायी महत्व के ग्रन्थ आदि आते हैं। इस प्रकार समाज के आध्यात्मिक क्षेत्र में ग्रन्थालय अपनी भूमिका निभाते हैं।

7. मनोरंजन एवम् अवकाश के क्षणों में (In recreation and leisure) — वैसे तो आज किसी भी व्यक्ति के पास अपनी आजीविका चलाने से ही अवकाश नहीं मिलता है फिर भी अगर थोड़ा-बहुत मिले तो वह उसका सदुपयोग करना चाहता है जो टेलीविजन एवम् रेडियो के समान ही उनके अवकाश के क्षणों को मनोरंजन से सुखदायी बना दे। यह कार्य ग्रन्थालय उन्हें मनोरंजनात्मक, उपन्यास, कहानी, नाटक आदि से सम्बन्धित ग्रन्थ प्रदान करके करते हैं।

प्रश्न-2 : ग्रन्थालय का एक प्रणाली के रूप में विश्लेषण कीजिए ?

प्रणाली को अँग्रेजी भाषा में सिस्टम (System) कहते हैं जिसकी उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्द सिस्टेमा (Systema) से हुई है जिसका सीधा-सा अर्थ किसी कार्य को करने को एक निश्चित विधि या तरीके से होता है। कोई भी प्रणाली विभिन्न घटकों से मिलकर बनती है जिन सभी का उद्देश्य एक ही होता है। जैसे — कम्प्यूटर प्रणाली, मानव शरीर प्रणाली, रेल प्रणाली, स्कूटर प्रणाली अथवा ग्रन्थालय प्रणाली। ये सभी प्रणालियाँ अपने विभिन्न अंगों/घटकों से मिलकर बनती हैं जिन्हें प्रणाली की उप-प्रणालियाँ (Sub-systems) कहा जाता है। इस प्रकार प्रणाली को निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है —

1. प्रणाली सामान्यतया पूर्ण प्रणाली एवम् उसके अनेक अंगों के विषय में सोचने की विधि है। — **वेस्ट चर्चमेन।**
2. प्रणाली विभिन्न घटकों का परस्पर संयोजन है जो सभी किसी सामान्य उद्देश्य की पूर्ति हेतु परस्पर मिलकर इकाई के रूप में परिणित होती है। — **जे.ए.मॉर्टिन**

इस प्रकार प्रणाली को अनेक घटकों की एक स्वीकृत व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो किसी योजना के अनुसार विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति की दशा में नेतृत्व प्रदान करती है।

प्रणाली विश्लेषण (System Analysis) :

प्रणाली विश्लेषण से तात्पर्य किसी भी प्रणाली में उसके विभिन्न अंगों/घटकों (जैसे — मानव, आन्तरिक संरचना, भौतिक उपकरण आदि) एवम् इनसे सम्बन्धित सम्पूर्ण क्रियाओं का अध्ययन कर उनके कार्य एवम् उद्देश्य की दृष्टि से विश्लेषण करना है जिससे उक्त प्रणाली में निहित कमियों अथवा दोषों का ज्ञान किया जा सके तथा प्रणाली के सुचारुरूप से संचालन हेतु उन कमियों एवम् दोषों को दूर किया जा सके। इस प्रकार किसी भी प्रणाली का प्रणाली विश्लेषण सुधार हेतु समय-समय पर अध्ययन कर उसमें त्रुटिपूर्ण अंगों की जानकारी करने तथा उन्हें दूर करने या रूपान्तरित करने के लिए किया जाता है। जैसे किसी व्यक्ति की शरीर रूपी प्रणाली में किसी अंग के पीड़ित होने पर उनकी जानकारी करना तथा शल्य चिकित्सा द्वारा उस अंग को निकालकर दूसरा उपयुक्त अंग प्रत्यारोपण करना जिससे मानव प्रणाली सही ढंग से चलती रहे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि किसी प्रणाली के सुधार के लिए ही उसका विश्लेषण किया जाता है जिससे यदि उसमें कोई त्रुटिपूर्ण अंग है तो उसे हटाया जा सके या उसके स्थान पर सही अंग संस्थापित किया जा सके।

ग्रन्थालय प्रणाली के रूप में विश्लेषण (Library : System Analysis) :

ग्रन्थालय भी एक प्रणाली के रूप में कार्य करते हैं। इनके कार्यों की विस्तृत प्रकृति के अनुसार इसके अन्तर्गत दो प्रकार की प्रणालियाँ (1) Data Processing System, तथा (2) Informational System कार्य करती हैं तथा इन दोनों प्रणालियों के अधीन ग्रन्थालय में मुख्य रूप से निम्न उप-प्रणालियाँ (जिन्हें ग्रन्थालय के अंग भी कह सकते हैं) कार्य करती हैं जो निम्न हैं —

1. अधिग्रहण उप-प्रणाली (Acquisition Sub-system)

2. प्रसूचीकरण उप-प्रणाली (Cataloguing Sub-system)
3. परिसंचरण उप-प्रणाली (Circulation Sub-system)
4. धारावाहिक नियंत्रण उप-प्रणाली (Serial Control Sub-system)
5. सन्दर्भ उप-प्रणाली (Reference Sub-system)
6. प्रशासन उप-प्रणाली (Administration sub-system)
7. ....
8. .....

इस प्रकार हम देखते हैं कि ग्रन्थालय प्रणाली में अनेक उप-प्रणालियाँ कार्य करती हैं जिनके कारण ग्रन्थालय एक जटिल प्रणाली माना जाता है। ग्रन्थालय रूपी प्रणाली में अनेक उप-प्रणालियाँ कार्यरत होने के कारण समय-समय पर अनेक कमियाँ या त्रुटियाँ आती रहती हैं और ग्रन्थालय समस्याओं से घिर जाता है। जब कोई ग्रन्थालय अनेक जटिल समस्याओं से घिर जाता है तथा अपने उपयोक्ताओं को प्रभावपूर्ण ढंग से सेवा प्रदान करने में असमर्थ हो जाता है तब वह अपनी कमियों एवम् दोषों को खोजने का प्रयास करता है जो केवल ग्रन्थालय के समस्त क्षेत्रों का अध्ययन एवम् विश्लेषण कर प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए ग्रन्थालयों में **प्रणाली विश्लेषण** की आवश्यकता अनुभव की जाती है। इस प्रकार ग्रन्थालयों में प्रणाली विश्लेषण से तात्पर्य ग्रन्थालय की समस्याओं का अध्ययन कर उन्हें ज्ञात करना तथा उनका निदान करना भी है। इस प्रकार ग्रन्थालयों में प्रणाली विश्लेषण ग्रन्थालय की समस्याओं का निदान करने का एक माध्यम, विधि अथवा तरीका है।

कोई भी ग्रन्थालय जो अपनी समस्याओं का निदान करना चाहता है तो वह अपनी प्रणाली का विश्लेषण करके अपनी कार्य करने की क्षमता एवम् दक्षता में वृद्धि करने में समर्थ हो सकता है लेकिन इसके लिए यह आवश्यक है कि उसे प्रणाली विश्लेषण की विधियों एवम् तकनीकियों की जानकारी हो। आज ग्रन्थालयों में त्रुटियों एवम् कमियों को ज्ञात करने के लिए उनका प्रणाली-विश्लेषण करना आवश्यक माना जाने लगा है। क्योंकि वर्तमान में पूर्व प्रचलित मान्यताओं पर आधारित तकनीकियों के उपयोग करने के स्थान पर वैज्ञानिक प्रबन्ध पर आधारित नवीन तकनीकियों को अपनाने पर अधिक बल दिया जाता है। ग्रन्थालयों में समस्या के निदान के रूप में प्रणाली-विश्लेषण निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है --

1. ग्रन्थालय से सम्बन्धित समस्या को ज्ञात करना तथा उसका अध्ययन कर विश्लेषण करना।
2. समस्या से सम्बन्धित समस्त डेटा एकत्रित करना तथा उनका भी विश्लेषण करना।
3. समस्या के निदान हेतु सम्भव विकल्पों की खोज करना।
4. प्रत्येक विकल्प की समीक्षा एवम् मूल्यांकन करना।
5. उपयुक्त विकल्प का चयन करना।
6. प्रयुक्त विकल्प के परिणामों की समीक्षा करना।

प्रश्न-3 : औपचारिक एवम् अनौपचारिक शिक्षा में ग्रन्थालयों की भूमिका की विवेचना कीजिए ?

शिक्षा एवम् ग्रन्थालय दो जुड़वाँ बहने हैं जिससे एक को दूसरे से किसी भी प्रकार

अलग नहीं किया जा सकता है। शैक्षणिक संरचना के आधार ही ग्रन्थालय हैं -- **ग्रन्थालय किसी भी शैक्षणिक संस्था का हृदय माना जाता है।** पूर्व में शिक्षा में ग्रन्थालयों का इतना महत्व नहीं था जितना कि आज है। आज किसी भी देश की शिक्षा की प्रगति उस देश के ग्रन्थालयों पर अधिक निर्भर करती है इसलिए यदि शिक्षा का विकास करना है तो इसके लिए ग्रन्थालयों का विकास भी होना आवश्यक है।

शिक्षा, शिक्षा संस्थानों जैसे -- स्कूल, कालेज एवम् विश्वविद्यालयों में प्रदान की जाती है ये शिक्षा संस्थाएँ समाज के अन्तर्गत शिक्षा प्रदान करती हैं जिनका उद्देश्य अपने छात्रों तथा विद्यार्थियों को उनकी सामर्थ्य एवम् शक्ति के विकास के लिए सन्तुलित-ज्ञान प्रदान करना होता है। इन शिक्षा संस्थाओं में उनके कार्यक्रमों में सहयोग प्रदान करने हेतु अनेक उपतंत्र कार्य करते हैं जिनमें उनके ग्रन्थालय भी होते हैं जो अपने पैतृक तंत्र के कार्यों, क्रियाकलापों एवम् उनके उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में ग्रन्थालय निम्न प्रकार अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं।

औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा (Formal and Non-formal Education)

शिक्षा प्राप्त एवम् प्रदान करने के दो ढंग होते हैं, औपचारिक एवम् अनौपचारिक। औपचारिक शिक्षा वह है जिसमें कोई भी शिक्षार्थी शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से किसी शैक्षिक संस्था (स्कूल, कालेज या विश्वविद्यालय) में अपना नाम पंजीकृत कराता है तथा अध्यापक एवम् छात्र पद्धति के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करता है। लेकिन अनौपचारिक शिक्षा में इस प्रकार का कोई संस्थागत आधार नहीं होता है इसमें व्यक्ति पत्राचार शिक्षा के माध्यम से, व्यक्तिगत शिक्षण लेकर अथवा अपने स्वयं अध्ययन से शिक्षा ग्रहण करता है।

1. औपचारिक शिक्षा में भूमिका (Role in Formal Education) -- प्रत्येक औपचारिक शिक्षा केन्द्र चाहे वह स्कूल, कालेज अथवा विश्वविद्यालय हो उससे सम्बद्ध एक ग्रन्थालय अवश्य होता है। इस ग्रन्थालय में उन सभी पाठ्यक्रमों से सम्बन्धित पुस्तकें अवश्य संग्रहीत की जाती हैं जो उस शिक्षा केन्द्र में संचालित हैं। इसके साथ ही छात्रों को उन पुस्तकों को पढ़ने के लिए या उन पुस्तकों में निहित ज्ञान को ग्रहण करने के लिए प्रेरित किया जाता है। शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर अर्थात् स्कूल स्तर पर यह कक्षा में की गई पढ़ाई को पूरा करने के लिए किया जाना चाहिए। इसके बाद विशेषकर कालेजों एवम् विश्वविद्यालयों में पढ़ाई का केन्द्र-बिन्दु कक्षा की अपेक्षा धीरे-धीरे ग्रन्थालय की ओर मुड़ जाता है। यह सभी किसी विषय विशेष पर उपलब्ध विविध प्रकार की पुस्तकों को विस्तृत अध्ययन के माध्यम से किया जा सकता है। पुस्तकों के विस्तृत अध्ययन करने के बाद कोई भी शिक्षार्थी विभिन्न दृष्टिकोणों से उस विषय का विश्लेषण एवम् तुलना करने में समर्थ हो सकता है। इससे उस शिक्षार्थी में अपने स्वयं के स्वतंत्र विचार एवम् अपना मत प्रस्तुत करने की योग्यता का विकास होता है। इस प्रकार छात्रों में बौद्धिक विकास जागृत करने में ग्रन्थालयों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है।

शैक्षिक संस्थाओं के अतिरिक्त सार्वजनिक ग्रन्थालय भी औपचारिक शिक्षा में अपना

योगदान प्रदान करते हैं। इस उद्देश्य हेतु सार्वजनिक ग्रन्थालयों को भी शैक्षणिक प्रकृति की पुस्तकें अपने यहाँ संग्रहीत करनी चाहिए जो छात्रों एवम् अध्यापकों के लिए उपादेय हों। यहाँ यह बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए कि सार्वजनिक ग्रन्थालयों का प्रमुख उद्देश्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति की सेवा करना है इसलिए छात्रों एवम् अध्यापकों की भी आवश्यकताओं को अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए।

2. अनौपचारिक शिक्षा में भूमिका (Role in Non-formal Education)— इस प्रकार की शिक्षा में अध्यापक की सहायता प्रत्यक्ष रूप से बिल्कुल नहीं होती है। यहाँ केवल ग्रन्थालय की ही मुख्य भूमिका होती है। अनौपचारिक शिक्षा में छात्रों को किसी भी तरह अपने स्वयं के अध्ययन से ही शिक्षा एवम् ज्ञान प्राप्त करना होता है। औपचारिक शिक्षा संस्थाओं के साथ-साथ सार्वजनिक ग्रन्थालय इस सन्दर्भ में विशेष भूमिका निभाते हैं। शिक्षा संस्थाओं के ग्रन्थालयों द्वारा अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों के लिए अपनी सभी सुविधाएँ स्वतंत्र रूप से दी जानी चाहिए और इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसके स्वयं के उपयोक्ताओं को कोई हानि न हो। विश्वविद्यालय जो उच्च शिक्षा के क्षेत्र में शैक्षिक मानक निर्धारित करते हैं और परीक्षाएँ सम्पन्न कराते हैं इस सन्दर्भ में उनकी विशेष एवम् महत्वपूर्ण भूमिका है उन्हें अपने ग्रन्थालयों की सेवाओं को जितना सम्भव हो सके उतने व्यापक रूप से अपने पंजीकृत छात्रों के साथ-साथ अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को भी उपलब्ध कराना चाहिए। इसके लिए शाखा (Branch) ग्रन्थालय स्थापित किए जा सकते हैं जिनका उपयोग बाह्य छात्र भी कर सकें। लेकिन अनौपचारिक शिक्षा को मुख्य सहायता प्रदान करने का प्रमुख दायित्व सार्वजनिक ग्रन्थालयों पर होता है इसके लिए सार्वजनिक ग्रन्थालयों में उन पुस्तकों एवम् पत्रिकाओं का संग्रह किया जाना चाहिए जो उस क्षेत्र के अनौपचारिक शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्रों के लिए उपयोगी हों। इससे उस क्षेत्र के वे छात्र लाभ उठा सकेंगे जो पत्राचार, स्वयं शिक्षा, दूरशिक्षा आदि के माध्यम से शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि ग्रन्थालय अपनी भूमिका उन छात्रों की सेवा प्रदान करने में भी निभाते हैं जो औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ अनौपचारिक शिक्षा ग्रहण करते हैं। अतः ग्रन्थालयों का शिक्षा से बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है इसलिए कहा जा सकता है कि शिक्षा एवम् ग्रन्थालय दो जुड़वाँ बहने हैं जिन्हें एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता है।

प्रश्न-4 : ग्रन्थालय की आधुनिक अवधारणा पर अपने विचार व्यक्त करते हुए ग्रन्थालयों के प्रकार भी बताइये ?

लोकतंत्र के आगमन के साथ ही ज्ञान प्राप्त करने के अधिकार राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक को बहुत पहले हो चुके हैं। आज किसी भी प्रकार के ग्रन्थालय की सफलता का मापदण्ड उसमें संग्रहीत पाठ्य-सामग्री आदि से न मानकर ग्रन्थालय द्वारा प्रदत्त सेवाओं से होता है और यही कारण है कि आज ग्रन्थालयों के उपयोक्ताओं को सर्वोपरि मानते हुए उसे समस्त प्रकार की आवश्यक, आधुनिक एवम् सर्वोत्तम विधियों एवम् तकनीकियों के माध्यम से उत्तम सेवा प्रदान करने की व्यवस्था की जाती है। आज के उपयोक्ताओं को पूरे प्रलेख की अपेक्षा

उसके किसी महत्वपूर्ण विशेष अंश मात्र की आवश्यकता होती है और इसी को उपलब्ध कराने के उद्देश्य से ग्रन्थालयों को अपना कार्य करना पड़ता है। इसीलिए आज के ग्रन्थालय ग्रन्थालय न होकर सूचना केन्द्र माने जा रहे हैं। ग्रन्थालय की प्राचीन अवधारणा प्रायः विलुप्त हो चुकी है और आधुनिक एवम् नवीनतम अवधारणाओं का सूत्रपात हो रहा है इसीलिए वर्तमान समय में ग्रन्थालय सूचना केन्द्र भी न कहे जाकर सूचना विश्लेषण केन्द्र कहे जा रहे हैं।

आधुनिक ग्रन्थालयों में जो वास्तव में ग्रन्थालय कम सूचना केन्द्र या सूचना विश्लेषण केन्द्र अधिक हैं उपयोक्ताओं की विशिष्ट एवम् विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु स्थापित किये जाते हैं। सामान्य कार्य एवम् सेवाएँ तो लगभग सभी ग्रथालयों में सम्पन्न एवम् प्रदान की जाती है पर इनके अतिरिक्त आधुनिक ग्रन्थालयों में विशिष्ट कार्य भी सम्पन्न किये जाते हैं। इसलिए आधुनिक ग्रन्थालय वे ग्रन्थालय कहे जा सकते हैं जो उपयोक्ताओं हेतु नवीनतम सेवाएँ प्रदान करने का प्रावधान अपने यहाँ करते हैं वे कार्य अथवा सेवाएँ निम्न हैं –

1. सन्दर्भ एवम् सूचना सेवा प्रदान करना ।
2. प्रतिलिपिकरण तथा अनुवाद सेवाओं की व्यवस्था करना ।
3. अन्तर्ग्रन्थालय ऋण की व्यवस्था करना ।
4. सारांशीकरण तथा अनुक्रमणिकाकरण सेवाओं की व्यवस्था करना।
5. विशिष्ट विषयों की वांङ्मयसूची सेवा प्रदान करना ।
6. सामयिक अभिज्ञता सेवा (CAS) की व्यवस्था करना ।
7. चयनित प्रसार सेवा (SDI) की व्यवस्था करना ।
8. नैटवर्क पर सूचना उपलब्ध कराने की व्यवस्था करना।
9. सूचना का विश्लेषण करके उपलब्ध करना।

आधुनिक ग्रन्थालयों के प्रकार (Types of Modern Libraries) :

आधुनिक समाज में ग्रन्थालयों के कई प्रकार विकसित हो चुके हैं जो आधुनिक समाज की सूचना एवम् ज्ञान-सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। आधुनिक ग्रन्थालयों के निम्न प्रकार होते हैं –

1. राष्ट्रीय ग्रन्थालय (National Libraries) – राष्ट्रीय ग्रन्थालय किसी भी राष्ट्र का केन्द्रीय ग्रन्थालय होता है जो राष्ट्र द्वारा संरक्षित होता है। राष्ट्रीय ग्रन्थालय उस देश में प्रकाशित समस्त ग्रन्थों को भावी पीढ़ियों के लाभार्थ संग्रहीत एवम् सुरक्षित रखने के लिए उत्तरदायी रहता है। विश्व के लगभग सभी देशों में अपने-अपने राष्ट्रीय ग्रन्थालय है।

2. सार्वजनिक ग्रन्थालय (Public Libraries) – सार्वजनिक अथवा सर्व-जनों को सेवा प्रदान करने वाले ग्रन्थालय सार्वजनिक ग्रन्थालय कहलाते हैं। ये वे ग्रन्थालय होते हैं जो समाज के सभी वर्गों के लिए जाति, वर्ण, व्यवसाय, लिंग के भेदभाव के विचार किए बिना हर समय स्वतंत्र रूप से खुले रहते हैं। ये ग्रंथालय जनता द्वारा संस्थापित, जनता द्वारा समर्थित तथा जनता द्वारा उपयोग में लाये जाते हैं।

3. शैक्षणिक ग्रन्थालय (Academic Libraries) – किसी भी शिक्षण संस्थान के

ग्रन्थालय को शैक्षणिक ग्रन्थालय कहते हैं। शैक्षणिक ग्रन्थालय का प्रमुख कार्य विद्यार्थियों द्वारा कक्षाओं में अर्जित ज्ञान को पूर्ण तथा विकसित करना तथा उनमें चिन्तन की मौलिक शक्ति उत्पन्न करना है। शिक्षा संस्थान अपने ग्रन्थालय के अभाव में अधूरे रहते हैं।

4. विशिष्ट ग्रन्थालय (Special Libraries) — किसी विशिष्ट विषय अथवा क्षेत्र के उपयोक्ताओं की माँग की पूर्ति करने वाले ग्रन्थालय विशिष्ट ग्रन्थालय कहलाते हैं। ये ग्रन्थालय किसी पैतृक संस्था के ग्रन्थालय होते हैं तथा वे अपनी पैतृक संस्थाओं की आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु स्थापित एवम् संचालित किये जाते हैं।

5. सूचना केन्द्र (Information Centres) — सूचना केन्द्र विशिष्ट ग्रन्थालयों का ही एक आधुनिक रूप होता है जो अपनी पैतृक संस्थाओं के अनुसंधानकर्त्ताओं की पूर्ति करने के लिए स्थापित एवम् संचालित किए जाते हैं। जब विशिष्ट ग्रन्थालयों में ग्रन्थालय सेवाओं की अपेक्षा प्रलेखन सेवाओं का आयोजन किया जाता है तो उन्हें प्रलेखन केन्द्र और जब सूचना सेवाओं का आयोजन किया जाता है तब इन्हें सूचना केन्द्र कहा जाता है।

6. डिजीटल ग्रन्थालय (Digital Libraries) — डिजीटल ग्रन्थालय डिजीटल सूचना अर्थात अंकों पर आधारित सूचना से सम्बन्धित होते हैं जो विविध प्रकार की प्रकृतियों के होते हैं जिनमें सूचना से सम्बन्धित कार्य जैसे — सूचना को अंकीय बनाना, उसका संग्रहण करना, उपयोग करना तथा उसमें सहभागी होना आदि समस्त कार्य सम्पन्न किए जाते हैं। इस प्रकार डिजीटल ग्रन्थालयों में सूचना का अंकीय रूप में व्यवहार किया जाता है।

प्रश्न-5 : राष्ट्रीय ग्रन्थालय किसे कहते हैं तथा उसके क्या प्रमुख कार्य होते हैं ? समझाइये।

किसी भी देश के वैभव एवम् इतिहास तथा मानव जाति द्वारा अर्जित ज्ञान एवम् उसके द्वारा प्राप्त उपलब्धियों को सुरक्षित एवम् संरक्षित रखने हेतु देश के केन्द्र में एक ग्रन्थालय की अत्यन्त आवश्यकता होती है जिसे राष्ट्रीय ग्रन्थालय कहते हैं। राष्ट्रीय ग्रन्थालय का अर्थ किसी भी देश की राष्ट्रीय सरकार द्वारा अपने नागरिकों को अध्ययनशील बनाने हेतु राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित ग्रन्थालय से होता है जो किसी भी देश का एक अधिकृत ग्रन्थालय होता है जिसका संचालन उस देश की केन्द्रीय सरकार करती है जिसमें पूरे देश में प्रकाशित समस्त सामग्री को संग्रहीत किया जाता है तथा जिसकी सेवाएँ प्राप्त करने का अधिकारी देश का प्रत्येक नागरिक हो सकता है। राष्ट्रीय ग्रन्थालय के द्वार राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्वतंत्र रूप से खुले रहते हैं। कुछ देशों के राष्ट्रीय ग्रन्थालयों के उदाहरण निम्न हैं —

(a) National Library (India), Kolkata.
(b) Library of Congress (USA), Washington, D.C.
(c) British Library (UK), London.
(d) The State Lenin Library (Russia), Moscow.
(e) National Diet Library (Japan), Tokyo.

परिभाषाएँ (Definitions) :

1. राष्ट्रीय ग्रन्थालय वह ग्रन्थालय होता है जिसका रखरखाव राष्ट्र के द्वारा किया जाता है।
— एएलए

2. किसी देश का राष्ट्रीय ग्रन्थालय सम्पूर्ण राष्ट्र के ग्रन्थ उत्पादन के संग्रहण एवम् अनुरक्षण के लिए भावी पीढ़ी के उपयोगार्थ उत्तरदायी होता है। — यूनेस्को
3. राष्ट्रीय ग्रन्थालय में ग्रन्थों तथा अन्य इसी प्रकार की सामग्री का अध्ययन के लिए संकलन होता है।

विशेषताएँ (Characteristics) :

इस प्रकार हम राष्ट्रीय ग्रन्थालय में निम्न विशेषताएँ देख सकते हैं -

1. राष्ट्रीय ग्रन्थालय किसी भी देश का एक केन्द्रीय ग्रन्थालय होता है।
2. जिसका संचालन देश की राष्ट्रीय सरकार राष्ट्रीय धन से करती है।
3. इसमें पूरे देश में प्रकाशित समस्त पाठ्य-सामग्री का संकलन किया जाता है।
4. यह राष्ट्रीय महत्व की संस्था होती है जिसका कोई भी व्यक्ति पाठक हो सकता है अर्थात् यह सम्पूर्ण राष्ट्र की सेवा करता है।
5. राष्ट्रीय ग्रन्थालय मात्र कापीराइट ग्रन्थालय होते हैं जिनमें ग्रन्थ मात्र सन्दर्भ के लिए संरक्षित किये जाते हैं।

राष्ट्रीय ग्रन्थालय के कार्य (Functions) :

चूँकि किसी भी देश का राष्ट्रीय ग्रन्थालय राष्ट्र का एक केन्द्रीय ग्रन्थालय होता है अतः वह राष्ट्रीय स्तर के कार्य उस देश के नागरिकों के हितार्थ करता है जो निम्न हैं —

1. राष्ट्रीय ग्रन्थालय राष्ट्र में प्रकाशित सभी ग्रन्थों का संग्रह करता है।
2. यह राष्ट्र के लिए कापीराइट एक्ट के अधीन प्राप्त ग्रन्थों के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक संग्रहण ग्रन्थालय के रूप में भी कार्य करता है।
3. राष्ट्र में स्थित अन्य ग्रन्थालयों में उपलब्ध दुर्लभ ग्रन्थों की एक प्रतिलिपि अपने यहाँ भी संग्रहीत करता है।
4. राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक को किसी भी भेदभाव के बिना पठन-पाठन की सुविधा प्रदान करता है।
5. राष्ट्र के अन्य सभी ग्रन्थालयों को सभी प्रकार की सहायता तथा निर्देशन प्रदान करता है।
6. विभिन्न विषयों की राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय ग्रन्थ सन्दर्भ सूची तैयार करता है।
7. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है।
8. अन्तर्ग्रन्थालय ऋण के माध्यम से अपने पाठको को विदेशों से भी ग्रन्थ प्रदान सुविधा उपलब्ध करता है।
9. संघ प्रसूची तैयार करना भी राष्ट्रीय ग्रन्थालय का कार्य है।
10. यह राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के साथ-साथ स्थानीय व्यक्तियों को भी अपनी ग्रन्थालय सेवा प्रदान करता है।
11. विदेशों के राष्ट्रीय ग्रन्थालयों से समन्वय एवम् सामन्जस्य बनाये रखता है।
12. ग्रन्थालय एवम् ग्रन्थालय सेवा में प्रयुक्त की जाने वाली नवीन विधियों एवम् तकनीकियों से देश के सभी अन्य ग्रन्थालयों को अवगत करता है।

माध्यम से ग्रन्थ प्राप्त करता है।

4. अनुसंधान हेतु यह ग्रन्थालय राष्ट्रीय केन्द्र के रूप में कार्य करता है।
5. यह विश्वव्यापी ग्रन्थ अर्जन कार्यक्रम PL-480 के अन्तर्गत विदेशी अध्ययन सामग्री प्राप्त करता है।
6. इसके द्वारा अमेरिका की राष्ट्रीय वांङ्मयसूची प्रकाशित की जाती है।
7. यह अपनी वर्गीकरण पद्धति लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस क्लासीफिकेशन को अद्यतन रखने हेतु भी कार्य करता है।
8. यह राष्ट्रीय स्तर पर प्रसूची वितरण सेवा Magnetic Tape पर उपलब्ध कराता है।
9. यह अन्तर्ग्रन्थालय ऋण सेवा भी प्रदान करता है।
10. यह राष्ट्रीय स्तर के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर फोटो डुप्लीकेशन सेवा भी प्रदान करता है।
11. यह दृष्टिहीन एवम् विकलांगों को भी एक विशेष सेवा राष्ट्रीय ग्रन्थ कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रदान करता है।
12. यह ग्रन्थालय में अपने अथवा आने में असमर्थ उपयोक्ताओं को कई प्रकार से सन्दर्भ सेवा प्रदान करता है।
13. यह कुछ प्रकाशन भी करता है –
    The National Union Catalogue (1950)
    National Union Catalogue of Manuscripts Collections.
14. विशिष्ट परियोजनाएँ –
    (a) Cataloguing in Publication (CIP).
    (b) Machine Readable Catalogue – (MARC).
    (c) National Bibliography (USA).
    (d) National List of Serials.
    (e) Monthly Index of Russian Accessions.
    (f) Editing of Dewey Decimal Classification.
    (g) National Referral Centre for Science and Technology.
    (h) Research in Library of Classification and Library Techniques.

प्रश्न-8 : सार्वजनिक ग्रन्थालय किसे कहते हैं ? उनके क्या-क्या विशेषतायें एवम् कार्य होते हैं ? समझाइये।

सार्वजनिक ग्रन्थालय जैसा कि इसके नाम से ही विदित हो रहा है सार्वजनिक अर्थात् सर्वजनों को सेवा प्रदान करने वाले ग्रन्थालय होते हैं। ये समाज के सभी वर्गो की बिना भेदभाव के हर समय स्वतंत्र रूप से सेवा में संलग्न रहते हैं। **विलियम एवर्ट** ने सार्वजनिक ग्रन्थालय की परिभाषा इस प्रकार दी है – **जनता द्वारा संस्थापित, जनता द्वारा समर्थित तथा जनता द्वारा उपयोग में लाई गई।** इसकी इस परिभाषा से विदित होता है कि इसका संचालन जनता के धन से चलता है तथा प्रान्तीय एवम् राष्ट्रीय सरकारें इनका संचालन करती हैं। सार्वजनिक ग्रन्थालय की धारणा प्रजातंत्र शासन प्रणाली की देन है। डा. रंगनाथन् ने सार्वजनिक ग्रन्थालय

की परिभाषा करते हुए कहा है कि – **सार्वजनिक ग्रन्थालय वे होते हैं जो समाज के द्वारा, समाज के लिए ही स्थापित किए जाते हैं तथा समाज के प्रत्येक नागरिक को जीवनपर्यन्त स्वयं शिक्षा प्राप्त करने का अनुकूल अवसर प्रदान करते हैं।**

सार्वजनिक ग्रन्थालयों की विशेषताएँ (Characteristics) :

1. ये जनता के धन से संचालित किए जाते हैं।
2. ये जाति, वर्ग एवम् लिंग के भेदभाव के बिना समाज के सभी जनों के लिए स्वतंत्र रूप से खुले रहते हैं।
3. ये अपने उपयोक्ताओं (पाठकों) को निशुल्क सेवा प्रदान करते हैं।
4. ये शैक्षिक संस्थाओं के सहायक केन्द्र के रूप में कार्य करते हैं।
5. ये स्वयं शिक्षा के तो महत्त्वपूर्ण केन्द्र होते हैं।

सार्वजनिक ग्रन्थालयों के कार्य (Functions) :

सार्वजनिक ग्रन्थालयों में उपयोगकर्त्ताओं हेतु निम्न कार्य सम्पन्न किए जाते हैं -

1. सूचना एवम् शिक्षा के उपकरणों का अभिगम (Access to tools of Information and Education) – सार्वजनिक ग्रन्थालयों का प्राथमिक कार्य स्थानीय व्यक्तियों की सूचना आवश्यकता की पूर्ति के लिए सूचना एवम् शिक्षा के साहित्य के साधनों (उपकरणों जैसे – पुस्तकें, पत्रिकाएँ आदि) का संकलन एवम् व्यवस्थापन करना है जिससे उपयोगकर्त्ता इन साधनों का आसानी से अभिगम प्राप्त कर सकें। ये ग्रन्थालय सूचीकरण, वर्गीकरण अनुक्रमणिकाकरण तथा प्रलेखन कार्य एवम् सेवाओं में नवीन प्रविधियों का अनुप्रयोग कर अपने संकलन की अध्ययन सामग्री को व्यवस्थित कर उपयोग हेतु पाठकों को प्रत्यक्ष, सरल एवम् स्वतंत्र अभिगम उपलब्ध कराते हैं।

2. औपचारिक स्वयं शिक्षा की उन्नति (Promotion of Formal Self Education)– सार्वजनिक ग्रन्थालय एक ऐसी संस्था होते हैं जिन पर प्रौढ़ व्यक्ति अपनी शिक्षा हेतु अधिक निर्भर रहते हैं। सार्वजनिक ग्रन्थालय ऐसे व्यक्तियों की बुद्धि, ज्ञान एवम् योग्यता में वृद्धि करने हेतु अध्ययन-सामग्री उपलब्ध कराते हैं। उदाहरण के रूप में हम देख सकते हैं कि हमारे किसान स्वयं शिक्षा के माध्यम से ही अपनी कृषि से सम्बन्धित कार्य आदि में निपुणता प्राप्त कर सकते हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि ग्रन्थालय विशेषकर सार्वजनिक ग्रन्थालय औपचारिक स्वयं शिक्षा के रूप में क्रियात्मक भूमिका का निर्वाह करते हैं।

3. सांस्कृतिक एवम् सामाजिक क्रियाकलापों में प्रगति (Progress in Cultural and Social Activities) – कोई भी समाज व्यक्तियों से मिलकर बनता है जिसमें अनेक भाषा, धर्म, व्यवसाय एवम् कार्य से सम्बन्धित व्यक्ति सम्मिलित होते हैं और अनेक प्रकार के सामाजिक एवम् सांस्कृतिक समूह दिखाई पड़ते हैं। सार्वजनिक ग्रन्थालय इन सभी समूहों को उनके क्रियाकलापों के संचालन हेतु उपयोगी पाठ्य-सामग्री उपलब्ध कराते हैं तथा साथ ही अपने स्तर से भी ये फिल्म या नाटक आदि का प्रदर्शन भी कराते हैं तथा सांस्कृतिक एवम् सामाजिक समूहों हेतु वाचनालय आदि की भी व्यवस्था भी करते हैं। इस प्रकार सार्वजनिक ग्रन्थालय सांस्कृतिक एवम् सामाजिक क्रियाकलापों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

4. स्थानीय सामग्री का संरक्षण (Preservation of the Material) — सार्वजनिक ग्रन्थालयों का एक आवश्यक कार्य अपने क्षेत्र में स्थित सांस्कृतिक सामग्री का अभिज्ञान एवम् संकलन करना होता है। इस प्रकार की सामग्री में कला, चित्रकला, साहित्यिक कृतियाँ अथवा संगीत इत्यादि के यन्त्र आदि हो सकते हैं। ये सामग्रियाँ स्थानीय व्यक्तियों की अतीत की सामग्री होती हैं जो व्यक्तियों के स्वाभिमान एवम् उपलब्धियों की प्रतीक होती हैं। सार्वजनिक ग्रन्थालय इनकी खोज करता है और अपने यहाँ इनका संग्रहण करता है। अमेरिका एवम् इंग्लैण्ड आदि देशों में इन वस्तुओं एवम् कार्यों हेतु सार्वजनिक ग्रन्थालयों में अलग विभाग इसीलिए स्थापित किए जाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सार्वजनिक ग्रन्थालयों में संग्रहीत पाठ्य-सामग्री का उपयोग करके कोई भी नागरिक अपनी व्यक्तिगत प्रगति के साथ-साथ अपने समाज, प्रदेश एवम् देश की प्रगति में भी सहायक होता है।

प्रश्न-9 : शैक्षणिक ग्रन्थालय क्या होते हैं ? इनके उद्देश्य बताते हुए इनकी भूमिका भी बताइये ?

शैक्षणिक ग्रन्थालय जैसा कि इसके नाम से ही विदित होता है शैक्षणिक अर्थात शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाओं के ग्रन्थालय। इस प्रकार विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालयों तथा अन्य शैक्षणिक संस्थाओं के ग्रन्थालय शैक्षणिक ग्रन्थालय कहलाते हैं जो इनमें अध्ययन करने वाले छात्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तथा शिक्षा के क्षेत्र में अपनी मुख्य एवम् महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यद्यपि शैक्षणिक ग्रन्थालय आकार-प्रकार में सार्वजनिक ग्रन्थालयों से भिन्न होते हैं लेकिन फिर भी दोनों की कुछ विशेषताएँ एक सी होती हैं। इन ग्रन्थालयों की सेवाएँ साधारणतया शिक्षा संस्थाओं के छात्रों, अध्यापकों तथा शोध-छात्रों हेतु ही सुलभ होती हैं फिर भी वे व्यक्ति भी इन ग्रन्थालयों की सेवा का लाभ उठा सकते हैं जो अपनी सूचनाओं का हल अन्यत्र कहीं नहीं प्राप्त कर सके हैं।

शैक्षणिक ग्रन्थालयों के उद्देश्य (Aims and Objectives) :

शैक्षणिक ग्रन्थालयों का उद्देश्य अपनी पैतृक संस्था के पठन-पाठन एवम् अनुसंधान तथा अन्य शैक्षिक कार्यों को प्रोत्साहन प्रदान करने के साथ-साथ इनके छात्रों, अध्यापकों एवम् सम्बन्धित व्यक्तियों जैसे शोध छात्रों की उनके शैक्षिक पाठ्यक्रम में शिक्षा से सम्बधित आने वाली समस्याओं का समाधान करना होता है। आज शैक्षणिक ग्रन्थालय जो सर्वप्रथम अस्तित्व में आये थे अपनी विशेषताओं, कार्यो, उद्देश्यों एवम् प्रदत्त सेवाओं के कारण अधिक विकसित हो चुके हैं।

शैक्षणिक ग्रन्थालयों की विशेषताएँ (Characteristics) :

1. शैक्षणिक ग्रन्थालय अपनी पैतृक संस्था के एक उपतंत्र होते हैं।
2. इनके उपयोक्ता उसकी पैतृक संस्था के ही व्यक्ति होते हैं।
3. इनकी प्रकृति इनके आकार-प्रकार एवम् क्षेत्र के आधार पर निर्भर करती है।
4. ये ग्रन्थालय विशिष्ट ग्रन्थालयों की तुलना में सामान्य तथा सार्वजनिक ग्रन्थालयों की

तुलना में विशिष्ट होते हैं।

5. ये ग्रन्थालय दो तरह के पर्यावरण में कार्य करते हैं पहला उनका स्वयं का वातावरण तथा दूसरा उनकी पैतृक संस्था का वातावरण।

निम्न चित्र में विविध प्रकार के संस्थानों से संलग्न शैक्षणिक ग्रन्थालयों के प्रकार प्रदर्शित किये जा रहे हैं —

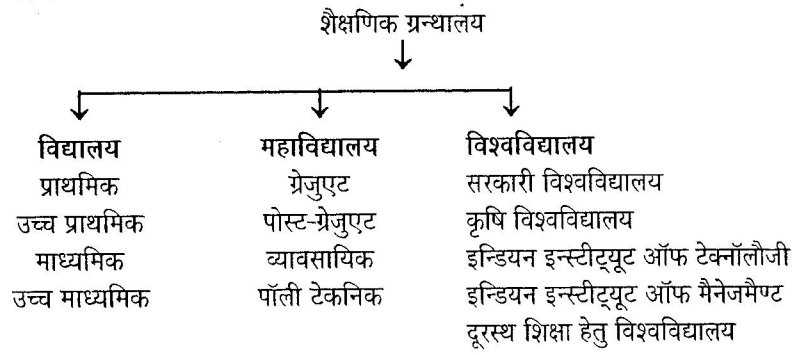

शैक्षणिक ग्रन्थालयों की भूमिका (Role of Academic Libraries) :

शिक्षा एवम् ग्रन्थालय दो जुड़वा बहिनें हैं इसलिए एक को दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। ग्रन्थालय आधुनिक शैक्षणिक सरंचना की नींव हैं इसलिए कोई भी शैक्षिक संस्था ग्रन्थालय के बिना अधूरी है क्योंकि एक ओर उक्त शिक्षण संस्था अपने सभी शैक्षिक कार्यों को पूरा करती है तो दूसरी ओर उनके ग्रन्थालय अपनी ज्ञान-सामग्री को सही समय पर सही व्यक्ति को सही रूप में प्रदान कर उसके शैक्षिक कार्यक्रमों को बल एवम् प्रोत्साहन प्रदान करते हैं अतः ग्रन्थालय किसी भी शैक्षिक शिक्षा संस्था का महत्वपूर्ण अंग है उसे उसका हृदय निरूपित किया जा सकता है। शैक्षणिक ग्रन्थालय विविध प्रकार के ग्रन्थालयों का प्रारूप होता है।

सुविधा की दृष्टि से शैक्षणिक ग्रन्थालयों का अध्ययन निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत किया जा सकता है।

(अ) विद्यालयों के ग्रन्थालय — विद्यालयों के ग्रन्थालय एक दूसरे के पूरक एवम् समवर्ती हैं। विद्यालय ग्रन्थालय के वही उद्देश्य हैं जो विद्यालयों के होते हैं। शिक्षा की महत्वपूर्ण एवम् प्रारम्भिक सीढ़ी विद्यालय ही होते हैं इसलिए इस दृष्टि से विद्यालय के ग्रन्थालयों का महत्व अत्यधिक है। विद्यालय सभी शैक्षिक क्रियाओं का मेरुदण्ड होता है इसलिए शैक्षणिक ग्रन्थालयों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान विद्यालयों के ग्रन्थालयों का ही होता है ये शैक्षिक संरचना के आधार स्तम्भ हैं।

(ब) उच्च शैक्षिक संस्थाओं के ग्रन्थालय — उच्च शिक्षा के ग्रन्थालयों में महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालयों के ग्रन्थालय आते हैं। इन ग्रन्थालयों में संग्रहीत अगाध ज्ञान से मस्तिष्क का उचित विकास होता है। उच्च शिक्षा व्यवस्था में विद्यार्थियों को ज्ञान-प्राप्ति के लिए अधिक से अधिक आत्मनिर्भर होना पड़ता है अर्थात् जितना ज्ञान वे प्राप्त करते हैं उसका अधिकांश

ग्रन्थालय भी इसी श्रेणी में आते हैं। कहने का आशय यह है कि विशिष्ट ग्रन्थालय समाज के एक विशिष्ट वर्ग की ही सेवा करने के लिए ही स्थापित किये जाते हैं।

विशिष्ट ग्रन्थालयों का प्रकार (Examples of Special Libraries)

विशिष्ट ग्रन्थालयों का उनके उपयोक्ता क्रियाकलापों, विशिष्ट विषय तथा प्रलेखों के प्रकार के अनुसार वर्गीकृत एवम् प्रस्तुत किया गया है।

अन्तर का दृष्टिकोण	विशिष्ट ग्रन्थालय
उपयोक्ताओं की विशेषता के अनुसार	अन्धों के लिए ग्रन्थालय, बालकों के ग्रन्थालय, अस्पतालों के मरीजों हेतु ग्रन्थालय।
क्रियाकलापों के प्रकार के अनुसार	पोषाहार जैसे राष्ट्रीय पोषाहार संस्थान ग्रन्थालय, हैदराबाद।
विषयों की विशेषता के आधार पर	खाद्यविज्ञान तथा प्रौद्योगिकी (केन्द्रीय खाद्य एवम् प्रौद्योगिकी संस्थान, मैसूर)।
सामग्री की विशिष्टता के आधार पर	फिल्म ग्रन्थालय, खुदाबक्श ग्रन्थालय (पटना), सरस्वती महल पाण्डुलिपि ग्रन्थालय (तंजोर) ।

विशिष्ट ग्रन्थालयों की विशेषताएँ (Characteristics of Special Libraries)

1. ये ग्रन्थालय अन्य परम्परागत ग्रन्थालयों से विशेष प्रकार से भिन्न होते हैं।
2. ये अपनी पैतृक संस्था के उपतंत्र होते हैं।
3. ये सूचना तथा सामग्री का प्रकीर्णन करते हैं।
4. ये सन्दर्भ प्रश्नों का उत्तर प्रदान करते हैं।
5. ये अपनी पैतृक संस्था के स्टाफ को ही सेवा प्रदान करते हैं।
6. ये उन सूचना उपयोक्ताओं को निर्देश देते हैं जिन्हे शोध-सम्बन्धी सूचना के विस्तृत विवरण की आवश्यकता होती है।
7. ये अपने उपयोक्ताओं को सूचना प्रदान करने हेतु उनके विषय अभिरुचि के क्षेत्र में हुए नवीन विकासों से सम्बन्धित पत्रिकाओं की छटनी करते हैं।
8. ये विशिष्ट विषय क्षेत्रों में जटिल साहित्य की खोज करके प्रदान करते हैं।
9. ये पूर्वव्यापी वांङ्मयसूची भी संकलित करते हैं।
10. ये सामयिक अभिज्ञता बुलेटिन (CAS Bulletin) भी प्रकाशित करते हैं।
11. सामूहिक एवम् व्यक्तिगत प्रोफाइलों के आधार पर चयनित सूचना प्रसार सेवा (SDI) प्रदान करते हैं।
12. उच्च स्तर की री-पैकेजिंग सेवाएँ प्रदान करते हैं।

विशिष्ट ग्रन्थालयों के कार्य (Functions of Special Libraries) :

विशिष्ट ग्रन्थालयों का अस्तित्व विशेष प्रकार के उपयोगकर्त्ताओं को सूचना सेवा प्रदान करने के लिए ही होता है। इनमें निम्न कार्य सम्पन्न किए जाते हैं।

1. विशिष्ट प्रकार के संकलन – विशिष्ट ग्रन्थालय के संग्रह का एक विशेष लक्षण यह होता है कि यह कभी भी स्थायी न होकर सदैव परिवर्तनशील रहता है क्योंकि इन ग्रन्थालयों की पैतृक संस्थाओं में नवीन योजनाएँ एवम् परियोजनाएँ विकसित एवम् सम्पन्न होती रहती

हैं जिसके कारण इन बातों का इनके ग्रन्थालयों पर भी प्रभाव पड़ता है जिससे इन ग्रन्थालयों के संग्रह का क्षेत्र तथा प्रकृत्ति में भी परिवर्तन होता है। अतः इन ग्रन्थालयों में इन परिवर्तित परिस्थितियों का सामना करने हेतु ही सामग्री का संकलन किया जाता है।

2. प्रक्रियाकरण एवम् संगठन – विशिष्ट ग्रन्थालय अपने संग्रह को संगठित करने में विविध प्रकार की विधियों का उपयोग करते हैं। भौतिक संकलन इसके उपयोग के आधार पर निश्चित किया जाता है इसलिए ग्रन्थालय की प्रसूची, अनुक्रमणिका, सारांश आदि पैतृक संस्था के क्रियाकलापों के उपयोग एवम् क्षेत्र के आधार पर तैयार किए जाते हैं।

3. सन्दर्भ सेवा प्रदान करना – किसी विशिष्ट ग्रन्थालय में साधारण प्रकार के सन्दर्भ प्रश्नों के उत्तर से लेकर अनुसंधान के लिए प्रदत्त सूचना सेवाओं तक इसका सेवा क्षेत्र होता है। अनुसंधान हेतु साहित्य की खोज करने में उपयोगकर्त्ताओं की सहायता की जाती है।

4. सामयिक अभिज्ञता सेवा प्रदान करना – विशिष्ट ग्रन्थालयों ने अपनी सेवाओं के क्षेत्र में अत्यधिक विस्तार कर लिया है जिससे वे अपने उपयोगकर्त्ताओं को इस क्षेत्र में नवीन एवम् सामयिक विकासों से परिचित करा सकें। पत्रिकाओं के नवीन एवम् सामयिक अंकों में से उपयोगी सूचना की छँटनी करना विशिष्ट ग्रन्थालयों का एक सामान्य कार्य है। इसके अतिरिक्त सामयिक बुलेटिन, सामयिक पत्रिकाओं की अनुक्रमणिका तथा शीर्षक खोज आदि सामयिक अभिज्ञता सेवा विशिष्ट ग्रन्थालयों द्वारा उपलब्ध कराई जाती हैं।

5. सूचना प्रकीर्णन सेवा – सारांशीकरण, अनुक्रमणिकरण तथा डाईजेस्ट तैयार करना विशिष्ट ग्रन्थालयों में सर्वोपरि महत्व की सेवाएँ हैं। इन ग्रन्थालयों में विशिष्ट प्रोजेक्ट तथा पूर्वव्यापी संचिका प्रोजेक्ट की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए निर्मित की जाती हैं।

6. मांग से पूर्व सेवाएँ – उपरोक्त सेवाओं के साथ-साथ विशिष्ट ग्रन्थालयों द्वारा टिप्पणयुक्त सूचिका, सारांश बुलेटिन, समाचार संक्षेप, डाइजेस्ट आदि भी उपलब्ध कराई जाती हैं।

प्रश्न-12 : ग्रन्थालय विज्ञान के 5 मूल-सूत्रों की संक्षेप में विवेचना कीजिए।

डॉ. **रंगनाथन्** ने अपना तीव्र अन्तर्दृष्टि, गहन अध्ययन एवम् चिन्तनशील विश्लेषणात्मक मस्तिष्क के फलस्वरूप ग्रन्थालय विज्ञान के क्षेत्र में 5 सूत्र प्रतिपादित किए जो ग्रन्थालय विज्ञान के मूल आधार माने जाते हैं। सर्वप्रथम ये सूत्र 1928 में प्रकाशित हुए जिन्होंने ग्रन्थालय विज्ञान जगत को एक नई दिशा प्रदान की थी। विश्व के तत्कालीन ग्रन्थालय विशेषज्ञों ने भी इन सूत्रों के दार्शनिक महत्व को स्वीकार किया था। ये सूत्र निम्न प्रकार हैं -

1. ग्रन्थ उपयोग के लिए है (Books are for use)
2. प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक मिले (Every reader and his book)
3. प्रत्येक पुस्तक को उसका पाठक मिले (Every book and its reader)
4. पाठक के समय की बचत हो (Save the time of the reader)
5. ग्रन्थालय वर्धनशील संस्था है (Library is a growing organism)

इन सूत्रों का प्रकाशन होते ही इनकी सार्थकता सिद्ध करने हेतु अनेक विद्वानों ने अनेक

ग्रन्थों की रचना की तथा अनेक सम्मेलन एवम् सेमीनार इस सम्बन्ध में उस समय आयोजित किए गए। इन सूत्रों द्वारा **डॉ. रंगनाथन्** ने प्रत्येक व्यक्ति को ग्रन्थालय सेवा उपलब्ध कराना अनिवार्य बना दिया। इन्हीं 5 सूत्रों के आधार पर ग्रन्थालयों का संगठन, प्रशासन, व्यवस्थापन एवम् तकनीकि प्रक्रियाएँ किस प्रकार होनी चाहिए निश्चित किया जाता है जिससे इन सूत्रों का पालन होता रहे।

डॉ. रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित इन सूत्रों को अँग्रेजी में **फाइव लॉज** (Five Laws) कहा जाता है। **लॉ** का अर्थ कानून से होता है तथा प्रत्येक कानून (Law) का एक अधिकार क्षेत्र होता है जिसमें वह कानून लागू होता है तथा उसका पालन करना भी आवश्यक होता है उसी प्रकार **डॉ. रंगनाथन्** के इन सूत्रों का अधिकार क्षेत्र ग्रन्थालय विज्ञान का सम्पूर्ण क्षेत्र है। इस प्रकार ये सूत्र ग्रन्थालयों तथा उनसे सम्बन्धित प्रत्येक क्रियाकलापों, सेवाओं तथा उनकी शाखा-प्रशाखाओं आदि सभी पर लागू होते हैं। दूसरे शब्दों में हम इस बात को इस प्रकार कह सकते हैं कि ग्रन्थालयों में ग्रन्थों के चयन, परिग्रहण, वर्गीकरण, प्रसूचीकरण, आदान-प्रदान एवम् अन्य आधुनिकतम सभी कार्य एवम् सेवाएँ इन सूत्रों द्वारा ही नियन्त्रित होते हैं। अगर ग्रन्थालय विज्ञान के विषय को एक पूर्ण साम्राज्य माना जाय तो इन सूत्रों की स्थिति राजा-महाराजाओं के ऊपर सम्राट जैसी हो जाती है। इसीलिए ये सूत्र समस्त ग्रन्थालय विज्ञान के **मूल आधार** हैं।

प्रथम सूत्र : ग्रन्थ उपयोग के लिए हैं।

डॉ. रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित यह सूत्र यह कहता है कि ग्रन्थालयों में ग्रन्थ उपयोग के लिए होते हैं न कि मात्र संरक्षण के लिए। अतः ग्रन्थालय के कर्मचारियों की यह भावना होनी चाहिए कि ग्रन्थों का अधिक से अधिक उपयोग हो सके। इसके लिए डॉ. रंगनाथन् ने यह कहा कि यदि ग्रन्थालयों में निम्न तथ्यों की ओर ध्यान रखा जाये तो ग्रन्थों का अधिक से अधिक उपयोग हो सकेगा।

1. ग्रन्थालय की उचित स्थान पर स्थिति।
2. ग्रन्थालय के खुलने एवम् बन्द होने का समय।
3. सुविधाजनक एवम् उपयुक्त फर्नीचर।
4. प्रशिक्षित एवम् योग्य कर्मचारीगण।

द्वितीय सूत्र : प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक मिले।

डॉ. रंगनाथन् का यह द्वितीय सूत्र यह प्रतिपादित करता है कि ग्रन्थालय में आने वाले प्रत्येक पाठक को उसकी वान्छित पुस्तक मिलनी चाहिए। अतः इस सूत्र से यह बात स्पष्ट होती है कि **पुस्तकें सभी के लिए हैं** न कि मात्र कुछ विशेष व्यक्तियों के लिए। यदि निम्नांकित बातों पर ध्यान दिया जाय तो प्रत्येक पाठक को उसकी वान्छित पुस्तक मिल सकती है।

1. सभी प्रकार के पाठकों हेतु पुस्तकें होनी चाहिए।
2. पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं हेतु भी पुस्तकें होनी चाहिए।
3. शहरी व्यक्तियों के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों के व्यक्तियों हेतु भी पुस्तकें होनी चाहिए।

4. प्रौढ़ व्यक्तियों के साथ-साथ बालकों हेतु भी पुस्तकें होनी चाहिए।

तृतीय सूत्र : प्रत्येक पुस्तक और उसका पाठक ।

डॉ. रंगनाथन् का तृतीय सूत्र प्रत्येक पुस्तक के लिए पाठक खोजने पर बल देता है। निम्न तथ्यों पर यदि ग्रन्थालयों में ध्यान दिया जाय तो इस सूत्र का पालन होता है।

1. पुस्तकों का चयन पाठकों की अभिरुचि के अनुसार होना चाहिए।
2. मुख्य प्रवेश प्रणाली होनी चाहिए।
3. ग्रन्थों का व्यवस्थापन किसी वैज्ञानिक विधि के अनुसार होना चाहिए।
4. ग्रन्थों की खोज हेतु प्रसूची की व्यवस्था होनी चाहिए।
5. सन्दर्भ सेवा का प्रावधान होना चाहिए।
6. प्रचार एवम् प्रसार कार्य भी समय-समय पर होने चाहिए।

चतुर्थ सूत्र : पाठकों के समय की बचत हो।

पाठकों का समय अमूल्य होता है इसलिए इस बात को ध्यान में रखते हुए डॉ. रंगनाथन ने इस सूत्र का प्रतिपादन किया तथा वे इस सूत्र के पालन हेतु निम्न प्रयत्न करने पर बल देते हैं।

1. मुख्य प्रवेश प्रणाली ।
2. ग्रन्थों का व्यवस्थापन किसी वैज्ञानिक विधि के अनुसार होना चाहिए।
3. ग्रन्थों की खोज हेतु प्रसूची की व्यवस्था होनी चाहिए।
4. सन्दर्भ सेवा का प्रावधान होना चाहिए।
5. संघ प्रसूची का भी प्रावधान होना चाहिए।
6. उपयुक्त आदान-प्रदान तकनीकि का उपयोग।
7. ग्रन्थालय का कार्य समय उपयुक्त होना चाहिए।
8. ग्रन्थालय का स्थान उचित स्थान पर होना चाहिए।

पंचम सूत्र : ग्रन्थालय वर्धनशील संस्था है।

डॉ. रंगनाथन् का यह पंचम सूत्र उन सिद्धान्तों की विवेचना करता है जिनसे उनके निरन्तर समायोजन में सहायता प्राप्त होती है। यह सूत्र उन तत्त्वों पर प्रकाश डालता है जो ग्रन्थालय के सुनियोजन, व्यवस्था तथा संगठन से सम्बंधित होते हैं। डॉ. रंगनाथन् ने यह विचार दिया कि ग्रन्थालय एक वर्धनशील संस्था है जो एक जीवित प्राणी की तरह दो तरह से विकसित होती है ग्रन्थालय के आकार, कार्यक्रमों आदि सभी में वृद्धि होती है।

1. पाठ्य-सामग्री की वृद्धि।
2. ग्रन्थागार में वृद्धि।
3. ग्रन्थालय के आकार में वृद्धि।
4. प्रसूची में वृद्धि
5. कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि।

प्रश्न-13 : रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित ग्रन्थालय विज्ञान के प्रथम सूत्र की व्याख्या कीजिए ?

डॉ. रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित ग्रन्थालय विज्ञान का प्रथम सूत्र **ग्रन्थ उपयोग के लिए**

है। इस नियम का आशय यह है कि ग्रन्थालय में ग्रन्थ मात्र सरंक्षण की वस्तु न होकर उपयोक्ताओं के उपयोग हेतु ही संकलित किये जाते हैं। इस सूत्र में ग्रन्थों को महत्ता प्रदान की गई है इसलिए ग्रन्थालय के कर्मचारियों की यह भावना होनी चाहिए कि संकलित ग्रन्थों का अधिक से अधिक उपयोग हो जिसके लिए कर्मचारी, ग्रन्थ एवम् उनके उपयोक्ताओं के मध्य साधन बनकर कार्य करे। डॉ. रंगनाथन् ने कहा है कि यदि ग्रन्थालयों में निम्न तथ्यों की ओर ध्यान रखा जाय तो ग्रन्थों का अधिक से अधिक उपयोग हो सकेगा और इस सूत्र का परिपालन होता रहेगा।

1. ग्रन्थालय का स्थान (Location of the Library) — ग्रन्थों के उपयोग में ग्रन्थालय का सही स्थान पर होना अत्यन्त सहायक सिद्ध होता है। कहने का आशय यह है कि ग्रन्थालयों की स्थापना ऐसे स्थान पर की जानी चाहिए जो उनके उपयोक्ताओं की पहुँच से बाहर न हो। अगर कोई सार्वजनिक ग्रन्थालय है तो उसे ऐसे स्थान पर होना चाहिए जिससे उस क्षेत्र के नागरिक उसमें आसानी से आ जा सकें। और यदि कोई शैक्षिक ग्रन्थालय है तो उसे अपनी पैतृक संस्था के प्रांगण में ही अवस्थित होना चाहिए। किसी भी निर्जन एवम् दूरस्थ स्थान पर ग्रन्थालयों की स्थापना नहीं की जानी चाहिए क्योंकि दूर होने के कारण व्यक्ति वहाँ पहुँचने में कठिनाई अनुभव करेंगे जिससे ग्रन्थों का उपयोग अधिक होने की अपेक्षा कम ही होगा।

2. ग्रन्थालय के खुला रहने का समय (Library Timings) — ग्रन्थालय प्रतिदिन खुला रहने की अवधि ग्रन्थों के उपयोग में वृद्धि करती है। जितने अधिक समय तक ग्रन्थालय खुला रहेगा उतना ही ग्रन्थों का उपयोग अधिक होगा क्योंकि उपयोक्ता अपनी सुविधानुसार समय में ग्रन्थालय में आकर ग्रन्थालय का उपयोग कर सकेंगे। ग्रन्थालय के खुलने के कार्यकाल की अल्प अवधि उपयोक्ताओं को ग्रन्थालय का उपयोग करने से वंचित कर देती है। यदि कोई सार्वजनिक ग्रन्थालय है तो उसे सुबह एवम् शाम के समय खोला जाना चाहिए जिससे साधारणजन इसका समुचित लाभ उठा सकें। यदि शैक्षिक ग्रन्थालय है तो उसे अपनी पैतृक संस्था के खुलने वाली अवधि के समान ही खुला रहना चाहिए। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु उपयोक्ताओं की समयावधि की सुविधा प्रदान करने हेतु अधिक से अधिक समय तक ग्रन्थालय खोले जाने को वरीयता दी जाती है।

3. ग्रन्थालय फर्नीचर (Library Furniture) — ग्रन्थों के अधिकाधिक उपयोग में ग्रन्थालयों में उपयोग किया जाने वाला फर्नीचर, अन्य उपकरण तथा साज-सज्जा आदि भी अत्यन्त सहायक होते हैं। पहले ग्रन्थों को रखने के लिए निधानियाँ लकड़ी की बनी आलमारियाँ होती थीं तथा उनमें भी ग्रन्थ अधिक से अधिक समाविष्ट करने की चेष्टा की जाती थी क्योंकि उस समय ग्रन्थों को सुरक्षित रखने मात्र का उद्देश्य होता था इसका परिणाम यह होता था कि ग्रन्थों को आसानी से नहीं खोजा जा सकता था। इसी प्रकार पाठकों को बैठने आदि की कोई उचित व्यवस्था भी नहीं हुआ करती थी। कुर्सियाँ भी लकड़ी की बनी होती थीं जिन पर अधिक देर तक बैठे रहना सम्भव नहीं हो पाता था। प्रकाश, हवा तथा पानी की कोई व्यवस्था नहीं हुआ करती थी। लेकिन आज इन सभी बातों पर अधिक ध्यान

दिया जा रहा है। निधानियों की ऊँचाई 6¼ फुट से अधिक ऊँची नही होती है जिससे पाठकों को उनमें से ग्रन्थ निकालने में असुविधा न हो। इसके अतिरिक्त पाठकों को बैठने हेतु आरामदायक फर्नीचर की व्यवस्था की जाती है। समुचित प्रकाश, हवा तथा पानी की भी व्यवस्था की जाती है। अध्ययन कक्ष में सुहावने एवम् प्रेरणादायक महान व्यक्तियों के सुन्दर चित्र दीवारों पर लगाये जाते हैं जिससे पाठकों को देर तक पढ़ते रहने में कोई थकावट न हो तथा हृदय को शीतलता तथा चित्रों से प्रेरणा मिल सके।

4. ग्रंथालय कर्मचारीगण (Library Staff) — ग्रन्थालयों में पाठकों का ग्रन्थों से सम्पर्क कराने का कार्य ग्रन्थालय कर्मचारियों द्वारा किया जाता है इसलिए ग्रन्थों के उपयोग में वृद्धि करने में कर्मचारियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ग्रन्थालय में कितने ही श्रेष्ठ ग्रन्थ हों, ग्रन्थालय के खुले रहने की अवधि भी पर्याप्त एवम् सुविधाजनक हो, ग्रंथालय पाठकों की पहुँच में भी हो तथा सुन्दर एवम् सुसज्जित आरामदायक फर्नीचर एवम् उपकरण हों लेकिन कर्मठ, योग्य, प्रशिक्षित एवम् सेवाभावी कर्मचारियों के अभाव में सब कुछ कोई अर्थ नहीं रखता है इसलिए ग्रन्थालयों को उपयोगी एवम् लोकप्रिय बनाने में ग्रन्थालय के कर्मचारियों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि ग्रन्थालयों में ग्रन्थों का उपयोग बढ़ाने हेतु ग्रन्थालय के कर्मचारी योग्य, व्यावसायिक प्रशिक्षण युक्त, दायित्व निर्वाहकर्ता, सेवाभावी, सहायता करने वाले आदिगुणों से युक्त होने चाहिए।

प्रश्न-14 : रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित ग्रन्थालय विज्ञान का द्वितीय सूत्र "प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक मिले" को भली भाँति समझाइये।

डा. रंगनाथन् का प्रथम सूत्र ग्रन्थों के उपयोग पर बल देता है वहीं यह दूसरा सूत्र **प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक मिले** ग्रन्थालय में पाठकों की भावनाओं पर बल देता है। प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक मिले इस सूत्र से यह बात स्पष्ट होती है कि ग्रन्थालयों में पुस्तकें सभी प्रकार के पाठकों के उपयोग हेतु संकलित की जानी चाहिए न कि समाज के कुछ गिने-चुने विशेष व्यक्तियों के लिए। इसलिए ग्रन्थालय के प्रत्येक पाठक को उसकी अभिरुचि के अनुसार पुस्तक मिले इसके लिए रंगनाथन् ने राज्य, ग्रन्थालय प्राधिकरण, कर्मचारी तथा स्वयं पाठकों के कुछ कर्त्तव्य निर्धारित किए हैं जो निम्न प्रकार हैं —

1. राज्य का कर्त्तव्य (Obligation of State) — राज्य के समस्त नागरिकों के लिए बिना किसी भेद-भाव के शिक्षा की व्यवस्था करना राज्य का प्राथमिक कर्तव्य है। ग्रन्थालय स्वयं शिक्षा के माध्यम के रूप में सरकार को अपने कर्त्तव्य पालन में सहयोग देता है अतः यह आवश्यक है कि राज्य सुव्यवस्थित ग्रंथालयों की स्थापना करे तथा पूर्व से ही संस्थापित ग्रन्थालयों को सहयोग एवम् संरक्षण प्रदान करे। इसके लिए यह आवश्यक है कि राज्य सरकार अपने क्षेत्र में ग्रन्थालय अधिनियम पारित एवम् लागू करे जिसके माध्यम से राज्य में ग्रन्थालयों की समुचित व्यवस्था हो सके। भारत के अब तक 14 राज्यों में ग्रन्थालय अधिनियम पारित एवम् लागू हो चुका है। राज्य सरकार को ग्रन्थालय सेवाओं को प्रभावी बनाने हेतु ग्रन्थालय कर के अतिरिक्त अन्य अनुदानों का भी प्रावधान करना चाहिए। ग्रन्थालय अधिनियम के माध्यम से राज्य में सुगठित ग्रन्थालय व्यवस्था स्थापित की जा सकती है।

2. ग्रन्थालय प्राधिकरण का कर्त्तव्य (Obligation of Library Authority) – ग्रन्थालय प्राधिकरण के कर्त्तव्य ग्रन्थालय सेवा के निम्न दो क्षेत्रों से सम्बंधित माने जाते हैं –

(अ) ग्रन्थों का चयन (Selection of books) – सभी प्रकाशित होने वाली पुस्तकों को वित्त के अभाव में क्रय करना प्रत्येक ग्रन्थालय के लिए सम्भव नहीं होता है इसलिए पुस्तकों का चयन करते समय उन्हीं पुस्तकों का चयन करना चाहिए जो अधिक से अधिक उपयोक्ताओं द्वारा उपयोग की जा सकें और यह कार्य तभी सम्भव हो सकता है जब चयनकर्त्ताओं को उपयोक्ताओं की अभिरुचियों का ज्ञान हो। अतः ग्रन्थ चयन उपयोक्ताओं की अध्ययन अभिरुचियों को ध्यान में रखते हुए उपलब्ध वित्त व्यवस्था के अनुसार किया जाना चाहिए।

(ब) कर्मचारियों का चयन (Selection of staff) – किसी भी ग्रन्थालय की सफलता उसके कर्मचारियों की योग्यता, कर्मठता, प्रशिक्षण एवम् सेवाभाव पर निर्भर करती है। ऐसे कर्मचारी ही द्वितीय सूत्र की सफलता सुनिश्चित कर सकते हैं। इस प्रकार ऐसे गुणों से युक्त कर्मचारियों का ही चयन किया जाना चाहिए।

3. ग्रन्थालय कर्मचारियों का कर्त्तव्य (Obligation of the Staff) – ग्रन्थालय प्राधिकरण द्वारा पर्याप्त संख्या में योग्यतम कर्मचारियों का चयन कर देने मात्र से ही द्वितीय सूत्र की सफलता सिद्ध नहीं होती है बल्कि प्रत्येक कर्मचारी का यह कर्त्तव्य एवम भावना होनी चाहिए कि ग्रन्थालय में आने वाले प्रत्येक पाठक को उसकी वान्छित पुस्तक अवश्य मिल सके, वह निराश होकर न जाये लेकिन यह तभी सम्भव है जब कर्मचारी पाठकों से व्यक्तिगत सम्बन्ध बनावें और उनकी अध्ययन अभिरुचियों का पता लगावें। प्रत्येक पाठक को आवश्यकता पड़ने पर सन्दर्भ सेवा के माध्यम से उसकी सहायता भी करें।

4. पाठकों के कर्त्तव्य (Obligation of the Users) – इस द्वितीय सूत्र के परिपालन हेतु डा. रंगनाथन् ने राज्य, ग्रन्थालय प्राधिकरण, कर्मचारियों के साथ-साथ ग्रन्थालयों का उपयोग करने वाले उपयोक्ताओं के ऊपर भी कुछ उत्तरदायित्व सुनिश्चित किए हैं। उपयोक्ताओं को सदैव यह ध्यान रखना चाहिए कि ग्रन्थालय कोई व्यक्तिगत संस्था न होकर सार्वजनिक संस्था है और समाज के प्रत्येक व्यक्ति को ग्रन्थालय में उपलब्ध किसी भी ज्ञान-सामग्री का उपयोग करने का समान अधिकार है इसलिए सभी उपयोक्ताओं को ग्रन्थालयों के नियमों-परिनियमों का पालन करना चाहिए। ग्रन्थालय की सुरक्षा अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति की तरह ही करनी चाहिए। समय पर ग्रन्थों को वापस करना चाहिए। कुछ उपयोक्ता ऐसे होते हैं जो ग्रन्थालयों से ग्रन्थ चुराकर, उनके पृष्ठादि फाड़कर नुकसान पहुँचाने का प्रयास करते हैं। ये सभी कार्य उपयोक्ताओं को कदापि नहीं करने चाहिए। इससे द्वितीय सूत्र की अवहेलना होती है। इसके लिए द्वितीय सूत्र उपयोक्ताओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने पर बल देता है।

प्रश्न-15 : डा. रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित ग्रन्थालय विज्ञान के चतुर्थ सूत्र पाठक के समय की बचत करने के लिए ग्रन्थालयों में क्या उपाय किये जाने चाहिए ? विवेचना कीजिए।

डा. रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित ग्रन्थालय विज्ञान के चतुर्थ सूत्र **पाठकों के समय की बचत करो** की धारणा मूलतः ग्रन्थालय के उपयोक्ताओं के समय की बचत से सम्बन्धित है। आजकल के समय में पाठकों के समय बचाने की बात को और अधिक महत्व दिया जा रहा है क्योंकि उनका समय मूल्यवान माना जाने लगा है। सभी सुविधाएँ उपलब्ध होने पर यदि उपयोक्ता को अपनी वान्छित पुस्तक प्राप्त करने में अधिक समय लगता है तो इससे इस सूत्र की अवहेलना होती है। इसलिए डा. रंगनाथन् ने पाठकों का समय बचाने हेतु ग्रन्थालयों में निम्न व्यवस्थाएँ किए जाने का प्रावधान करना बताया है।

1. मुक्त प्रवेश व्यवस्था (Open Access) – अभी तक अनेक ग्रन्थालयों में बन्द व्यवस्था (Closed access) हुआ करती थी जिससे पाठकों को अपनी पुस्तकें मिलने में अत्यधिक समय लग जाता था क्योंकि पाठकों को पुस्तकों का चयन प्रसूची में देखकर करना पड़ता था तथा उसके बाद पर्ची (slip) पर लिखकर ग्रन्थालय के कर्मचारी को देना पड़ता था उसके बाद भी उसे काफी देर तक इन्तजार करना पड़ता था जिससे उनका अत्यधिक समय नष्ट होता था। इससे समय की क्षति के साथ-साथ श्रम भी अधिक करना पड़ता था। इसी कारण पाठकों के समय की बचत करने के उद्देश्य से ग्रंथालयों में मुक्त-प्रवेश व्यवस्था का सूत्रपात होने लगा। इस व्यवस्था में पाठक स्वयं ग्रंथालय के भण्डारागार में निधानियों के पास जाकर स्वयं अवलोकन कर पुस्तक का चयन कर सकता है तथा प्राप्त कर सकता है जिससे पाठक के समय की बचत होती है। इसलिए इस सूत्र के परिपालन हेतु ग्रन्थालयों में अवरोधी व्यवस्था की अपेक्षा मुक्त प्रवेश व्यवस्था का होना अति आवश्यक एवम् उपादेय सिद्ध होता है।

2. पुस्तकों का वर्गीकरण (Classified Arrangement) – पाठकों के समय की बचत करने के उद्देश्य से मुक्त प्रवेश व्यवस्था करने से ही इस सूत्र का लक्ष्य पूर्ण नहीं हो जाता। इसके लिए निधानियों पर पुस्तकों की उचित आँकलन व्यवस्था भी होना आवश्यक है अर्थात उपयुक्त वर्गीकरण पद्धति के अनुसार पुस्तकों का वर्गीकरण करके निधानियों पर व्यवस्थित होना चाहिए इससे सन्निकट विषय एक साथ एक सुगम अनुक्रम में आ जाते हैं। निधानियों की आँकलन व्यवस्था में पाठकों की सहायता करने के उद्देश्य से निधानियों पर जगह-जगह shelf guides लगाने चाहिए जिससे वे पाठकों की सहायता कर सकें।

3. ग्रंथालय प्रसूची (Library Catalogue) – ग्रन्थालयों में प्रसूची एक दर्पण के समान कार्य करती है। जिस प्रकार साहित्य समाज का दर्पण कहलाता है ठीक उसी प्रकार प्रसूची भी ग्रन्थालय की समस्त पुस्तकों का विवरण दर्पण के समान प्रस्तुत कर देती है इसलिए पुस्तकों का प्रसूचीकरण करना भी आवश्यक होता है क्योंकि प्रसूची के माध्यम से ही पाठकों को ग्रन्थपरक विवरण प्राप्त होता है। पुस्तक को उसके पाठक तक पहुँचाने में प्रसूची की विशेष भूमिका होती है इसलिए ग्रथालयों में प्रसूची की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए और यदि संघ प्रसूची की व्यवस्था कर दी जाय तो यह अति उत्तम रहता है। किसी पुस्तक से

सम्बन्धित जितने भी संलेख (प्रविष्टियाँ) बनना सम्भव हो उतनी बनानी चाहिए और उन्हें प्रसूची में स्थान देना चाहिए।

4. परिसंचरण प्रणाली (आदान प्रदान की विधि) (Circulation System) — डा. रंगनाथन् के इस नियम के प्रतिपादन के पूर्व परिसंचरण प्रणाली की वह व्यवस्था थी जिसमें अत्यधिक समय लग जाता था क्योंकि उनमें अधिक जटिलताएँ हुआ करती थीं। बहुत से ग्रन्थालयों में वे विधियाँ आज भी प्रचलित हैं। अधिक समय व्यय होने के कारण अनेक नवीन विधियों का अविष्कार हुआ है जिससे इस कार्य में कम से कम समय लगे तथा पाठकों का अधिक समय नष्ट न हो। आजकल **ब्राउने प्रणाली** तथा **न्यूआर्क प्रणाली** पुस्तकों के परिसंचरण कार्य हेतु अधिक उपयोग में लाई जा रही हैं। टोकन प्रणाली भी अत्यन्त उपयोगी है। ये प्रणालियाँ पाठकों के साथ-साथ कर्मचारियों के समय में भी बचत करती हैं।

5. सन्दर्भ सेवा (Reference Service) — ग्रन्थालयों में जितने भी नवीन उपकरण, विधियों, तकनीकियाँ तथा साधनों का उपयोग किया जाता है उससे ग्रन्थालय के सामान्य पाठक अपरिचित एवम् अनभिज्ञ होते हैं इसलिए वे उनका उपयोग नहीं कर सकते हैं। अतः ऐसी अवस्था में इन सभी का ज्ञान कराने के लिए ग्रन्थालय में एक व्यक्तिगत सेवा की आवश्यकता होती है जिसे **सन्दर्भ सेवा** कहते हैं। अतः इस सेवा का प्रावधान ग्रथालयों में अवश्य किया जाना चाहिए। इस सेवा के माध्यम से पाठकों को प्रत्येक प्रकार की सहायता प्राप्त होती है और वे अपनी पुस्तक अपना अधिक समय नष्ट किए बिना प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं। इसलिए कहा जा सकता है कि पाठकों का समय बचाने की दृष्टि से ग्रन्थालयों में सन्दर्भ सेवा प्रदान करने की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए।

6. उचित गाइडों प्रयोग (Use of Proper Guides) — ग्रन्थालयों में यदि पाठकों का मार्गदर्शन करने हेतु जहाँ-जहाँ आवश्यकता हो वहाँ उचित मार्गदर्शक बातें या **स्लोगन** लिखकर जगह-जगह उचित स्थान पर लगाने चाहिए। इनसे पाठकों को ग्रन्थालय का उपयोग करने में सहायता मिलती है तथा उनके अमूल्य समय की भी बचत होती है।

प्रश्न-16 : क्या ग्रन्थालय विज्ञान के 5 नियम आज भी प्रासंगिक हैं ? समीक्षा कीजिए।

ग्रन्थालय विज्ञान के कुछ विशेषज्ञ रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित ग्रन्थालय विज्ञान के 5 मौलिक नियमों को आज के परिप्रेक्ष्य में अप्रासंगिक मानते हैं लेकिन यह बात सही नहीं है जो निम्न प्रेक्षणों से सिद्ध होती है।

प्रथम नियम : पुस्तकें उपयोग के लिए हैं।

ग्रन्थालयों में पुस्तकें उपयोग के लिए होती हैं इस बात को सुनिश्चित करने हेतु हम सामान्यतया ग्रन्थालय के स्थान, उसके खुले रहने का समय, भवन, फर्नीचर तथा उपकरण तथा प्रशिक्षित एवम् योग्य कर्मचारियों की व्यवस्था आदि को ध्यान में रखते हैं। लेकिन आज के समय में ग्रन्थालयों में न केवल पुस्तकें ही संग्रहित की जाती हैं बल्कि अब विविध प्रकार के प्रलेख, सूक्ष्म प्रलेख, कम्प्यूटर पठनीय सामग्री जैसे — फ्लॉपी, डिस्क, टेप्स, सीडी-रोम आदि भी संग्रहीत किये जा रहे हैं। आधुनिक प्रकार के इन प्रलेखों का उपयोग सुनिश्चित करने

हेतु आवश्यक उपकरण, कम्प्यूटर तथा उपयोगी साधन विकसित किये जा चुके हैं तथा साथ ही इनको व्यवहार में लाने के लिए विशिष्ट प्रकार के प्रशिक्षण भी ग्रन्थालय के कर्मचारियों को दिए जा रहे हैं तथा ग्रन्थालयों के भवन भी माड्यूलर प्रकार के निर्मित किए जा रहे हैं जिसमें पाठकों को विशेष प्रकार के फर्नीचर एवम् उपकरणों की सुविधा भी प्रदान की जा रही है। इन सभी के प्रावधान के बावजूद मूल विचार वही रहता है कि पठनीय-सामग्री उपयोग के लिए होती है। इस प्रकार इन नवीन प्रकार के प्रलेखों का उपयोग सुनिश्चित करने के लिए कुछ कार्य किए जायें उनका उपयोग होना ही महत्वपूर्ण बात है। इसलिए ग्रन्थालय विज्ञान का प्रथम नियम आज भी प्रासंगिक है।

द्वितीय नियम : प्रत्येक पाठक उसकी पुस्तक।

प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तकें मिले इसके लिए ग्रन्थालय प्राधिकरण का यह दायित्व होता है कि वह प्रत्येक प्रकार के पाठकों के उपयोग हेतु ग्रन्थालय की स्थापना करे तथा पुस्तकों के क्रय, कर्मचारियों के वेतन तथा सरंचना के लिए वित्त की व्यवस्था करने में भी अपनी भूमिका का निर्वाह करें। संसाधन साझेदारी की व्यवस्था करने से भी प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक प्राप्त होती है। वर्तमान समय में **पाठक** तथा **पुस्तक** शब्द, उपयोक्ता तथा सूचना शब्दों में प्रचलित हो गये है लेकिन इस पर भी मूल विचार वही रहता है कि प्रत्येक उपयोक्ता को उसकी वान्छित सूचना उपलब्ध होनी चाहिए। आज इलैक्ट्रॉनिक युक्तियों, कम्प्यूटर द्वारा डेटाबेसों से ऑनलाइन खोज तथा नैटवर्किंग व्यवस्था द्वारा विश्व के किसी भी स्थान से सूचना की उपलब्ध विशाल मात्रा में से चयनित, सटीक तथा व्यापक वान्छित सूचना प्राप्त करना अत्यन्त सरल एवम् सुविधाजनक हो चुका है। इस प्रकार आज दूसरा नियम भी अत्यन्त प्रासंगिक है।

तृतीय नियम : प्रत्येक पुस्तक उसका पाठक।

डा. रंगनाथन् ने इस नियम के परिपालन हेतु संस्तुत किया था ग्रंथालयों में अबद्ध प्रणाली व्यवस्था अपनानी चाहिए जिससे पाठक की प्रत्येक पुस्तक पर दृष्टि पड़ सके तथा यदि वान्छित पुस्तक भण्डार गृह में उपलब्ध नहीं है तो वह उसकी स्थानापन्न पुस्तक प्राप्त कर सकता है इसके साथ ही जो नवीतम पुस्तकें भण्डार गृह में व्यवस्थित की जा चुकी हैं उनका भी वह अवलोकन कर सकता है अर्थात सभी पुस्तकों की जानकारी पाठकों को हो जाती है। लेकिन लाभ के साथ-साथ इस प्रणाली के कुछ दोष भी हैं। इस प्रणाली को उपयोग में लाये जाने हेतु अत्यन्त सजगता, अधिक स्थान तथा पुस्तकों की पुनर्स्थापना हेतु आवश्यक कार्य हेतु अधिक कर्मचारियों की आवश्यकता होती है। इसके साथ ही इस व्यवस्था में पुस्तकों की चोरी, पृष्ठ फाड़ने, क्षति पहुँचाने आदि की भी सम्भावना रहती है लेकिन इन सभी कारणों से खुली प्रणाली के लाभों को देखते हुए तथा तृतीय नियम के परिपालन हेतु अवहेलना की जा सकती है।

चतुर्थ नियम : पाठकों के समय की बचत कीजिए।

पाठकों के समय की बचत करने तथा विशेष पुनर्प्राप्ति हेतु पुस्तकों का गहन वर्गीकरण तथा उपयुक्त प्रसूची संहिता के अनुसार प्रसूचीकृत करना आवश्यक है। पाठकों के विशिष्ट

प्रकार के अभिगमों को संतुष्ट करने के लिए पुस्तकों से सम्बन्धित अतिरिक्त संलेख तथा विश्लेषणात्मक संलेख निर्मित किए जा सकते हैं। इसके साथ ही पाठकों के समय की बचत हेतु कम्प्यूटरीकृत आदान-प्रदान प्रणाली उपयोग में लाई जा सकती है। आजकल ग्रन्थालयों में प्रलेखों का वर्गीकरण एवम् प्रसूचीकरण कार्य **ओसीएलसी डेटाबेस** तथा ओपैक द्वारा अन्य ग्रन्थालयों के ऑनलाइन प्रसूची की स्केनिंग करके किया जा सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सूचना प्रोद्यौगिकी का उपयोग करने पर यह चतुर्थ नियम अधिक बल देता है, इसलिए प्रासंगिक है।

पाँचवा नियम : ग्रन्थालय वर्धनशील संस्था है।

यह नियम बताता कि समय के साथ ग्रन्थालय में भी वृद्धि होती है। ग्रन्थालयों में प्रारम्भ में यह वृद्धि संख्यात्मक रूप से होती है लेकिन कुछ वर्षों के बाद इनकी गुणवत्ता तथा विकास में वृद्धि होती है। इस नियम के परिपालन हेतु ग्रन्थालय के भवन, ग्रन्थों को संकलन करने निधानियाँ, कर्मचारियों की संख्या, पाठकों के लिए उपयुक्त स्थान तथा ग्रन्थालय की नीतियाँ आदि नियोजित होनी चाहिए। भविष्य की वृद्धि को देखते हुए ग्रन्थालय भवन हेतु मोड्यूलर व्यवस्था उत्तम रहती है। प्रलेखों की पुनरावृत्ति को रोकने के प्रयास करने चाहिए। स्थान की कमी को देखते हुए प्रलेखों को माइक्रोफॉर्म, डिस्क, फ्लॉपी तथा सीडी-रोम में संग्रहीत किया जा रहा है जिससे स्थान की समस्या बिल्कुल समाप्त हो चुकी है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि आज के युग में प्रयुक्त सूचना प्रौद्योगिकी ने पाँचवें नियम के परिपालन में अत्यन्त उपयुक्तता सिद्ध की है। इसलिए यह नियम भी आज प्रासंगिक है न कि अप्रासंगिक।

प्रश्न-17 : ग्रन्थालय के उपयोक्ता से आशय क्या है ? इन्हें किस प्रकार प्रशिक्षित किया जाना चाहिए जिससे वे आधुनिक ग्रन्थालयों का सदुपयोग कर सकें।

ग्रन्थालयों में पाठ्य-समग्री का उपयोग करने वाले को सामान्यतया पाठक नाम से पुकारा जाता रहा है लेकिन आधुनिक ग्रन्थालयों में पाठ्य-सामग्री के रूप में प्रलेखों में निहित सूचना का अत्यधिक महत्व हो चुका है। आज सूचना एक पदार्थ के रूप में मानी जाती है अतः जिस प्रकार किसी वस्तु के उपयोग करने वाले को उपभोक्ता कहा जाता है उसी प्रकार सूचना का उपयोग करने वाले को **उपयोक्ता** कहना अत्यन्त तर्कसंगत प्रतीत होता है तथा आधुनिक परिपेक्ष्य में उपयुक्त भी है। अतः **उपयोक्ता वह व्यक्ति होता है** जो ग्रन्थालय में किसी भी उद्देश्य से सूचना, प्रलेख आदि का उपयोग करने के लिए आता है।

अनेक उपयोक्ताओं के समूह को **उपयोक्ता समुदाय** (Users Community) कहा जाता है जिसमें विभिन्न श्रेणी के उपयोक्ता हो सकते हैं जैसे – छात्र, अध्यापक, शोधार्थी, व्यापारी, व्यवसायी, उद्योग धन्धों में संलग्न व्यक्ति आदि। उपयोक्ता समुदाय केवल एक प्रकार के उपयोक्ताओं का भी हो सकता है जैसे किसी महाविद्यालय के छात्र, शोध संस्थान के वैज्ञानिक आदि। चूँकि ग्रन्थालय के अधिकांश उपयोक्ता ग्रन्थालय के क्रियाकलापों, प्रयुक्त तकनीकियों एवम् विधियों, सूचना स्रोतों आदि से परिचित नहीं होते हैं अतः उन्हें इन सभी

बातों से परिचित करना ग्रन्थालय का कर्त्तव्य एवम् उत्तरदायित्व होता है। इसलिए ग्रन्थालयों के लिए यह अति आवश्यक हो गया है कि वे अपने उपयोक्ताओं को ग्रन्थालय तथा उसमें निहित सूचना संसाधनों का उपयोग करने में सहायता करने हेतु संक्षिप्त पाठ्यक्रम संचालित करें एवम् उन्हें व्यवहार में लायें। पाठ्यक्रम निम्न तीन प्रकार से आयोजित किए जा सकते हैं –

1. उपयोक्ता का दीक्षा संस्कार (User's Orientation) – दीक्षा-संस्कार का अर्थ किसी अपरिचित व्यक्ति को वातावरण, परिस्थतियों, तथ्यों आदि से परिचित कराना होता है। ग्रन्थालय के सन्दर्भ में दीक्षा संस्कार का अर्थ ग्रन्थालय के उपयोक्ताओं को ग्रन्थालय के वातावरण, संकलन तथा उसकी भौतिक दशा, ग्रन्थालय में प्रयुक्त उपकरणों, विधियों एवम् सेवाओं से परिचित कराने से होता है। ग्रन्थालयों में इस दीक्षा संस्कार से उपयोक्ता ग्रन्थालय के संकलन एवम् सेवाओं का उपयोग करने में कुशल हो जाते हैं। ग्रन्थालयों में दीक्षा संस्कार प्रायः एक घण्टे के परिचय से लेकर दो या तीन दिन के प्रोग्राम तक हो सकते हैं जो उपयोक्ता की श्रेणी पर निर्भर करता है।

2. ग्रन्थपरक निर्देश (Bibliographic Instructions) – ग्रन्थालयों में दीक्षा संस्कार उपयोक्ताओं को ग्रन्थालय के संकलन तथा सेवाओं से परिचित कराने के लिए आयोजित किए जाते हैं लेकिन इससे प्रलेखों के विविध प्रकार एवम् उनके उपयोग से सम्बंधित समस्याओं का हल नहीं होता है। उच्च अध्ययन एवम् अनुसंधान कार्यक्रमों में संलग्न उपयोक्ता अपना शोध-प्रबन्ध तथा शोध-प्रतिवेदन तैयार करने के लिए अपना अधिकांश समय आवश्यक अनुसंधान सामग्री संग्रहीत करने में लगाते हैं जिसके लिए उन्हें सूचना स्रोतों का उपयोग करने हेतु दीक्षा संस्कार की अपेक्षा उन्हें मार्गदर्शन की आवश्यकता अधिक होती है जो उन्हें ग्रन्थालय के कर्मचारियों से प्राप्त होता है। उपयोक्ताओं द्वारा सूचना स्रोतों से अपनी अभिरुचि की सूचना खोजने में जो निर्देश ग्रन्थालय कर्मचारियों द्वारा उपयोक्ताओं को दिए जाते हैं वे ग्रन्थपरक निर्देश कहे जाते हैं जो उपयोक्ता के लिए अति आवश्यक होते हैं।

3. आधुनिक तकनीकि उपकरणों का उपयोग करने हेतु प्रशिक्षण (Training in the use of Modern Technological Gadgets) – आजकल सभी ग्रन्थालयों में उसके कार्यों को शीघ्र सम्पन्न करने हेतु कम्प्यूटर मशीन का अधिकतम उपयोग किया जा रहा है। इसके साथ ही विविध प्रकार की सूचना प्रौद्योगिकियों का उपयोग भी अधिकता से किया जा रहा है। कहने का तात्पर्य है कि आज का साधारण उपयोक्ता इन नवीन उपकरणों से सुपरिचित नहीं होता है इसलिए इन तकनीकि युक्त कार्यों को सम्पन्न करने हेतु कुशल तकनीतिज्ञों की आवश्यकता होती है। इन तकनीकि कार्यों में कम्प्यूटर टर्मिनल, डेटाबेसों से ऑनलाइन खोज, सीडी-रोम से सूचना खोज करना, इलैक्ट्रॉनिक कॉपीयर, माइक्रोफिल्म रीडर आदि प्रमुख हैं जिनके संचालन हेतु सामान्य कर्मचारी की अपेक्षा विशेष प्रकार से प्रशिक्षित एवम् कुशल कर्मचारियों की आवश्यकता होती है इसलिए इन आधुनिक तकनीकि उपकरणों एवम् सेवाओं का उपयोग करने की सुविधाओं में उपयोक्ताओं को प्रशिक्षण प्रदान करना आवश्यक हो जाता है।

प्रश्न-पत्र : द्वितीय

ग्रन्थालय प्रबन्ध (Library Management)

प्रश्न-1 : वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए?

प्रबन्ध का सीधा-सा अर्थ किसी संस्था में कौशलपूर्ण युक्ति के साथ मानव अर्थात कर्मचारियों की व्यवस्था एवम् संचालन करने से होता है। इस प्रकार अन्य व्यक्तियों से कार्य कराने की युक्ति ही प्रबन्ध कहलाती है। ग्रंथालय भी एक संस्था होती है जिसमें अनेक कर्मचारी कार्य करते हैं। वहाँ भी प्रबन्ध करने की आवश्यकता होती है जो ग्रन्थालयी द्वारा किया जाता है। प्रबन्ध में अनेक निर्णय समय-समय पर लिये जाते हैं। आजकल ये निर्णय सामान्य तरह से न लिए जाकर वैज्ञानिक आधार पर लिए जाते हैं अर्थात् प्रबन्ध में आजकल वैज्ञानिकता का समावेश होता है।

सन् 1950 के आसपास से प्रबन्ध के क्षेत्र में गणित, सांख्यिकी तथा अर्थशास्त्र जैसे विषयों के माध्यम से निर्णय लिये जाते हैं। प्रबन्धकीय कार्यों में क्रियात्मक क्षमताओं के लिए क्रियात्मक अनुसंधान अध्ययन, लागत लाभ के लिए अर्थमिति विश्लेषण तथा योजना बनाने, निर्णय लेने तथा भविष्यवाणी करने के लिए गणितीय मॉडल्स अभिकल्पित किये गये हैं। टेलर महोदय पहले व्यक्ति थे जिन्होंने प्रबन्ध के क्षेत्र में **वैज्ञानिक प्रबन्ध** शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग अपनी पुस्तक में किया था।

वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त (Principles of Scientific Management) :

वैज्ञानिक प्रबन्ध के कुछ मूल सिद्धान्त हैं जो विचारकों, विशेषज्ञों, विद्वानों एवम् लेखकों ने विकसित किए हैं। ये सिद्धान्त जिस किसी भी संस्था के प्रबन्ध में लागू किये जाते हैं उस संस्था के कार्यों हेतु व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। ये सिद्धान्त निम्न हैं –

1. **कार्य का उचित विभाजन (Proper division of work)** — हम जानते हैं कि प्रत्येक संस्था अथवा संगठन वृद्धि करता है इसलिए उसमें कार्यरत प्रत्येक कर्मचारी के कर्त्तव्य एवम् उत्तरदायित्व उचित तरह से विभाजित किए जाने चाहिए। किसी भी कर्मचारी में यदि कोई विशेष योग्यता है तो वह कार्य के विभाजन को वास्तव में विकसित करती है। प्रबन्ध के ये तत्व इस सिद्धान्त के उदाहरण के रूप में लिये जा सकते हैं।

2. **अधिकार एवम् उत्तरदायित्व (Authority and Responsibility)** — कर्मचारियों को प्रदान किए गए अधिकारों एवम् उत्तरदायित्वों को अलग नहीं समझना चाहिए। यदि कोई कर्मचारी किसी कार्य के परिणाम के लिए उत्तरदायी है तो उस व्यक्ति को उस कार्य की सफलता सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक कार्यवाही करने के पूर्ण अधिकार भी दिए जाने चाहिए।

3. **अनुशासन (Discipline)** — कर्मचारियों में अनुशासन की भावना से कार्य करने की आदत होनी चाहिए। अनुशासन के साथ कार्य करने से कर्मचारियों में अनेक आवश्यक गुणों का विकास होता है जैसे उनमें नियमित काम करने की लगन, व्यवहार एवम् आचरण में शुद्धता, उत्तरदायित्व की भावना का विकास, आपसी सम्बन्ध मधुर होते हैं। इनके बिना सफलता मिलना अत्यन्त असम्भव है।

4. **आदेश की एकता (Unity of Command)** — कर्मचारियों को केवल एक ही वरिष्ठ व्यक्ति से कार्य करने हेतु आदेश मिलने चाहिए जिससे वह उस कार्य को तन्मयता एवम् लगन के साथ पूर्ण कर सकेगा। अगर एक व्यक्ति से आदेश की अपेक्षा कई व्यक्तियों के आदेश प्राप्त होंगे तो वह एक भी आदेश का पालन करने में अपने आपको असमर्थ पायेगा।

5. **निर्देशन की एकता (Unity of Direction)** — पूरी संस्था का एक ही अध्यक्ष होना चाहिए तथा अनेक कर्म चारियों द्वारा किए गए सम्मिलित प्रयासों को सुनिश्चित करने हेतु एक ही योजना होनी चाहिए।

6. **अधीनस्थता (Subordination)** — संस्था में कार्यरत प्रत्येक कर्मचारी को व्यक्तिगत अभिरुचि को प्रधानता न देकर सभी की अभिरुचि की ओर ध्यान देना चाहिए। सम्पूर्ण स्टाफ का प्रमुख कार्य संगठन की वृद्धि एवम् विकास के लिए कार्य करना होना चाहिए।

7. **कर्मचारियों को वेतन (Remuneration)** — संस्था में कार्यरत प्रत्येक कर्मचारी को सामान्य मानकों के अनुसार वेतन की व्यवस्था होनी चाहिए। जैसा पद एवम् उत्तरदायित्व है उसी के अनुसार कर्मचारियों का वेतन निर्धारण किया जाना चाहिए।

8. **केन्द्रीकरण (Centralisation)** — संस्था के कुछ कार्यों हेतु उन्हें केन्द्रीकरण करने की आवश्यकता होती है। कार्यों का विवेकपूर्ण विभाजन केन्द्रीकरण एवम् विकेन्द्रीकरण के पदों में किया जाना चाहिए।

9. **पद श्रृंखला (Scaler Chain)** — इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था में कर्मचारियों का शिखर पद से निम्न पद तक एक निश्चित संरचना होनी चाहिए और पदों की श्रृंखला एक कड़ी के रूप में हो जिससे प्रत्येक कर्मचारी उसी कड़ी के अनुसार एक के बाद एक पद के नियन्त्रण में रहे।

10. **सही क्रम (Order)** — प्रत्येक वस्तु एवम् कर्मचारी का संस्था में सही क्रम होना चाहिए। वह क्रम निर्धारित किया जाना चाहिए।

11. **समानता (Equity)** — कर्मचारियों को संचालित करने हेतु समान भाव से देखा जाना चाहिए तथा उनके साथ न्याय एवम् ईमानदारी के साथ व्यवहार करना चाहिए।

प्रश्न-2 : ग्रन्थालयों में वैज्ञानिक प्रबन्ध की महत्ता एवम् उपयोगिता क्या है? समझाइये।

वैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर किया गया प्रबन्ध वैज्ञानिक प्रबन्ध कहलाता है। अन्य संस्था एवम् संगठनों की तरह वैज्ञानिक प्रबन्ध ग्रन्थालयों में भी प्रयुक्त किया जा सकता है जिससे ग्रंथालय अपने उपयोक्ताओं को उत्तम से उत्तम सेवा प्रदान करने में सफल होते हैं। ग्रन्थालयों में वैज्ञानिक प्रबन्ध का महत्व एवम् उपयोगिता निम्न प्रकार व्यक्त की जा सकती है।

वैज्ञानिक प्रबन्ध का ग्रन्थालयों में महत्व (Importance in Libraries):

ग्रन्थालयों में वैज्ञानिक प्रबन्ध का महत्व निम्न प्रकार है —

1. ग्रन्थालयों में वैज्ञानिक प्रबन्ध के लागू करने से ग्रन्थालय में कार्यरत कर्मचारियों की कार्य करने की क्षमता तथा साथ ही दक्षता में अभिवृद्धि होती है जिससे वे पूर्व की अपेक्षा अब तीव्र गति से दक्षतापूर्ण अधिक कार्य निष्पादित कर सकते हैं।
2. ग्रन्थालयों में कर्मचारियों की कार्यक्षमता एवम् दक्षता में वृद्धि होने से उनकी पदोन्नति होना स्वाभाविक है अतः पदोन्नति के अवसर पर उनके पद तथा वेतन का निर्धारण करने में एक वैज्ञानिक आधार प्रदान करता है।
3. ग्रन्थालय में कर्मचारियों के श्रम का अपव्यय होने से रोकने के लिए उत्तम पुनर्गठन करने में सहायक होता है।

वैज्ञानिक प्रबन्ध की ग्रन्थालयों में उपयोगिता (Utility in Libraries) :

ग्रन्थालय समाज सेवी संस्था होते हैं उनका उद्देश्य निःशुल्क सेवा करना होता है न कि लाभ कमाना। यदि वैज्ञानिक प्रबन्ध ग्रन्थालयों के प्रबंध में प्रयुक्त किया जाय तो ग्रन्थालय इस सिद्धान्त के अनुसार अधिकतम उत्पादन के रूप में ग्रथालय के उपयोक्ताओं को सर्वोत्तम सेवा प्रदान करने में सफल रहते हैं तथा सेवाओं में भी गुणवत्ता आती है।

1. **वैज्ञानिक प्रबन्ध ग्रन्थालय के वास्तविक तथ्यों एवम् तर्कों को विकसित करने में सहायक होता है** - ग्रन्थालयों का यह कर्त्तव्य एवम् उत्तरदायित्व होता है कि वह समाज के व्यक्तियों को उनके द्वारा कर (टैक्स) के रूप में दिए गए धन के बदले में ग्रंथालय सेवाओं के रूप में अधिकतम लाभ प्रदान करे। ग्रन्थालय वर्द्धनशील संस्था होते हैं इसलिए वर्ष प्रति वर्ष इनके रख-रखाव के लिए अतिरिक्त धन की आवश्यकता होती है। ग्रन्थालय के लिए धन देने वाला चाहे वह पाठक हो, सरकार हो या कोई संस्था हो यह चाहता है कि अतिरिक्त धन की माँग क्यों की जा रही है तथा उसकी इस माँग के सम्बन्ध में क्या तथ्य एवम् तर्क हैं। वैज्ञानिक प्रबन्ध के लागू होने से ग्रन्थालयी के पास निश्चित उपयुक्त तथ्यों एवम् तर्कों का पर्याप्त आधार प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार वैज्ञानिक प्रबन्ध ग्रन्थालयी को उपयुक्त एवम् आवश्यक तथ्य एवम् तर्क प्राप्त करने में सहायता करता है।

2. **वैज्ञानिक प्रबन्ध दैनिक कार्यों की क्षमताओं को विकसित करने में भी सहायता करता है** — ग्रन्थालय के अधिकतर दैनिक कार्य द्विआवर्ती एवम् यान्त्रिक प्रकृति के होते हैं जिनमें दुबारा होने की सम्भावना रहती है। इस प्रकार दैनिक कार्य इस कारण से पुनरावृत्ति विश्लेषण के लिए सुधार किए जाने हेतु उद्यत रहते हैं अर्थात् इनमें सुधार की आवश्यकता रहती है। इन कार्यों में निम्न प्रक्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है जैसे ग्रन्थों का वर्गीकरण करना, आदान-प्रदान एवम् ग्रन्थों का निधानीकरण करना आदि। वैज्ञानिक प्रबन्ध की सहायता से इन कार्यों के करने की दिन प्रतिदिन की क्षमता में वृद्धि की जा सकती है।

3. **वैज्ञानिक प्रबन्ध, कर्मचारी प्रबन्ध एवम् वित्तीय प्रबन्ध का एक उपादेय उपकरण होता है** — वैज्ञानिक प्रबन्ध में कार्यों का विश्लेषण करना प्रमुख सिद्धांत होता है और विश्लेषण कार्य विभाजन की एक कुंजी की तरह होता है। कार्य विश्लेषण के द्वारा

4. निर्णयन सिद्धान्त (Decision Theory) — यह सम्प्रदाय इस विश्वास पर आधारित है कि प्रबन्धकों का कार्य निर्णय लेना है अतः हमें निर्णय लेने पर ही केन्द्रित होना चाहिए। इस प्रकार इस सम्प्रदाय का आधार निर्णय ही है। किसी भी कार्य को करने के सम्भावित विकल्पों में से किसी एक उपयुक्त का चयन करना निर्णयन कहलाता है। इस सम्प्रदाय के प्रतिपादकों के लिए निर्णयन सम्पूर्ण संस्था के क्रियाकलापों की जाँच हेतु उपयोग में लाते हैं। अनेक विद्वान निर्णयन का प्रयोग संगठनात्मक संरचना की जाँच करने, व्यक्तियों की मनोवैज्ञानिक एवम् सामाजिक प्रतिक्रियाएँ जानने के लिए करते हैं।

प्रश्न-5 : पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध (TQM) का अर्थ एवम् परिभाषा करते हुए यह भी बताइये कि ग्रन्थालय एवम् सूचना विज्ञान के क्षेत्र में यह कैसे लागू किया जा सकता है ?

प्रबन्ध के क्षेत्र में पूर्ण गुणवत्ता (Total Quality) का उपयोग करके एक नवीन विचारधारा का जन्म हुआ है जिसे पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध (TQM) कहा जाता है। प्रबन्ध में पूर्ण गुणवत्ता का अर्थ किसी संस्था की ऐसी व्यवस्था करना होता है जो उसके उपयोक्ताओं की आवश्यकताओं के अनुरूप हो। प्रत्येक संस्था अथवा संगठन चाहे वह उत्पादन करने वाला संगठन हो अथवा सेवा प्रदाने करने वाली संस्था, आदि सभी की स्थापना इसी उद्देश्य से की जाती है कि वह स्थापित होकर अपने उपयोक्ताओं को ऐसी सेवा प्रदान करे जो उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप हो तथा उन्हें सम्पूर्ण रूप से प्रसन्न कर सके। इसके लिए संस्था या संगठन में कार्यरत प्रत्येक कर्मचारी से यह आशा की जाती है कि वे संस्था के सम्पूर्ण विकास के लिए कार्य करें तथा अपने उपयोक्ताओं को पूर्ण सन्तुष्टि प्रदान करें। पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध (TQM) की विचारधारा अभी तक मात्र उद्योगों, कम्पनियों, कारखानों तथा व्यापारिक एवम् व्यावसायिक संस्थाओं में ही उपयोग में लायी जाती रही थी लेकिन अब यह विचारधारा सेवा प्रदान करने वाली संस्थाओं जैसे — स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालय, ग्रन्थालयों आदि में भी उपयोग में लायी जा रही है।

पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध क्या है? (What is TQM ?) :

पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध की अवधारणा का उद्देश्य उपयोक्ताओं की माँग को गुणवत्ता के साथ पूरा करना है। TQM में तीन शब्द हैं जिनके भिन्न-भिन्न अर्थ हैं —

T → Total → कार्यरत सभी कर्मचारियों की भूमिका ।

Q → Quality → सही काम प्रथम बार तथा सदैव ।

M → Management → किसी भी काम को साकार करने की कला ।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें उपयोक्ताओं की आवश्यकताओं को पूर्ण एवम् सन्तुष्ट करने के लिए उत्तम ढंग से प्रबन्ध किया जाता है। इसमें इस बात की जानकारी होना आवश्यक है कि क्या सही है जिससे हर बार सही कार्य किया जा सके। इसमें सेवा की गुणवत्ता के सुधार के लिए सदैव प्रयास किए जाते हैं जिससे उपयोक्ताओं को सन्तुष्टि प्रदान की जा सकती है। पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध थोड़े

समय के लिए समस्या का निवारण नहीं करता है बल्कि यह एक दीर्घकालीन प्रक्रिया है।

परिभाषाएँ (Definitions) :

पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध को निम्न प्रकार परिभाषित किया गया है –

1. पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध मानव आधारित प्रबन्ध प्रणाली है जिसका उद्देश्य न्यूनतम लागत पर उपयोक्ताओं को सन्तुष्टि प्रदान करना है। **—TQM Forum**
2. किसी संस्था के प्रबन्ध की पहुँच मुख्यतः उसके सभी कर्मचारियों की अच्छी गुणवत्ता पर निर्भर करती है इससे कर्मचारियों के साथ-साथ उपयोक्ता भी लाभान्वित होता है। **—I.S.O.**

ग्रन्थालय एवम् सूचना विज्ञान में पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध (TQM in Library and Information Science) :

कुछ समय पहले तक ग्रन्थालय केवल एक केन्द्रीय स्थान के रूप में संरक्षण-गृह माने जाते थे लेकिन नवीन तकनीकियों एवम् प्रौद्योगिकियों के विकास एवम् उनका उपयोग करने के कारण ग्रन्थालयों की अवधारणा भी अब बिलकुल बदल चुकी है। अब हमें अन्य संस्थाओं एवम् संगठनों की तरह ग्रन्थालय एवम् सूचना विज्ञान के क्षेत्र में भी पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध को लागू करने के लिए विवश होना पड़ा है क्योंकि आज यह आवश्यक है कि ग्रन्थालयों के उपयोक्ताओं को पूर्ण सन्तुष्टि के साथ सेवा प्रदान की जाये। ग्रन्थायों में इस विचारधारा के प्रयोग के लिए यह आवश्यक है कि ग्रन्थालय के कर्मचारियों की मानसिक तथा बौद्धिक क्षमताओं में परिवर्तन हो तथा उपयोक्ताओं को उनकी आवश्यकताओं के आधार पर विभिन्न वर्गों में विभाजित किया जाय तथा साथ ही उन्हें सन्तुष्टिपूर्ण सेवाएँ प्रदान करके उच्च प्रबन्धन (Top Management) द्वारा ग्रन्थालयों को एक सुदृढ़ आधार दिया जाये। ग्रन्थालयों में पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध के अन्तर्गत आदान-प्रदान पटल के एक लिपिक का कार्य केवल पुस्तकों का आदान-प्रदान करना ही नहीं है लेकिन आदान-प्रदान कार्य से सम्बन्धित उपयोक्ताओं की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने का उत्तरदायित्व भी निर्वाह करना है। इसी प्रकार ग्रन्थालय के सूचना अधिकारी से भी यही आशा की जाती है कि वह कम से कम समय में सही सूचनाएँ सही उपयोक्ता को प्रदान करे। इसलिए ग्रन्थालय में पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध लागू करने हेतु आवश्यक है कि –

1. ग्रन्थालय का प्रत्येक कर्मचारी पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध की आवधारणा से अवगत हो।
2. ग्रन्थालय के उपयोक्ताओं को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार विभिन्न वर्गों में विभाजित किया जाना चाहिए। जैसे किसी विश्वविद्यालय ग्रन्थालय में ये वर्ग – अध्यापक, शोध-छात्र, स्नातकोत्तर स्तर के छात्र, स्नातक स्तर के छात्र तथा सहायक कर्मचारी।
3. ग्रन्थालय समिति को भी यह निर्धारण करना होता है कि किस प्रकार उपरोक्त विभिन्न श्रेणियों के उपयोक्ताओं को अध्ययन सामग्री तथा सेवाएँ प्रदान करनी हैं।
4. उच्च प्रबन्धन के व्यक्तियों (ग्रन्थालय प्राधिकारी, ग्रन्थालयी) का प्रमुख कार्य प्रबन्ध की गुणवत्ता में वृद्धि करने के लिए विभिन्न नियमों का निर्धारण करना, लागू करना तथा क्रियान्वयन करना है।
5. इसके साथ ग्रन्थालय के कर्मचारियों को आज के परिवर्तन को देखते हुए शिक्षित एवम् प्रशिक्षित भी किया जाना आवश्यक है।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध की अवधारणा विभिन्न प्रकार के कार्यों को निष्पादित करने पर बल नहीं देती है बल्कि एक ही कार्य को विभिन्न प्रकार से करने पर बल देती है तथा गुणवत्ता में सुधार का अर्थ यह नहीं होता कि कार्य में वृद्धि हो बल्कि कार्यों को करने की विधियों में सुधार लाना होता है।

प्रश्न-6 : संगठनात्मक संरचना से क्या अभिप्राय है? ग्रन्थालयों में किस-किस रूप में संगठनात्मक संरचना स्थापित की जा सकती है? समझाइये।

किसी भी प्रकार की संस्था में उसके उद्देश्यों की पूर्ति हेतु गठित कर्मचारियों के स्वरूप को संगठन कहा जाता है जो वैज्ञानिक प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण कारक है। अतः संस्था में कर्मचारियों के संगठन हेतु जिस संरचना की आवश्यकता होती है उस संगठन की संरचना की रूपरेखा ही **संगठनात्मक संरचना** (Organisational Structure) कहलाती है। अन्य संस्थाओं की तरह ग्रन्थालयों में भी कर्मचारियों का उपयुक्त संगठन करने हेतु संगठनात्मक संरचना की आवश्यकता होती है। ग्रन्थालयों में कर्मचारियों के संगठन की संरचना निर्मित करने को ही ग्रन्थालय की संगठनात्मक संरचना कहते है जो कर्मचारियों के दायित्व निश्चित करने तथा उनसे समुचित मात्रा में काम लेने के लिए ग्रन्थालयों में आवश्यक होती है। इस प्रकार ग्रन्थालयों में संगठनात्मक संरचना से तात्पर्य निम्न से होता है –

1. ग्रन्थालयों में कार्यरत कर्मचारियों के अधिकारों की रूपरेखा का निर्धारण करना।
2. ग्रन्थालयों में कर्मचारियों का पदों के अनुसार वर्गीकरण, उनके पदों की व्याख्या तथा आपस में उनका पारस्परिक सम्बन्ध निर्धारित करना।
3. ग्रन्थालयों के लक्ष्य की पूर्ति के लिए कर्मचारियों में उपयुक्त समन्वय करना।

संगठनात्मक संरचना के विविध रूप (Various forms)

ग्रन्थालयों में कर्मचारियों के संगठन की संरचना निम्न प्रकारों में से किसी एक के अनुसार व्यवस्थित की जा सकती है –

1. **रेखीय संरचना (Line Structure)** — जब किसी संस्था में सभी कर्मचारी किसी अन्य की अपेक्षा उस संस्था के अध्यक्ष के प्रति उत्तरदायी होते हैं तब ऐसी संरचना को **रेखीय संरचना** कहा जाता है। इस प्रकार की संरचना में मात्र एक ही प्रमुख अधिकारी होता है तथा पदाधिकारियों की व्यवस्था ऊपर से नीचे की ओर अधीनस्थ पदाधिकारी की ओर चलती है। बड़े ग्रन्थालयों में ग्रन्थालयी द्वारा ग्रन्थालय के असंख्य कर्मचारियों को निर्देशित एवम् नियन्त्रित करना कठिन हो जाता है तब वह अपने कुछ अधिकार एवम् शक्तियाँ उप-ग्रन्थालयी अथवा सहायक ग्रन्थालयी को प्रदान कर देता है जो प्रत्यक्ष रूप से ग्रन्थालयी के प्रति उत्तरदायी होते हैं। उदाहरण – मान लो किसी ग्रन्थालय में अनेक सहायक कर्मचारियों के साथ-साथ

स्रोत की संज्ञा दी जाती है। पिछले लगभग 20 वर्षो से अमुद्रित सूचना सामग्री भी ग्रन्थालयों में उनके संग्रह के विकास हेतु मुख्य धारा में प्रवेश कर चुकी है। कुछ लोग अमुद्रित एवम् ग्रन्थेत्तर सामग्री को एक समझते हैं। ग्रन्थेत्तर सामग्री एक तरह से कागज विहीन सामग्री होती है लेकिन उसमें सूचना मुद्रण रूप में हो सकती है जैसे डेटाबेस, माइक्रोफॉर्म, सीडी आदि। ये सभी ग्रन्थ तो नही हैं लेकिन उसमें सूचना लिखित रूप में होती है। अमुद्रित सामग्री मुख्य रूप से तकनीकि आधार पर विभेदित की जा सकती है। इस प्रकार अमुद्रित सामग्री वह है जिनमें मुद्रित शब्दों अथवा दृश्यों का प्रत्यक्ष रूप से प्रतिनिधित्व नहीं होता है जैसे – मैगनेटिक टेप्स, डिजीटल रिकार्ड आदि।

ओडियो (जो श्रव्य हों), वीडियो (जो दृश्य हों) तथा ओडियो विजुअल (जो सुने एवम् देखे जा सकते हैं जैसे टीवी आदि), अमुद्रित होते हुए भी मुद्रित के सर्वश्रेष्ठ पूरक के रूप में देखे जाते हैं इसीलिए इनका उपयोग स्कूल, कालेजों तथा अन्य प्रशिक्षण संस्थानों में विषय का अध्ययन करने एवम् सीखने के लिए किया जा रहा है। अमुद्रित सूचना सामग्री को विस्तृत रूप से निम्न तीन रूपों में विभाजित किया जा सकता है (1) फिल्म माध्यम, (2) मैग्नेटिक माध्मय तथा (3) प्लास्टिक माध्मय।

प्रश्न-8 : प्रलेख चयन के प्रमुख सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए ?

किसी भी ग्रन्थालय की उपादेयता उसके संग्रह में निहित उपयोगी प्रलेखों पर निर्भर करती है। एक तरह से ग्रन्थालय का आधार प्रलेख ही होते हैं क्योंकि प्रलेखों के बिना किसी भी ग्रन्थालय की कल्पना नहीं की जा सकती है किसी उत्तम ग्रन्थालय का आधार श्रेष्ठ प्रलेख ही होते हैं अतः यदि ग्रन्थालय को समुन्नत एवम् उत्तम बनाना है तो ग्रन्थालय संग्रह हेतु उत्तम प्रलेखों का ही चयन करना चाहिए।

प्रलेखों का चयन करते समय उनकी विशेषताओं, उपयोक्ताओं की अभिरुचियों एवम् उनके विभिन्न प्रकार के स्तरों को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसलिए प्रलेख-चयन का कार्य एक कला होती है। इसके लिए कुछ उद्देश्य एवम् सिद्धान्त होते हैं। डीवी महोदय ने प्रलेख चयन का ध्येय एवम् सिद्धान्त अत्यन्त ही संक्षेप में स्पष्ट रूप से निम्न प्रकार व्यक्त किया है **अधिकाधिक पाठकों को अल्पतम व्यय पर सर्वोत्तम पाठय-सामग्री उपलब्ध कराना ही प्रलेख चयन का प्रमुख ध्येय है।**

प्रलेख-चयन के उद्देश्य को बताते हुए **एफ. डब्ल्यू डूयूरी** ने कहा है कि **ग्रन्थ चयन का मुख्य उद्देश्य उपयुक्त उपयोक्ता को उपयुक्त समय पर उपयुक्त ग्रन्थ प्रदान करना है।**

ग्रन्थालयों में प्रलेखों के संग्रह का निर्माण करना ग्रन्थालय का एक प्रमुख एवम् महत्वपूर्ण कार्य है जिसे ग्रन्थालयी को अत्यन्त सूझ-बूझ के साथ सम्पन्न करना चाहिए। प्रत्येक ग्रन्थालय को इस उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य को पूरी सतर्कता, विवेक एवम् निष्ठा के साथ निभाना चाहिए। ग्रन्थालयी के कार्य की तुलना एक दुकानदार से की जाती है। कोई भी दुकानदार अपने ग्राहकों की आवश्यकता तथा रुचि के अनुरूप वस्तुओं का संग्रह करता है तथा उनको आकर्षक रूप में प्रदर्शित करता है परन्तु उसका वास्तविक उद्देश्य तब ही पूर्ण होता है जब उसकी दुकान

की सभी वस्तुओं का विक्रय हो जाता है। इसी प्रकार ग्रन्थालय का उद्देश्य तब ही प्राप्त हो सकता है जब उपयोक्ता ग्रन्थालय में संग्रहीत प्रलेखों का उपयोग कर लेते हैं। अनुपयोगी प्रलेख ग्रन्थालय के लिए अभिशाप होते हैं।

प्रलेख चयन के सिद्धान्त (Principles of Selection) :

1. **ड्यूरी का सिद्धान्त (Drury Principle)** – इस सिद्धान्त के अनुसार प्रलेख चयन का **तात्पर्य उपयुक्त पाठक को उपयुक्त समय पर उपयुक्त प्रलेख प्रदान करना है।** इस सिद्धान्त में ड्यूरी महोदय ने पाठक को अत्यधिक महत्व प्रदान किया है उनके अनुसार पाठक की माँग को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन माँग के सिद्धान्त के अनुसार किया गया है अर्थात् पाठक जैसे प्रलेख चाहते हैं वैसे ही प्रलेखों का चयन करना चाहिए।

2. **डीवी का सिद्धान्त (Dewey's Principle)** – डा. डीवी ने प्रलेख चयन से सम्बन्धित एक सिद्धान्त दिया। The best reading material for the largest number of readers at least cost. इस सिद्धान्त को **माँग पूर्ति बनाम मूल्य उपयोगिता सिद्धान्त भी कहा जाता है।** इस सिद्धान्त को निम्न प्रकार आसानी से समझा जा सकता है। कोई प्रलेख –

कम उपयोगी → माँग कम होगी → पूर्ति अधिक होगी → लागत अधिक होगी
सामान्य उपयोगी → माँग सामान्य → सामान्य पूर्ति → लागत सामान्य
अधिकतम उपयोगी → माँग अधिक → कम पूर्ति → लागत कम से कम

अर्थात् कोई प्रलेख कम कीमत का है तो उसका उपयोग अधिक होता है अतः माँग और पूर्ति के सिद्धान्त के अनुसार कम से कम कीमत में अधिकतम उपयोग किया जा सकता है।

3. **मैककाल्विन का सिद्धान्त (McColvin Principle)** – **मैककाल्विन** महोदय ने कहा है कि प्रलेख स्वयं में कुछ नहीं हैं जब तक कि उन्हें माँग के द्वारा उपादेय न बना दिया जाये। **प्रलेख चयन जितना अधिक माँग से सम्बद्ध होगा उतनी ही अधिक सम्भाव्य सेवा होगी।** आप के मतानुसार किसी भी पुस्तक की माँग पाठकों द्वारा उसकी उपयोगिता के कारणों से अधिक होती है इसलिए पाठकों की माँग के अनुसार ही पुस्तकों का चयन करना चाहिए।

4. **रंगनाथन् का सिद्धान्त (Ranganathan's Principle)** – डा. रंगनाथन् कहते हैं कि ग्रन्थालय के लिए प्रलेखों का चयन करते समय उनके द्वारा प्रतिपादित ग्रन्थालय विज्ञान के पाँच नियमों में से पहले तीन नियमों को ध्यान में रखकर प्रलेख चयन करना चाहिए। ये नियम प्रलेख चयन में अत्यधिक सहायता करते हैं।

प्रश्न-9 : ग्रंथालयों हेतु ग्रन्थ-अर्जन में क्या प्रमुख समस्याएँ आती हैं ? समझाइये।

किसी ग्रन्थालय में प्रलेखों के संकलन का निर्माण एवम् विकास करना एक प्रमुख कार्य होता है जिसमें कई दैनिक कार्य निहित होते हैं। ग्रन्थों के संकलन के निर्माण का कार्य ग्रन्थालय के अर्जन विभाग द्वारा किया जाता है जो ग्रन्थालय के लक्ष्यों एवम् उद्देश्यों के आधार पर

कार्य करता है। ग्रन्थ अर्जन कार्य में कई प्रक्रियाएँ निहित होती हैं जिनका व्यवस्थित रूप से नियोजित होना एवम् क्रियाशील होना आवश्यक है।

ग्रन्थों के अर्जन कार्य में तीन विविध कार्य होते हैं उनमें ग्रन्थों का चयन, ग्रन्थों की प्राप्ति तथा उनका परिग्रहण करना सम्मिलित होता है। पहले दो कार्य ग्रन्थ अर्जन विभाग के कार्य की योजना एवम् व्यवस्था में कई समस्याएँ खड़ी करते हैं।

ग्रन्थ अर्जन की समस्याएँ (Problems in Acquisition of Books)

ग्रन्थों का अर्जन कार्य एक सरल कार्य नही है इसमें अनेक समस्याएँ बीच में आती हैं जिनमें से कुछ सभी ग्रन्थालयों के समक्ष आती है और कुछ केवल भारत के ग्रन्थालयों में ही आती हैं। वे समस्याएँ निम्न हैं –

1. **संघर्षीय कारक (Conflecting Factors)** – किसी भी ग्रन्थालय के संग्रह विकास में माँग, पूर्ति एवम् धन मुख्य कारक होते हैं। पुस्तकों की माँग एवम् पूर्ति सदैव वृद्धि करती है जबकि धन हमेशा कम ही प्राप्त होता है। यदि उपयोक्ताओं की माँगों को पूर्ण रूप से सन्तुष्ट करना है तो ग्रन्थालय को अधिक से अधिक ग्रन्थ क्रय करने पड़ेंगे। यह इसलिए है कि प्रतिदिन अधिक से अधिक ग्रन्थ प्रकाशित हो रहे हैं। नवीन ग्रन्थों की माँग ग्रन्थालयों पर अधिक होती है। इसलिए माँग एवम् पूर्ति के बदले हुए दबाव को पूरा करने के लिए ग्रन्थालय के लिए धन की भी वृद्धि होनी चाहिए। लेकिन सामान्यतया ऐसा होता नही है और कभी-कभी बजट में और कमी कर दी जाती है इसलिए इससे ग्रंथों के अर्जन में समस्याएँ सामने आती हैं।

2. **ग्रन्थ बाजारों का दूर होना (Far off Book Markets)** – भारत में पुस्तकों के बाजार मुख्य रूप से दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता तथा मद्रास में स्थित हैं। इसलिए देश के अन्य भागों में स्थित ग्रंथालय इन बाजारों से शीघ्र पुस्तक प्राप्त नही कर सकते क्योंकि ये इनकी पहुँच से काफी दूर होते हैं।

3. **स्थानीय पुस्तक विक्रेता (Local Book Suppliers)** – प्रत्येक ग्रन्थालय ग्रन्थों के अर्जन के लिए स्थानीय पुस्तक विक्रेताओं पर निर्भर रहते हैं जिन पर सभी प्रकाशित पुस्तकों का मिलना असम्भव होता है। इसलिए वे विशिष्ट प्रकार के आदेशों की पुस्तकों की पूर्ति करने में अधिक सक्षम नही होते हैं।

4. **विदेशी प्रकाशन (Foreign Publications)** – भारत के ग्रन्थालय अधिकांश रूप से विदेशी प्रकाशनों पर निर्भर रहते हैं जो बहुत मँहगे होते हैं। ये प्रकाशन भारतीय पुस्तक विक्रेताओं द्वारा अपने यहाँ स्टॉक में नहीं रखे जाते हैं इसलिए बाहर से पुस्तकें मँगाने में 3 से 6 माह का समय लग जाता है।

5. **भारतीय प्रकाशन (Indian Publications)** – भारतीय प्रकाशनों की अपनी स्वयं की समस्याएँ हैं। पहली समस्या यह है कि प्रकाशन उद्योग पूर्ण रूप से व्यवस्थित नहीं है। दूसरी समस्या यह है कि इस देश में ग्रन्थों के लेखक स्वयं ही अधिकांश रूप से पुस्तक का प्रकाशन करते हैं तथा स्वयं ही उसका वितरण करते हैं। तीसरी समस्या यह है कि भारत में ग्रन्थों का प्रकाशन अनेक क्षेत्रीय भाषाओं में होता है। इन कारणों से ग्रन्थालयों के लिए यह कठिन है कि वे सभी भारतीय प्रकाशनों को अपने यहाँ अर्जित कर सकें।

6. **पूर्व-भुगतान प्रकाशन (Pre-paid Publications)** – कम से कम दो श्रेणियों के प्रकाशनों हेतु पूर्व भुगतान के साथ क्रय के आदेश दिये जाते हैं वे शासकीय प्रकाशन तथा वे ग्रन्थ होते हैं जो प्रकाशन से पूर्व ही विक्रय हो जाते हैं। शाशकीय प्रकाशनों के लिए पूर्व में ही भुगतान करना आवश्यक होता है। दूसरे प्रकार की पुस्तकों की कीमत प्रायः उनकी सूची में दी गई कीमत से कम होती है इसलिए इससे भी समस्याएँ आती हैं।

7. **दुर्लभ एवम् अप्राप्य ग्रन्थ (Rare and Out-of-print Books)** – कोई भी ग्रन्थालय सामयिक प्रकाशनों के बिना अपने संकलन को पूरा नही कर सकता। प्रत्येक विषय में कुछ पुराने, अप्राप्य तथा दुर्लभ ग्रन्थ होते है इन्हें मिलाकर ही संकलन में वृद्धि होती है लेकिन ये ग्रन्थ क्रय करके प्राप्त नहीं किए जा सकते हैं। इनके लिए विशेष प्रयास करने की आवश्यकता होती है।

प्रश्न-10 : सामयिक प्रकाशन (Serials) के अर्जन से सम्बन्धित समस्याओं की विवेचना कीजिए ?

आज के समय में अनुसंधान एवम् विकास की दृष्टि से ग्रन्थों की अपेक्षा सामयिक प्रकाशनों का अत्यधिक महत्व होता है क्योंकि इनमें अनुसंधानों से सम्बन्धित सूक्ष्म एवम् नवीनतम सूचना निहित होती है इसलिए ग्रन्थालयों में सामयिकी प्रकाशनों का अर्जन करना अत्यन्त आवश्यक होता है। सामयिकी प्रकाशन से तात्पर्य ऐसे प्रकाशन से होता है प्रकाशन धारावाहिक रूप से होता है तथा जिसका प्रत्येक अंक एक निश्चित प्रकाशित होता है। सामयिक प्रकाशनों में निम्न विशेषताएँ होती हैं –

1. सामयिक प्रकाशन धारावाहिक रूप में प्रकाशित होते हैं।
2. इनका प्रत्येक अंक नियमित कालान्तर जैसे – दैनिक, साप्ताहिक, त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक एवम् वार्षिक रूप में प्रकाशित होता है।
3. प्रत्येक अंक में किसी एक मुख्य विषय की अनेक शाखाओं से सम्बन्धित विभिन्न योगदानकर्त्ताओं के योगदान आलेख के रूप में हैं।
4. प्रत्येक अंक के मुखपृष्ठ पर उसकी अंक संख्या, खण्ड संख्या आदि अंकित रहती है।
5. एक निश्चित अवधि में प्रकाशित होकर कई अंकों का एक होता है जिसकी जिल्दबंदी होकर वह एक ग्रन्थ का रूप ले

सामयिकी की समस्याएँ (Problems in Acquisition) :

ग्रन्थालयों के संकलन में पत्रिकाएँ महत्वपूर्ण श्रेणी के प्रलेख होते हैं और इनके कुछ विशेष लक्षण एवम् विशेषताएँ होती हैं जिनके कारण भारत के ग्रन्थालयों में इनका अर्जन करने में काफी समस्याएँ आती हैं। इसलिए इनके अर्जन का कार्य ग्रन्थ अर्जन विभाग को न देकर एक अलग विभाग को दिया जाता है जिसे **पत्रिका विभाग** कहते हैं। यह विभाग ही सामयिक प्रकाशकों के चयन, आदेशन, प्राप्ति एवम् नियन्त्रण का कार्य निष्पादित

प्रणाली का प्रारूप लगभग वही है जो रजिस्टर प्रणाली में होता है।

4. त्रिपत्रक प्रणाली (Three Cards System) – अनुसंधान से सम्बंधित ग्रन्थालयों जैसे – विश्वविद्यालय ग्रन्थालय अथवा किसी अनुसंधान ग्रंथालय में सामयिकी प्रकाशन अत्यधिक संख्या में मँगाये जाते हैं इसलिए इनका नियमित रूप से समय पर प्राप्त होना अत्यन्त आवश्यक होता है। यदि किसी सामयिकी प्रकाशन का कोई अंक समय पर प्राप्त नहीं होता है तो विलम्ब हो जाने के कारण वास्तव में उसकी उपयोगिता समाप्त हो जाती है और यदि स्मरण-पत्र भेजने में देरी हो जाये तो यह भी आवश्यक नहीं कि वह अंक प्राप्त हो सके। इसलिए उसके समय पर न आने की स्थिति में तत्काल स्मरण-पत्र भेजना आवश्यक होता है। इसी समस्या को देखते हुए डा. **रंगनाथन्** ने इस सम्बन्ध में त्रिपत्रक प्रणाली का प्रतिपादन किया। इस प्रणाली की महत्ता को देखते हुए इस प्रणाली का विवरण अगले प्रश्न में अलग से प्रस्तुत किया जायेगा।

5. कार्डेक्स प्रणाली (Cardex System) – ग्रन्थालयों में सामयिक प्रकाशनों का विधिवत अभिलेख रखने हेतु Ramington Rand of India कम्पनी ने एक उपकरण बनाया जिसे उस कम्पनी ने **कार्डेक्स** नाम दिया है। इस उपकरण का आकार केबिनेट की भाँति होता है और इसमें 16 दराजें (Trays) होती हैं तथा प्रत्येक दराज में 64 सामयिकी प्रकाशनों से सम्बन्धित अभिलेख रखा जा सकता है। इस प्रकार एक कैबिनेट में लगभग 1000 प्रकाशनों से सम्बन्धित अभिलेख रखा जा सकता है। प्रत्येक दराज तथा कैबिनेट को ताला भी लगाया जा सकता है जिससे अभिलेख सुरक्षित रहते हैं।

इस विधि में प्रत्येक सामयिक प्रकाशन के लिए दो पत्रक बनाये जाते हैं जिन्हें बॉटम कार्ड तथा टॉप कार्ड (Bottom Card and Top Card) कहते हैं। इन पत्रकों को मुद्रित करने का कार्य भी कम्पनी करती है। इन पत्रकों का आकार 15×10 सेमी होता है। किसी भी सामयिक प्रकाशन का आदेश देते समय प्रत्येक प्रकाशन हेतु बाटम कार्ड तैयार कर लिया जाता है तथा उस पर सम्बधित आख्या एवम् अन्य विवरण लिख दिया जाता है और भविष्य में जब उक्त सामयिक प्रकाशन प्राप्त होता है वैसे ही अन्य सूचनाएँ इस पत्रक पर अंकित कर दी जाती हैं। इस विधि में टॉप कार्ड का उपयोग सामयिकी प्रकाशन के भुगतान करने तथा स्मरण-पत्र भेजने के लिए किया जाता है तथा भुगतान एवम् स्मरण-पत्र से सम्बन्धित अभिलेख इसमें रखे जाते हैं।

प्रश्न-12 : डा. रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित सामयिकी प्रकाशन प्राप्त करने की त्रिपत्रक विधि (Three Cards System) को भली भाँति समझाइये?

अनुसंधान ग्रन्थालयों तथा विश्वविद्यालय ग्रन्थालयों में जहाँ शोध कार्य उच्च स्तर पर चल रहा होता है वहाँ अत्यधिक संख्या में सामयिक प्रकाशन क्रय एवम् प्राप्त किये जाते हैं। इनमें निहित अद्यतन सूचना के महत्व को देखते हुए इनके प्रत्येक अंक का नियमित रूप से प्राप्त होना अति आवश्यक है यदि इनमें से किसी का भी कोई अंक समय पर नहीं आता है तो उस अंक की उपयोगिता ही समाप्त हो जाती है। इसलिए सामयिक प्रकाशन के किसी

भी अंक का समय पर न आने की स्थिति में उसके लिए तत्काल स्मरण-पत्र (Reminders) भेजना अत्यन्त आवश्यक है ताकि यदि कोई भूल उक्त अंक को भेजने में हुई है तो उसे सुधार कर अंक भेजा जा सके और ग्रन्थालय में समय पर आ सके। इसलिए सामयिकी प्रकाशनों के प्रत्येक अंक की आवश्यकता एवम् महत्ता को देखते हुए डा. **रंगनाथन्** ने इस सम्बन्ध में त्रिपत्रक (Three Cards) प्रणाली का आविष्कार किया था जिसमें निम्न तीन प्रकार के अलग-अलग पत्रक उपयोग किए जाते हैं। प्रत्येक पत्रक का आकार 5" × 3" होता है।

1. पंजीकरण-पत्रक (Registration Card) – इस पत्रक में एक ओर और दूसरी ओर चित्र-1 एवम् चित्र-2 में दिखाए अनुसार स्तम्भ बनाये जाते हैं। प्रत्येक सामयिकी के लिए एक पत्रक बनाया जाता है तथा इन सभी पत्रकों को सामयिकी की आख्या के वर्णक्रम के अनुसार किसी दराज में व्यवस्थित कर दिया जाता है। जो भी सामियिकी ग्रन्थालय में प्राप्त होती है उनके पत्रक निकाल कर उसका अंक, खण्ड संख्या, प्रकाशन तिथि एवम् प्राप्ति तिथि अंकित की जाती है

चित्र 1

सामयिकी की आख्या :	भुगतान : ....
प्रकाशक का नाम :	खण्ड : ....
विक्रेता का नाम :	वर्ष : ....
प्रकाशन अवधि :	रसीद संख्या : ....
आदेश संख्या एवम् दिनाक :	वार्षिक शुल्क : ....

चित्र 2

खण्ड संख्या									
प्रकाशन तिथि									
प्राप्ति तिथि									
अंक संख्या									

2. परीक्षण पत्रक (Check Card) – परीक्षण-पत्रक किसी भी सांख्यिकी की यह जाँच करने के लिए तैयार किए जाते हैं कि सामयिकी के अंक समय से प्राप्त हो रहे हैं अथवा नहीं। जिन अंकों की प्राप्ति समय पर नहीं होती है उनके लिए तत्काल स्मरण-पत्र भेजे जाते हैं ताकि कोई अंक अप्राप्य न हो जाये। इन पत्रकों को व्यवस्थित करने के लिए एक वर्ष को 60 सप्ताहों में विभक्त कर लिया जाता है तथा यह पहले से ही निश्चित कर लिया जाता है कि किस दिन सप्ताह समाप्त होगा यह दिन भी निश्चित करना पड़ता है। प्रत्येक सप्ताह को एक दिन जाँच करने के लिए निश्चित माना जाता है। 60 सप्ताहों के लिए 60 गाइड बना लिए जाते हैं जिन पर निम्न प्रकार से विवरण अंकित रहता है –

1.1 जनवरी प्रथम सप्ताह — 2.1 फरवरी का पहला सप्ताह

1.4 जनवरी का चौथा सप्ताह — 12.2 दिसम्बर का दूसरा सप्ताह

उपरोक्त गाइडों को परीक्षण-पत्रकों के साथ इस प्रकार व्यवस्थित किया जाता है कि जिस माह के जिस सप्ताह में तत्सम्बन्धी सामयिकी के आगामी अंकों के आने की सम्भावना हो उन्हीं गाइडों के पीछे वर्णानुक्रम में व्यवस्थित कर दिया जाता है। जो दिन जाँच करने के लिए नियत था उस दिन जो भी परीक्षण पत्रक इस सप्ताह में गाइड के पीछे पड़े हुए है उनका स्मरण-पत्र तैयार कर भेज दिया जाता है और यह सूचना परीक्षण-पत्रक में यथा-स्थान अंकित कर दी जाती है और इसे अगले सप्ताह की गाइड के पीछे रख दिया जाता है जिससे यदि अगले सप्ताह तक उसका अंक प्राप्त न हो तो पुनः स्मरण-पत्र के लिए विचार किया जा सकता है। प्रति सप्ताह इसी प्रकार का क्रम चलता रहता है।

3. वर्गीकृत अनुक्रमणिका पत्रक (Classified Index Card) – जब सामयिकी के सभी अंक प्राप्त हो जाते हैं तब उनको एकत्रित कर उसके मुखपृष्ठ, विषय-सूची तथा अनुक्रमणिका को सही स्थान पर व्यवस्थित कर सामयिकी के सम्पूर्ण खण्ड (Volume) को जिल्दबन्दी करा ली जाती है और एक ग्रन्थ के रूप में ग्रन्थालय के परिग्रहण रजिस्टर में प्रविष्ट कर परिग्रहण संख्या प्रदान कर दी जाती है तथा इसकी सूचना **वर्गीकृत अनुक्रमणिका पत्रक** में यथास्थान अंकित कर दी जाती है जिसमें समस्त विवरण निम्न प्रकार होता है।

वर्णांक	वार्षिक शुल्क
ग्रन्थांक	
आख्या	
विक्रेता	
प्रकाशक	
प्राप्त खण्ड	
अनुक्रमाणिका आदि	

प्रश्न-13 : ग्रन्थालय के प्रक्रियाकरण विभाग (Processing Section) में पुस्तकों को उपयोग हेतु तैयार करने के लिए क्या-क्या कार्य निष्पादित किये जाते हैं? समझाइये।

ग्रन्थ ग्रन्थालयों में उपयोग हेतु ही संग्रहीत किये जाते हैं लेकिन ग्रन्थों को उपयोग हेतु तैयार करने के लिए अनेक प्रक्रियाएँ सम्पन्न करनी पड़ती हैं ये समस्त प्रक्रियाएँ ग्रन्थ प्रस्तुतीकरण कार्य (Processing Work) कहलाती हैं। ग्रन्थ प्रस्तुतीकरण कार्य ग्रन्थालय के **प्रक्रियाकरण विभाग** में सम्पन्न किया जाता है जिसे **तकनीकि विभाग** भी कहा जाता है। ग्रन्थ से सम्बन्धित सभी तकनीकि कार्यों को सम्पन्न करने के पश्चात ही ग्रन्थ उपयोग हेतु तैयार हो पाते हैं। इस विभाग में ग्रन्थ से सम्बन्धित निम्न कार्य सम्पन्न किए जाते हैं

1. वर्गीकरण कार्य (Classification Work) — प्रक्रियाकरण विभाग का सर्वप्रथम कार्य ग्रन्थों का वर्गीकरण करना है। वर्गीकरण के माध्यम से प्रत्येक विषय के ग्रन्थों में एक क्रम व्यवस्था स्थापित की जा सकती है। ग्रन्थों को वर्गीकरण करने की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं उनमें से किसी एक उपयोगी वर्गीकरण पद्धति का उपयोग ग्रन्थालय अपनी आवश्यकता

के आधार पर कर सकता है। वर्गीकरण कार्य करने हेतु निम्न प्रक्रिया अपनाई जाती है –

(अ) सर्वप्रथम वर्गीकार ग्रन्थ का विषय निर्धारित करता है।

(ब) विषय के अनुसार वर्गीकरण पद्धति के माध्यम से वर्ग संख्या प्रदान करता है।

(स) ग्रन्थ को ग्रन्थ संख्या प्रदान करता है।

2. प्रसूचीकरण कार्य (Cataloguing Work) – ग्रन्थों का वर्गीकरण करने के पश्चात प्रसूचीकरण कार्य किया जाता है अर्थात् प्रसूची निर्मित की जाती है। प्रसूचीकरण में ग्रंथ से संबन्धित सम्भावित संलेख निर्मित करना होता है जो पाठकों की विविध माँगों को सन्तुष्ट करने के लिए निर्मित की जाती हैं। इस प्रकार प्रसूची पाठक की सहायता उसकी वान्छित पुस्तक ढूंढने में करती है इसलिए ग्रन्थालयों में प्रसूचीकरण का विशेष महत्व होता है इसलिए प्रत्येक ग्रन्थ का प्रसूचीकरण करना आवश्यक होता है। प्रसूचीकरण करने की भी अनेक पद्धतियां हैं। ग्रन्थालय की आवश्यकता एवम् उपयोगिता के अनुसार ही किसी भी प्रसूचीकरण पद्धति को अपनाया जा सकता है। प्रसूची के बाह्य स्वरूप हेतु पत्रक स्वरूप को अधिक उपयोगी माना जाता है। प्रसूचीकरण कार्य में निम्न प्रक्रिया अपनाई जाती है –

(अ) सम्भावित संलेखों का निर्माण।

(ब) संलेखों का व्यवस्थापन।

(स) प्रसूची के उपयोग में सहायता करने हेतु प्रसूची गाइडों का प्रावधान करना।

3. अन्य तकनीकि कार्य (Other technical Work) – ग्रन्थों का वर्गीकरण एवम् प्रसूचीकरण करने के पश्चात ग्रन्थों को उपयोग हेतु तैयार करने के लिए अन्य तकनीकि कार्य भी सम्पन्न करने होते हैं जिनसे ग्रन्थों का व्यवस्थापन करने, खोजने एवम् आदान-प्रदान में सहायता प्राप्त होती है। इसके लिए ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर कई प्रकार के लेबिल्स लगाने होते हैं तथा ग्रन्थ से सम्बन्धित कई प्रकार के कार्ड्स भी तैयार करने पड़ते हैं।

(अ) लेबिल लगाना (Lebelling work) – प्रत्येक ग्रन्थ पर कुछ लेबिल्स चिपकाये जाते हैं जैसे Authority Slip, Date Slip, Book Card, Pocket आदि।

(ब) परिग्रहण संख्या की मोहर – उपरोक्त लेबिलों को चिपकाने के बाद पुस्तक के कई पृष्ठों पर परिग्रहण संख्या सम्बन्धी मोहर लगाई जाती है जो पुस्तक की प्रामाणिकता सिद्ध करती है। इस मोहर में ग्रन्थालय का नाम तथा पुस्तक की परिग्रहण संख्या अंकित की जाती है।

(स) ग्रन्थ की स्पाइन पर क्रामक संख्या लिखना – स्पाइन कागज की बनी हुई एक गोल पट्टी होती है जो ग्रन्थ के जिन्दबन्दी वाले भाग पर नीचे की ओर चिपकाई जाती है। जहाँ पर चिपकाई जाती है वह ग्रन्थ का वह भाग होता है जो निधानियों पर व्यवस्थित ग्रन्थों में दिखाई देता है। स्पाइन पर ग्रन्थ की वर्ग संख्या तथा ग्रन्थ संख्या अंकित की जाती है। स्पाइन पर लिखी वर्ग संख्या से ही ग्रन्थ की पहचान की जाती है।

(द) गुप्त पृष्ठ (Secret Page) – प्रत्येक ग्रन्थालय अपने ग्रन्थों हेतु कोई एक गुप्त पृष्ठ निर्धारित कर लेता है जिस पर बिलकुल न दिखाई देने वाले स्थान सिलाई के पास ही ग्रन्थ की परिग्रहण संख्या लिखी जाती है। इस परिग्रहण संख्या को सामान्यतया कोई भी व्यक्ति नहीं

देख पाता है। ग्रन्थ के गुम होने पर और उसके पुनः प्राप्त होने पर गुप्त पृष्ठ से ही ग्रन्थ की पहचान होती है

(य) **लेखन कार्य (Writing work)** – इसके अतिरिक्त ग्रन्थ में अनेक स्थानों पर ग्रन्थ की परिग्रहण संख्या, क्रामक संख्या आदि भी लिखी जाती हैं जिन्हें लिखने का कार्य ऐसे व्यक्ति को देना चाहिए जिसका लेख सुन्दर एवम् आकर्षक हो।

(र) **प्रसूची पत्रकों का व्यवस्थापन** – ग्रन्थ से सम्बन्धित जितने भी संलेख पत्रक तैयार किये गए हैं उनका प्रसूची की दराजों में व्यवस्थापन करना भी इसी विभाग का कार्य है। सम्बन्धित कर्मचारी को प्रसूची पत्रकों के व्यवस्थापन प्रक्रिया में प्रशिक्षित होना आवश्यक है।

(य) **ग्रन्थों का व्यवस्थापन** – ग्रन्थों का समस्त कार्य समाप्त हो जाने के बाद इन्हें निधानियों पर सज्जित करने का कार्य भी इसी विभाग का कार्य है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस विभाग में उपरोक्त सभी प्रक्रियाओं से गुजरने के बाद ग्रन्थ उपयोग हेतु तैयार हो जाते हैं।

प्रश्न-14 : ग्रन्थ आदान-प्रदान की विधियों का नामोल्लेख करते हुए किसी एक विधि को उसके गुण-दोषों सहित विवेचना कीजिए।

ग्रन्थालयों में ग्रन्थालय के पंजीकृत पाठकों को घर पर पढ़ने हेतु प्रदान करने तथा उन्हें ग्रन्थालय में वापस करने की प्रक्रिया को **आदान-प्रदान प्रक्रिया** कहते हैं। आदान-प्रदान की अनेक विधियाँ होती हैं जिनमें से पाठकों की संख्या के आधार पर आदान-प्रदान कार्य करने हेतु उपयुक्त विधि का चयन कर उपयोग में लाया जाता है। ग्रन्थालय अपनी आवश्यकता के अनुसार अलग प्रकार की विधि का चयन करता है। ग्रन्थालयों में आदान-प्रदान करने की मुख्य विधियाँ निम्न होती हैं –

1. रजिस्टर पद्धति (Register System)
   - (अ) दैनिक पुस्तक पद्धति (Day Book Method)
   - (ब) खाताबही पद्धति (Ladger Method)
2. अस्थायी पर्ची पद्धति (Temporary Slip System)
3. डमी पद्धति (Dummy System)
4. पत्रक पद्धति (Card System)
   - (अ) एक पत्रक विधि (One Card Method)
   - (ब) न्यूआर्क विधि (Newark Method)
   - (स) ब्राउने विधि (Browne Method)
5. टोकन पद्धति (Token System)
6. डेट्राइट स्व-निर्गम पद्धति (Detroit Self-Charging System)

उपरोक्त सभी पद्धोतियों में **न्यूआर्क विधि** एवम् **ब्राउने विधि** अत्यन्त लोकप्रिय पद्धतियाँ हैं जो अधिकांश ग्रन्थालयों में उपयोग में लाई जाती हैं। हम यहाँ न्यूआर्क विधि का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

न्यूआर्क विधि (Newark System) – इस विधि का आविष्कार सन् 1900 में अमेरिका के न्यूआर्क सार्वजनिक ग्रन्थालय में हुआ था। अमेरिका तथा भारत के असंख्य ग्रन्थालयों में इस विधि को अपनाया जाता है। इस विधि में पाठक को एक **रीडर कार्ड** (Reader's Card) दिया जाता है जिसमें उक्त पाठक का पूर्ण विवरण अंकित होता है तथा पुस्तक के विवरण से सम्बन्धित एक बुक कार्ड (Book Card) उपयोग में लाया जाता है।

जिला सार्वजनिक ग्रन्थालय, आगरा			
क्रामक संख्या : 330.1 J31P 13671			
अर्थशास्त्र के सिद्धान्त : के. पी. जैन			
पाठक की सदस्य सं.	देय दिनांक	प्राप्ति दिनांक	पाठक के हस्ताक्षर

बुक कार्ड

जिला सार्वजनिक ग्रन्थालय, आगरा			
राम लाल शुक्ला सदस्य संख्या - 567			
पता : शाहगंज, आगरा			
(इस कार्ड पर तीन पुस्तकें प्राप्य हैं)			
देय दिनांक	कर्मचारी के हस्ताक्षर	प्राप्ति दिनांक	कर्मचारी के हस्ताक्षर

रीडर कार्ड

आदान-प्रदान की प्रक्रिया विधि (Procedure) :

इस विधि में कर्मचारी द्वारा पुस्तक पाठक को देते समय, पाठक से Reader Card लेकर उसमें दिनांक डालकर हस्ताक्षर कर दिये जाते हैं तथा उस Reader Card को पाठक को ही वापस कर दिया जाता है तथा पुस्तक के पीछे लगी Date Slip पर भी दिनांक डालकर हस्ताक्षर कर दिये जाते है। उसके बाद पुस्तक के Book Card को निकालकर जो पुस्तक के पीछे पॉकेट में लगा रहता है उसमें पाठक की पंजीकरण संख्या तथा देय दिनांक डालकर पाठक से हस्ताक्षर कराकर वापस ले लिया जाता है जिसे लकड़ी की बनी दराज में दिनांक वार (Date wise) व्यवस्थित कर दिया जाता है। पुस्तक जब वापस पाठक लाता है तो उस समय कर्मचारी पाठक के Reader Card में वापिसी दिनांक डालकर हस्ताक्षर कर देता है और दराज में से Book Card निकालकर वापसी दिनांक डालकर हस्ताक्षर कर देता तथा वापी पुस्तक की पाकेट में लगा देता है। उसके पश्चात पुस्तक अपने स्थान पर निधानियों में लेखक अंक के अनुसार व्यवस्थित कर दी जाती है।

इस पद्धति में पाठक को Reader Card उपलब्ध कराया जाता है। इस का कोई विशेष आकार नही होता है। इसका कागज सुदृढ़ होता है तथा इसमें नियमानुसार कालम मुद्रित कराये जाते हैं। प्रत्येक पुस्तक के लिए एक बुक कार्ड मुद्रित करा लिया जाता है यह बुक कार्ड पुस्तक के पीछे पॉकेट में लगा रहता है।

Slip पर पड़ी तिथियों से हिसाब लगाकर कर ली जाती है।

7. प्रदत्त पुस्तकों का सांख्यिकीय विवरण कम से कम समय में सरलतापूर्वक तैयार किया जा सकता है तथा किसी अमुक दिन में प्रदान की गई पुस्तकों की संख्या बड़ी सरलता से ज्ञात की जा सकती है।

दोष (**Demerits**) – इस पद्धति के लाभ के साथ-साथ कुछ दोष भी हैं –

1. पाठक के रीडर कार्ड लाये बिना आदान असम्भव होता है।
2. पुस्तक के उपयोग करने का कोई निश्चित अभिलेख नहीं रहता है। इसमें न तो यह ज्ञात हो सकता है कि किसी अमुक ग्रन्थ को कितने पाठकों ने पढ़ा है और न यह ज्ञात होता है कि किसी अमुक पाठक ने कौन-कौन से ग्रन्थ पढ़े हैं।
3. इस पद्धति में प्रत्येक कार्ड पर केवल एक पुस्तक ही प्रदान की जाती है इसलिए पाठक को उतने ही Reader Cards प्रदान किए जाते हैं जितनी पुस्तकें पाठक ग्रन्थालय से लेने का अधिकारी होता है।
4. पाठक के पास पुस्तक के अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा अभिलेख नही होता है जो यह बता सके कि उसके पास ग्रन्थालय की कितनी पुस्तकें है तथा उनको कब-कब वापस करना है।

प्रश्न-16 : ग्रन्थालयों में पुस्तकों का अभिगम प्राप्त करने की बंद प्रणाली तथा खुली प्रणाली की उनके गुण एवम् दोषों सहित विवेचना कीजिए ।

भारत में ग्रन्थालय विज्ञान के जनक डॉ. रंगनाथन् ने ग्रन्थ विज्ञान के 5 मूल नियमों में एक नियम ग्रन्थालय के पाठकों का समय बचाने के लिए दिया था जिसमें उन्होंने कहा था कि ग्रन्थालय के पाठकों के पास समय का अभाव होता है और उनका समय अत्यधिक मूल्यवान है इसलिए वे यदि ग्रन्थालयों में अपनी वान्छित पुस्तक प्राप्त करने हेतु आते हैं तो अधिक देर तक अपनी व्यस्तता के कारण वे इन्तजार नहीं कर सकते हैं इसलिए उन्हें सही ढंग से त्वरित गति से सेवा प्रदान की जानी चाहिए। इसलिए पाठकों के समय को अमूल्य मानते हुए डॉ. रंगनाथन् ने ग्रन्थालयों में ऐसे अनेक प्रावधान एवम् उपाय करने का सुझाव दिया है जिनमें से एक ग्रन्थालयों में परम्परा से चली आ रही पुस्तकों को **बन्द निधानियों** (Shelves) में रखने की अपेक्षा **खुली व्यवस्था** में रखने पर जोर दिया है।

1. ग्रन्थों की बंद व्यवस्था (Closed Access System) — पहले ग्रन्थालयों का उद्देश्य ग्रन्थों की सुरक्षा एवम् संरक्षण करना मात्र होता था इसलिए इस दृष्टि से ग्रन्थ बंद आलमारियों में ताला लगाकर रखे जाते थे जिससे उनसे कोई भी छेड़-छाड़ न कर सके। इसी व्यवस्था को ग्रन्थों की **बंद प्रणाली** कहते हैं। इस व्यवस्था में कोई भी पाठक अपनी वान्छित पुस्तक प्राप्त करने में अत्यन्त असुविधा का अनुभव करता था और उनका अमूल्य समय भी व्यर्थ नष्ट होता था। जिन ग्रन्थालयों में ग्रन्थों को बंद प्रणाली में रखा जाता है वहाँ पाठकों को उन तक पहुँचने की अनुमति नहीं होती है तथा वहाँ पुस्तक प्राप्त करने की प्रक्रिया भी अत्यन्त जटिल होती है। सबसे पहले पाठक को अपनी वान्छित पुस्तकों की एक सूची ग्रन्थालय प्रसूची से देखकर बनानी पड़ती है तथा उस सूची को आदान-प्रदान पटल पर कार्यरत कर्मचारी को देना होता है तथा उसके बाद उसे इन्तजार करना पड़ता है। वह कर्मचारी माँगी गयी पुस्तकों में से मात्र कुछ ही खोजकर लाता है तथा अन्य के लिए उसका उत्तर यह होता है कि ग्रन्थागार में उपलब्ध नहीं है। शेष पुस्तकों को प्राप्त करने के लिए पाठका को फिर प्रसूची से खोजकर दूसरी सूची बनानी पड़ती है और उसे पुनः इन्तजार करना पड़ता है जिस प्रकार पहले किया था। यह प्रयास एवम् त्रुटि (**Trial and error**) वाली प्रक्रिया उसे कई बार करनी पड़ सकती है फिर भी उसकी माँग की पूर्ति पूर्णरूप से सन्तुष्ट नहीं हो पाती है। इस प्रकार इस प्रणाली में पाठकों का समय अत्यधिक नष्ट होता है जो रंगनाथन् के मूल नियमों का विरोध करता नजर आता है। बंद प्रणाली की समय वाली कठिनाईयों को दूर करने के लिए ही आज अधिकांश ग्रन्थालयों में खुली प्रणाली उपयोग में लायी जा रही है।

2. ग्रन्थों की खुली व्यवस्था (Open Access System) — जैसा कि इस प्रणाली का नाम है इसमें ग्रन्थों की व्यवस्था खुली निधानियों में की जाती है तथा प्रत्येक पाठक को ग्रन्थागार (**Stack Room**) में व्यवस्थित निधानियों के पास जाने की पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। वहाँ कोई अवरोध नहीं होता है जिससे वे अपनी वान्छित पुस्तक को स्वयं खोज सकें एवम् शीघ्र प्राप्त कर सकें। खुली निधानियों में पुस्तकें वर्गीकरण योजना के अनुसार क्रम से व्यवस्थित होती हैं। जिससे पाठक को अपने विषय अभिरुचि से सम्बन्धित समस्त पुस्तकें एक स्थान पर मिल जाती हैं और वह अपनी उपयोगी पुस्तकों को खोज लेता है और उसका समय भी अधिक नष्ट नहीं होता है इसके साथ ही उसे अन्य पुस्तकों का भी ज्ञान हो जाता है।

ग्रन्थालयों में खुली प्रणाली को पूर्ण अनुरूपता के साथ क्रियान्वित करने के लिए ग्रन्थालय के कर्मचारियों तथा पाठकों के कुछ निश्चित कर्त्तव्य एवम् उत्तरदायित्व हैं जिनका पूर्ण पालन करना चाहिए। कर्मचारियों का सबसे मुख्य उत्तरदायित्व यह है कि ग्रन्थों को किसी वर्गीकृत व्यवस्था के अनुसार व्यवस्थित करना चाहिए। इस वर्गीकृत व्यवस्था में विषयों के मध्य पूर्ण उचित सम्बन्ध के अनुसार पुस्तकों को व्यवस्थित किया जाता है तथा इस व्यवस्था का पालन भी सही ढंग से करना चाहिए। निधानियों से यदि कोई पुस्तक निकाली जाय तो उसे यदि पुनः व्यवस्थित करना है तो उसे उसके उचित स्थान पर ही व्यवस्थित करना चाहिए। यह कार्य कर्मचारियों को नियमित रूप से करना चाहिए ऐसा न हो कि निधानियों में पुस्तकों को अनुचित ढंग से व्यवस्थित नहीं किया जाय। इसके साथ ही पाठकों की सहायता करने हेतु ग्रन्थागार (Stack Room) में निधानियों के मध्य पथ-प्रदर्शक (Shelves Guides) तथा अन्य मार्ग-दर्शक (Way Guides) आदि का भी प्रावधान करना चाहिए जो पाठकों को वान्छित पुस्तक के पास पहुँचने में सहायता कर सकें। कर्मचारियों के साथ-साथ ग्रन्थालय में खुली प्रणाली को क्रियान्वित करने में पाठकों के भी कुछ कर्त्तव्य एवम् उत्तरदायित्व हैं उनकी समझ अवश्य होनी चाहिए। जो पुस्तक उन्होंने जिस स्थान से निकाली है उसी स्थान पर उसे रखना चाहिए। किसी प्रलोभनवश किसी पुस्तक को उसके उचित स्थान से अन्यत्र रखना, उसको किसी प्रकार की क्षति पहुँचाना अथवा किसी ऐसी गतिविधि में लिप्त नहीं होना चाहिए जिससे पुस्तकों को किसी भी प्रकार की हानि के साथ-साथ उनकी व्यवस्था में कोई अव्यवस्था हो।

इसलिए ग्रन्थालयों में यदि खुली व्यवस्था उपयुक्त एवम् क्रमिक ढंग से अभ्यास में लायी जाये तो इससे होने वाली हानियों की अपेक्षा लाभ अधिक प्राप्त होते हैं जो ग्रन्थालय विज्ञान के तृतीय एवम् चतुर्थ नियम का पूर्ण रूप से परिपालन करने में सहायक होते हैं। इसके लाभ निम्न हैं –

1. पाठक जब चाहे तब ग्रन्थगार में स्वतंत्र रूप से प्रवेश करने का अधिकारी होता है।
2. पाठकों के अमूल्य समय की बचत होती है जो बंद प्रणाली में कभी अत्यधिक नष्ट होता था।
3. इस व्यवस्था में पाठकों को अपनी वान्छित पुस्तकों के साथ-साथ ग्रन्थालय की अन्य पुस्तकों का भी ज्ञान प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होता है जिससे वे भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर उनका उपयोग कर सकते हैं ।
4. इस व्यवस्था में पाठकों को अपने विषय की पुस्तकों के साथ-साथ अन्य सम्बन्धित विषय की पुस्तकों का भी ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न-17 : ग्रन्थालयों में भण्डार-सत्यापन से आपका क्या अभिप्राय है? समझाइये। इससे क्या लाभ प्राप्त होते हैं? विवेचना कीजिए।

भण्डार सत्यापन से आशय भण्डार के अभिलेखों के अनुसार वस्तुओं को भौतिक रूप से देखकर सत्यापन करने से होता है। बड़े-बड़े व्यापारिक एवम् औद्योगिक संस्थानों में भण्डार सत्यापन करना एक सामान्य बात है जहाँ भण्डार सत्यापन से इस बात की जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है कि कितना उत्पादन बिक चुका है और कितना अभी शेष है जिससे कि भविष्य में निश्चित मात्रा में उत्पादन किया जाय। इन संस्थानों की भाँति ग्रन्थालयों में भी पाठ्य-सामग्री का भण्डार सत्यापन करना बहुत आवश्यक है इससे ग्रंथालय में ग्रंथों एवम् पाठ्य-सामग्री की स्थितियों का पता चल जाता है कि इस वर्ष में कितने ग्रन्थ गुम हो गये हैं, कितने जीर्ण-शीर्ण हो गये हैं आदि। आज सामान्यतया सभी ग्रन्थालयों में मुक्त प्रवेश व्यवस्था लागू होती है जिसके कारण ग्रन्थों का चोरी होना, पृष्ठ फाड़कर जीर्ण-शीर्ण करना आदि सम्भव होता है। अतः इन्ही तथ्यों की जानकारी करने के लिए प्रत्येक ग्रन्थालय में **वार्षिक भण्डार सत्यापन** करना आवश्यक है।

परिभाषा (Definition) :

Stock definition is the process of taking stock by checking records of books processed with copies on the shelves or records of books on loan.

—L.M. Harrod

भण्डार सत्यापन किसका किया जाये ?

अब प्रश्न उठता है कि ग्रन्थालयों में भण्डार सत्यापन किसका किया जाय। वैसे तो ग्रन्थालयों में भण्डार सत्यापन कार्य का प्रमुख उद्देश्य ग्रन्थों एवम् अन्य पठनीय सामग्री का सत्यापन करना होता है लेकिन साथ में अन्य वस्तुओं का भी भण्डार सत्यापन कर लिया जा सकता है। वास्तव में जो वस्तुएँ ग्रन्थालय में स्थायी एवम् भौतिक रूप से रहती हैं उनका सत्यापन किया जाना चाहिए जैसे – ग्रन्थ एवम् अन्य पठनीय समस्त सामग्री, टाइप मशीन,

आलमारियाँ, मेज-कुर्सियाँ, बिजली के पंखे तथा अन्य बहुमूल्य फर्नीचर आदि। लेकिन जो वस्तुएँ उपभोग्य हैं जो स्थायी नहीं हैं तथा उपभोग करने पर जिनका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है उनका भण्डार सत्यापन नही किया जा सकता है जैसे कि पेन्सिल एक उपभोग वस्तु है जो स्थायी नही है। लेकिन इन सभी के अतिरिक्त ग्रन्थालयों के सन्दर्भ में भण्डार सत्यापन वास्तविक रूप से ग्रन्थों एवम् पत्रिकाओं का ही किया जाना आवश्यक एवम् महत्वपूर्ण है जो प्रत्येक ग्रन्थालय में प्रतिवर्ष अवश्य किया जाना चाहिए।

भण्डार सत्यापन से लाभ (Merits From Stock Verfication) :

प्रतिवर्ष भण्डार सत्यापन से ग्रन्थालयों में निम्न लाभ प्राप्त होते हैं –

1. ग्रन्थालय के भण्डार में कितनी पुस्तकें हैं इसका सही-सही सत्यापन से ज्ञान हो जाता है।
2. इससे वर्ष भर में जो भी पुस्तकें गुम हो गई हैं उनकी पूरी संख्या ज्ञात हो जाती है जिससे इन पुस्तकों के स्थान पर इनकी नवीन प्रतियाँ मँगाकर क्षतिपूर्ति की जा सकती है।
3. इससे जीर्ण-शीर्ण पुस्तकों का भी ज्ञान हो जाता है अतः उनकी जिल्दबन्दी करके उनकी हालत को सुधारा जा सकता है।
4. इससे उन पुस्तकों का ज्ञान हो जाता है जो बिल्कुल ही खराब या नष्ट हो चुकी हैं और उनका उपयोग करना भी सम्भव नही है अतः ऐसी पुस्तकों को भण्डार से अलग करने की व्यवस्था की जाती है तथा अधिकारियों द्वारा उन्हें भण्डार के अभिलेखों से Written off (Withdrawl) कराने की व्यवस्था की जा सकती है।
5. इससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि कौन-कौन सी पुस्तकें कभी भी किसी पाठक ने नहीं प्राप्त की हैं अतः ऐसी पुस्तकों का कर्मचारियों को नये सिरे से ज्ञान हो जाता है जिससे भविष्य में वे उनको उपयोग में लाने हेतु व्यवस्था करते हैं।
6. चूंकि प्रायः भण्डार सत्यापन प्रतिवर्ष किया जाता है इसलिए इससे प्रतिवर्ष चोरी होने वाली पुस्तकों का प्रतिशत प्रतिवर्ष ज्ञात होता रहता है। अगर गुम होने की प्रवृति में वृद्धि हो रही है तो उसे रोकने के उपाय किए जा सकते हैं।
7. पुस्तकों के मध्य विभिन्न प्रकार के कीट-पतंगे एवम् पुस्तक-शत्रु उत्पन्न हो जाते हैं। भण्डार सत्यापन के माध्यम से इन्हें नष्ट करने में सफलता प्राप्त हो जाती है।
8. भण्डार सत्यापन से सर्वप्रमुख लाभ यह है कि सभी पुस्तकों की सफाई हो जाती है।
9. भण्डार सत्यापन से पुस्तकों की लोकप्रियता के बारे में भी ज्ञान हो जाता है।
10. पुस्तकों के गुम होने में कर्मचारियों की असावधानी एवम् कमियों का भी पता चलता है तथा उन कारणों को समाप्त करने के उपाय किए जाते हैं।

प्रश्न 18 : भण्डार सत्यापन करने की विभिन्न विधियों की संक्षेप में व्याख्या कीजिए ?

भण्डार में भण्डार सत्यापन करने के लिए समय के साथ-साथ अनेक विधियाँ उपयोग में लायी जाती हैं इन विधियों में इनकी कार्य पद्धति के आधार पर निम्न समूहों में विभक्त किया जा सकता है।

प्रश्न-पत्र : चतुर्थ

ग्रन्थालय प्रसूचीकरण (सैद्धान्तिक)
Library Cataloguing (Theory)

प्रश्न-1 : ग्रन्थालय प्रसूची किसे कहते हैं? उसके उद्देश्यों एवम् कार्यों की विवेचना कीजिए ।

ग्रन्थालय प्रसूची ग्रन्थालय का एक महत्वपूर्ण उपकरण होता है जिसे प्रत्येक ग्रन्थालय में उपयोक्ताओं (पाठकों) के उपयोग हेतु निर्मित किया जाता है जिसका उद्देश्य उपयोक्ताओं को ग्रन्थालय की विषय-वस्तु की पहचान करने में सहायता प्रदान करना है। ग्रन्थालय प्रसूची ग्रन्थालय की ज्ञान-सामग्री को पहचानने, खोजने एवम् उपयोक्ताओं तक पहुँचने में उनका मार्गदर्शन करती है इस प्रकार प्रसूची ग्रन्थालय में एक खोज उपकरण के रूप में कार्य करती है। ग्रन्थालय प्रसूची से उपयोक्ता को यह ज्ञात होता है कि ग्रन्थालय में कौन से ग्रन्थ उपलब्ध हैं तथा वे ग्रन्थालय के भण्डारागार में निधानियों (Shelves) पर कहाँ व्यवस्थित हैं तथा उन तक कैसे पहुँचा जा सकता है।

प्रसूची का अभिप्राय एवम् परिभाषा (Meaning and Definition of Catalogue):

अँग्रेजी के **कैटालॉग** शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द कैटालोगोस (Kata logos) से हुई है जिसका अर्थ एक तालिका अथवा वस्तुओं की सम्पूर्ण परिगणना से होता है। वर्तमान में इसका अर्थ वस्तुओं की किसी क्रम में सुनियोजित रूप से व्यवस्थित तालिका अथवा सूची से होता है जिसमें प्रायः ग्रन्थों (Items) का संक्षिप्त विवरण अंकित होता है। ग्रन्थालयों में ग्रन्थ (ज्ञान-सामग्री) विभिन्न भौतिक स्वरूपों में अधिगृहीत की जाती है जिसका उपयोग उपयोक्ताओं द्वारा अपने अध्ययन, अनुसंधान एवम् अन्य उद्देश्यों हेतु किया जाता है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु ग्रन्थालय अपने संग्रह में निहित ग्रन्थों की जानकारी उपयोक्ताओं को प्रदान करने की दृष्टि से सामग्री के भौतिक स्वरूपों का विचार किए बिना अधिगृहीत सम्पूर्ण प्रलेखों के लिए एक सार्वजनिक अभिलेख का निर्माण करता है जिसे **ग्रन्थालय प्रसूची** कहते हैं।

परिभाषाएँ (Definitions) :

1. प्रसूची किसी सामान्य सूची या तालिका से भिन्न होती है क्योंकि इसमें सम्मिलित ग्रन्थों का वर्णानुक्रम या अन्य क्रम में सुसम्बद्ध एवम् सुनियोजित व्यवस्थापन होता है और इसमें ग्रन्थों की पहचान हेतु प्रायः उनका विवरणात्मक या संक्षिप्त विवरण दिया जाता है। — न्यू इँगलिश डिक्शनरी।
2. प्रसूची एक उपकरण है जो पाठकों को ग्रन्थालय में संग्रहीत पाठ्य-सामग्री के सम्बन्ध में सूचना प्रदान करती है। — रंगनाथन्।

3. प्रसूची ग्रन्थालय की पठनीय-सामग्री के विषय में बताने का एक उपकरण है। — जौली।

प्रसूची के उद्देश्य (Aims of Catalogue) :

चार्ल्स अमी कटर ने प्रसूची के उद्देश्यों का विवरण प्रस्तुत करते हुए कहा था कि प्रसूची का उद्देश्य उपयोक्ताओं को यदि किसी ग्रन्थ का लेखक, आख्या अथवा विषय ज्ञात हो तो उसके माध्यम से उपयोक्ता को उक्त ग्रन्थ को प्राप्त करने में सक्षम बनाना है। इसके साथ ही यह भी प्रदर्शित करना है कि उक्त ग्रन्थालय में किसी लेखक विशेष द्वारा रचित कितने ग्रन्थ ग्रन्थालय में उपलब्ध हैं। इसके साथ ही एक विशिष्ट विषय पर कितने ग्रन्थ ग्रन्थालय में उपलब्ध हैं। इस प्रकार प्रसूची का प्रथम उद्देश्य ग्रन्थालय में किसी प्रलेख की उपलब्धता अथवा अनुपलब्धता का ज्ञान कराना है। दूसरा उद्देश्य ग्रन्थालय में उपलब्ध ग्रन्थों को प्रदर्शित करना है तथा तीसरा उद्देश्य विवरणात्मक प्रसूचीकरण से होता है। जहाँ विवरणात्मक प्रसूचीकरण का तात्पर्य संलेखों (प्रविष्टियों) में ग्रन्थों की समस्त विशेषताओं का पूर्णरूप से उल्लेख करना है जिससे किसी ग्रन्थ विशेष को अनेक ग्रन्थों के बीच से अलग से पहचान किया जा सके।

प्रसूची के कार्य (Functions of Catalogue) :

किसी भी ग्रन्थालय में उसकी प्रसूची का अत्यन्त आवश्यक कार्य उपयोक्ताओं को उनका वान्छित प्रलेख उपलब्ध कराना है जो केवल प्रसूची के द्वारा ही सम्भव हो सकता है। **डा. रंगनाथन्** के अनुसार ग्रन्थालय प्रसूची का कार्य ग्रन्थालय विज्ञान के सूत्रों के अनुसार ग्रन्थालय के प्रलेखों का उपयोग कराने में सहायता करना है। **मारग्रेट मान** महोदया ने ग्रन्थालय प्रसूची के निम्न कार्य निर्धारित किऐ थे —

1. ग्रन्थालय में उपलब्ध प्रत्येक प्रलेख के अभिलेख के द्वारा उस प्रलेख को उसके अभीष्ट उपयोक्ता को उपलब्ध कराना है।
2. प्रलेखों से सम्बन्धित लेखक संलेखों को इस प्रकार व्यवस्थित करना जिससे किसी भी लेखक की सभी कृतियाँ एक ही नाम से एक साथ एक स्थान पर उपयोक्ताओं को प्राप्त हो सकें।
3. प्रत्येक प्रलेख और उसके किसी अंश को उस प्रलेख के विशिष्ट विषय के अन्तर्गत उसका अभिलेख प्रस्तुत करना है।
4. प्रलेखों से सम्बन्धित विषय संलेखों को इस प्रकार व्यवस्थित करना जिससे एक प्रकार के विषय एक ही स्थान पर एक साथ एकत्रित हो सकें तथा सम्बन्धित विषय समीपस्थ हो जाए।
5. ग्रन्थालयों में संलेखों के माध्यम से उपयोक्ताओं को एक संलेख से दूसरे संलेख की ओर निर्दिष्ट करना भी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि **ग्रन्थालय प्रसूची** के उद्देश्यों एवम् कार्यों के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि उपयोक्ताओं का अभिगम कोई भी क्यों न हो, ग्रन्थालय प्रसूची उपयोक्ता की विशिष्ट अभिरुचि के प्रलेखों की सूचना अवश्य प्रस्तुत करने का उद्देश्य होने के साथ साथ उसका कार्य भी होना चाहिए।

प्रश्न-2 : ग्रन्थालय प्रसूची में क्या विशेषताएँ होनी चाहिए ? विस्तार से समझाइये।

जिस प्रकार साहित्य समाज का दर्पण होता है ठीक उसी प्रकार किसी ग्रन्थालय की प्रसूची उसका दर्पण होती है। कोई भी ग्रन्थालय प्रसूची के बिना सुचारु रूप से कार्य नही कर सकता है। ग्रन्थालय के प्रत्येक ग्रन्थ का उपयोग प्रसूची पर ही निर्भर करता है। अब प्रश्न उठता है कि प्रसूची में क्या-क्या विशेषताएँ होनी चाहिए जिससे वह उत्तम प्रसूची का कार्य कर सके। ब्रिटिश ग्रन्थालयी **जास्ट** (L.S. Jast) महोदय ने उत्तम प्रसूची की निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया है —

1. संहिता पर आधारित हो (Based on a code) — उत्तम प्रसूची वही कही जा सकती है जो किसी प्रसूची संहिता पर आधारित हो। वर्तमान में ALA, AACR-2 CCC आदि कई प्रसूची संहिताएँ प्रचलित हैं इनमें से संलेख निर्माण हेतु किसी भी एक उपयोगी संहिता का चयन किया जा सकता है।

2. विभिन्न अभिगमों की सन्तुष्टकर्ता (Satisfies different approaches) — ग्रन्थालय के उपयोक्ताओं (पाठकों) के अभिगम विभिन्न हुआ करते हैं अर्थात कोई उपयोक्ता ग्रन्थ को उसकी आख्या से, कोई उसके लेखक के नाम से, कोई सम्पादक के नाम से, कोई उसके विषय आदि के द्वारा माँग करता है। अतः वही प्रसूची उत्तम प्रसूची होती है जो उपयोक्ताओं के इन सभी अभिगमों को सन्तुष्ट कर सकती हो।

3. सर्वाधिक ग्रन्थपरक सूचना (Maximum bibliographical information)— ग्रन्थों के बारे में अधिक से अधिक ग्रन्थपरक सूचना अर्थात विवरण जैसे — लेखक का नाम, ग्रन्थ की आख्या, सहलेखक, प्रकाशन का वर्ष, स्थान तथा फर्म का नाम, पृष्ठों की संख्या, ग्रन्थ का आकार, ग्रन्थमाला आदि का अधिक से अधिक विवरण प्रस्तुत करने वाली प्रसूची उत्तम होती है।

4. अद्यतनता (Upto date) — ग्रन्थालय में नवीन ग्रन्थ आते ही रहते हैं अतः उत्तम प्रसूची वही कहला सकती है जो इन ग्रन्थों की ग्रन्थपरक सूचना शीघ्र से शीघ्र अपने में समाहित कर ले अर्थात आज के दिन तक अद्यतन रहे। अगर प्रसूची अद्यतन नहीं रहती है तो वह नवीन आई हुई ग्रन्थों की सूचना देने में असमर्थ रहेगी इसलिए वह अपने उद्देश्य में असफल हो जायेगी।

5. लचीली (Flexible) — प्रसूची में लचीलापन भी अवश्य होना चाहिए अर्थात आवश्यकता पड़ने पर नवीन ग्रन्थों की सूचनाएँ प्रविष्ट करने तथा जीर्ण-शीर्ण एवम् अनुपयोगी ग्रन्थों की सूचनाएँ निकालने में सक्षम होनी चाहिए। यह उत्तम प्रसूची का आवश्यक गुण है।

6. आकर्षक एवम् टिकाऊ (Attractive and Durable) — सुन्दरता किसी भी वस्तु की उपयोगिता में चार चाँद लगा देती है इसलिए प्रसूची भी देखने में सुन्दर, आकर्षक होनी चाहिए। इसके लिए सुन्दर एवम् सुवाच्य लेखन कार्य होना चाहिए। टिकाऊपन के लिए प्रसूची पत्रकों में प्रयोग किया गया कागज सुदृढ़ तथा पत्रकों को रखने हेतु दराजें तथा केबिनेट भी मजबूत होनी चाहिए।

7. उपयोक्ताओं की पहुँच में (Easy access to the Readers) — उत्तम प्रसूची की यह भी एक विशेषता है कि वह उपयोक्ताओं की पहुँच में हो जिससे वह उन्हें आसानी से सुलभ हो सके। यदि प्रसूची उपयोक्ताओं की पहुँच एवम् दृष्टि से दूर रखी जाती है तो उस प्रसूची का लाभ उपयोक्ता नहीं उठा पायेंगे। यही कारण है कि अच्छे ग्रन्थालय अपनी प्रसूची की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए प्रसूची को प्रवेश द्वार के पास उपयोक्ताओं की पहुँच में व्यवस्थित करते हैं।

8. नियन्त्रित (Controlled) — चूँकि प्रत्येक ग्रन्थ की कम से कम 3, 4 या 5 संलेख प्रसूची में व्यवस्थित करने हेतु तैयार की जाती हैं इसलिए ग्रन्थों की संख्या की अपेक्षा प्रसूची में संलेखों की संख्या में इतने ही गुना वृद्धि होना स्वाभाविक है। ज्यों-ज्यों प्रसूची का आकार बढ़ता जाता है त्यों-त्यों उसके संरक्षण की समस्याओं का जन्म होता जाता है तथा एक समय ऐसी स्थिति आ जाती है जिससे उपयोक्ता उससे अपनी वान्छित सूचना प्राप्त करने में कठिनाई का अनुभव करने लगते हैं। अतः यह आवश्यक है कि प्रसूची में अनावश्यक संलेखों के समावेश को रोककर प्रसूची को सदैव नियन्त्रित रखा जाना चाहिए।

9. मार्गदर्शकों का उपयोग (Use of guides) — चूँकि अधिकांश उपयोक्ता प्रसूची की संरचना, उसमें प्रयुक्त संलेखों आदि से अनभिज्ञ होने के कारण प्रसूची का उपयोग करने में अपने आपको असमर्थ पाते हैं अतः इसके लिए आवश्यक है कि उपयोक्ताओं के मार्गदर्शन हेतु कुछ निर्देशों का उल्लेख किया जाना चाहिए। इसलिए संलेखो के मध्य स्थान-स्थान पर मार्गदर्शन हेतु मार्गदर्शकों (Guides) की व्यवस्था करना अवश्यक है। केबिनेट में व्यवस्थित दराजों (Trays) के ऊपर सामने **लेविल होल्डर्स** लगाने चाहिए। प्रसूची उपयोग करने हेतु समीप ही एक संदर्शिका How to use Catalogue भी रखनी चाहिए।

उपरोक्त गुणों एवम् विशेषताओं को देखते हुए निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि यदि प्रसूची में उपरोक्त सभी व्यवस्थाएँ की जायें तो वह प्रसूची उत्तम ग्रन्थालय प्रसूची कहलाने का अधिकार प्राप्त कर सकती है।

प्रश्न-3 : ग्रन्थालय प्रसूची के बाह्य स्वरूपों (भौतिक स्वरूपों) की संक्षेप में विवेचना कीजिए ?

प्रसूची के अनेक बाह्य स्वरूप (भौतिक स्वरूप) ग्रन्थालयों हेतु प्रचलित हैं। कौन सा बाह्य स्वरूप ग्रन्थालयों में उपयोग किया जाय जो स्वरूप ग्रन्थालय में उपयोक्ताओं हेतु उपयोगी रहे, यह निश्चित करना ग्रन्थालयी का कार्य है इसलिए ग्रन्थालयी को प्रसूची के बाह्य स्वरूपों का ज्ञान होना आवश्यक है। प्रसूची के बाह्य स्वरूपों को अध्ययन की दृष्टि से दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।

(अ) परम्परागत बाह्य-स्वरूप; तथा (ब) गैर-परम्परागत (आधुनिक) बाह्य स्वरूप।

हमारा यहाँ उद्देश्य मात्र परम्परागत बाह्य स्वरूपों का संक्षेप में विवेचन करना है। प्रसूची के परम्परागत **बाह्य-स्वरूप** निम्न होते हैं —

1. रजिस्टर अथवा पुस्तक प्रसूची (Register or Book Catalogue) — परम्परागत रूप से प्रसूची का यही बाह्य स्वरूप प्रचलित है। ग्रन्थालयों में आने वाली पुस्तकों से सम्बन्धित

सूचना को एक रजिस्टर में किसी विशेष नियम के अनुसार लिखते चले जाते हैं। अनेक ग्रन्थालय अपनी इन प्रसूचियों को मुद्रित करवा लेते हैं जिन्हें मुख्य प्रसूची कहते हैं तथा भविष्य में आने वाली पुस्तकों की प्रसूचियाँ पूरक (Supplements) के रूप में प्रकाशित करते हैं जो ग्रन्थालय अपनी प्रसूची को मुद्रित करना चाहते हैं वे ही अधिकतर इसका अनुसरण करते हैं। इस मुद्रित प्रसूची को यदि कोई उपयोक्ता क्रय करना चाहे तो उसे क्रय किया जा सकता है। इँग्लैण्ड तथा अमेरिका के अनेक लंघु ग्रन्थालयों में इस प्रकार की प्रसूचियों को प्रयोग में लाया जाता था तथा इस प्रकार की सर्वप्रथम प्रसूची अमेरिका में **हारवर्ड प्रसूची** के नाम से 1723 में प्रकाशित हुई थी।

गुण एवम् लाभ (Merits) — रजिस्टर अथवा पुस्तक प्रसूची के अनेक गुण एवम् लाभ हैं चूँकि इसका आकार एक पुस्तक अथवा रजिस्टर की भाँति होता है इसलिए उपयोक्ता इससे एवम् इसका उपयोग करने से परिचित होते हैं। एक दृष्टि में एक पृष्ठ की अनेक प्रविष्टियाँ उपयोक्ता के समक्ष आ जाती हैं। आकार में छोटी होने के कारण इसे आसानी से इधर-उधर ले जाया जा सकता है तथा यह स्थान भी कम घेरती है। मुद्रित प्रसूचियाँ ग्रन्थ-चयन के उपकरण के रूप में कार्य करती हैं।

2. शीफ अथवा पुलिन्दा प्रसूची (Sheaf Catalogue) — हम जानते हैं कि शीफ (Sheaf) शब्द का अर्थ कागजों का पुलिन्दा होता है अतः शीफ प्रसूची भी कागजों का पुलिन्दा मात्र ही है। इस प्रकार की प्रसूची में प्रविष्टियों को एक ही समान आकार 8"× 6" अथवा 7"× 5" की चिटकाओं (Slips) पर जो सुदृढ़ कागज की बनी होती हैं हाथ से सुन्दर अक्षरों में लिखा अथवा मशीन से टाइप किया जाता है। इन चिटिकाओं के बाई तरफ कुछ समान दूरी पर दो छिद्र होते हैं और इन छिद्रो में मोटा धागा (Tag) पिरोकर चिटिकाओं को बाँध दिया जाता है। एक चिटिका पर मात्र एक ही पुस्तक का सम्पूर्ण विवरण अंकित किया जाता है तथा सभी चिटिकाओं को गत्ते की अथवा प्लाईवुड की बनी मजबूत फाइल कबरों में ऐसे बाँध दिया जाता है जिस प्रकार बैंकों में ग्राहकों के हिसाब की चिटिकाओं को बाँधा जाता है तथा इन फाइलों को विशेष प्रकार की आलमारी में जिसमें खाने बने होते हैं प्रदर्शित किया जाता है।

रजिस्टर अथवा पुस्तक प्रसूची के दोषों एवम् कठिनाइयों के कारण ही इस प्रकार की प्रसूची का प्रचलन हुआ जिसमें पुस्तक प्रसूची तथा पत्रक प्रसूची दोनों की सुविधाएँ सुलभ हैं। प्रारम्भ में इस प्रकार की प्रसूची का प्रयोग 1876 में हॉलैण्ड में हुआ था तथा इसका रूप अधिक कार्यशील एवम् उपयोगी नहीं था। धीरे-धीरे इस प्रसूची का प्रचलन बढ़ता ही गया। इस प्रसूची का सबसे बड़ा लाभ यह है कि जब कभी नवीन पुस्तक की प्रविष्टि इस प्रसूची में लगानी होती है या जीर्ण-शीर्ण पुस्तक की प्रविष्टि निकालनी होती है तो फाइल को खोलकर उचित स्थान पर उस चिटिका को लगा दिया जाता है अथवा निकाल दिया जाता है।

गुण एवम् लाभ (Merits) — शीफ प्रसूची में जैसा कि ऊपर कहा गया है लचीलापन सबसे अधिक होता है क्योंकि इसमें नवीन आगत पुस्तकों की तथा जीर्ण-शीर्ण पुस्तकों की प्रविष्टियों को बड़ी आसानी से लगाया अथवा निकाला जा सकता है इसलिए यह सदैव अद्यतन भी रहती है तथा पुस्तक की भाँति देखने में सरल होती है तथा इधर से उधर ले जाने में भी चलनशील

है। इस प्रकार की प्रसूची का उपयोग इँग्लैण्ड में कुछ बड़े-बड़े ग्रन्थालयों में अब भी किया जा रहा है पर वास्तव में यह भी छोटे एवम् मध्यम प्रकार के ग्रन्थालयों हेतु अधिक उपयुक्त रहती है।

3. पत्रक प्रसूची (Card Catalogue) — पत्रक प्रसूची का निर्माण अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रामाणिक आकार 12.5 × 7.5 सेमी के सुदृढ़ कागज के पत्रकों पर किया जाता है। इसमें भी एक पत्रक पर पुस्तक की एक ही प्रविष्ट निर्मित की जाती है। इन पत्रकों को एक छड़ में पिरोकर दराजों में व्यवस्थित कर दिया जाता है तथा उन दराजों को एक बड़े केबिनेट में सजाया जाता है। आज तक अपनी विशेषताओं एवम् गुणों के कारण पत्रक प्रसूची ही सर्वाधिक उपयुक्त एवम् उपयोगी है लेकिन कम्प्यूटर के आविष्कार के साथ ही इस प्रसूची का प्रचलन भी धीरे-धीरे कम होता जा रहा है और इसका स्थान अब कम्प्यूटर पठनीय प्रसूची लेती जा रही है। भारत में पत्रक प्रसूची का प्रचलन 20वीं शताब्दी में प्रारम्भ हुआ था। इस प्रसूची में अनेक विशेषताएँ हैं।

गुण एवम् लाभ (Merits) — इस प्रकार की प्रसूची में सभी-पत्रक दराजों में किसी निश्चित व्यवस्था जैसे वर्णक्रम अथवा वर्गीकृत व्यवस्था के अनुसार व्यवस्थित होते हैं इसलिए इसे अवलोकन करने में अधिक कठिनाई उपयोक्ताओं को नहीं होती है। इसका भी सबसे बड़ा गुण इसका लचीलापन है जिसके कारण यह सदैव अद्यतन भी रहती है। चूँकि पत्रक प्रामाणिक आकार एवम् समान आकार के सुदृढ़ कागज के होने के साथ-साथ उन्हें दराजों में छड़ में पिरोकर रखा जाता है इसलिए इस प्रसूची में टिकाऊपन एवम् आकर्षण भी अधिक है।

प्रश्न-4 : प्रसूची के परम्परागत भौतिक स्वरूपों में आपस में क्या अन्तर है ? स्पष्ट कीजिए।

प्रसूची के परम्परागत भौतिक स्वरूप वे होते हैं जो परम्परा से काफी समय से ग्रन्थालयों में प्रयोग किए जा रहे हैं इन में पुस्तक स्वरूप, शीफ स्वरूप एवम् पत्रक स्वरूप प्रमुख हैं। जिनमें अन्तर निम्न प्रकार है —

अन्तर का आधार	पुस्तक प्रसूची	शीफ प्रसूची	पत्रक प्रसूची
1. संरचना (Structure)	पुस्तक प्रसूची एक पंजिका होती है जिसमें ग्रन्थ की प्रविष्टियाँ क्रम से व्यवस्थित की जाती हैं।	शीफ प्रसूची में 8×5" आकार की शीट पर प्रविष्टियाँ निर्मित की जाती हैं।	पत्रक प्रसूची में 5"×3" प्रामाणिक आकार के पत्रकों पर प्रविष्टियाँ निर्मित की जाती हैं।
2. प्रविष्टियाँ (Entries)	एक पृष्ठ पर अनेक ग्रन्थों की प्रविष्टियाँ की जा सकती हैं।	एक शीट पर एक ग्रन्थ की एक प्रविष्टि की जाती है।	एक पत्रक पर ग्रन्थ की केवल एक प्रविष्टि की जाती है।
3. स्थानान्तरण (Transfer)	इसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से लाया ले जाया सकता है।	इसे भी ग्रन्थालय के अन्दर कहीं भी ले जाया जा सकता है।	चूँकि ये पत्रक लकड़ी की एक भारी केबिनेट में व्यवस्थित होते हैं अतः यह कहीं नही ले जाई जा सकती है।
4. अद्यनता (Uptodate)	इसमें किसी भी नवीन ग्रन्थ की प्रविष्टि नहीं की जा सकती है इसलिए यह कभी अद्यतन नहीं हो सकती है।	चूँकि इसमें सभी शीट धागों (Tag) के सहारे पिरोई जाती हैं इसलिए इन्हें खोलकर अद्यतन किया जा सकता है।	इसे अति शीघ्र अद्यतन किया जा सकता है क्योंकि इसमें पत्रकों को आसानी से लगाया या निकाला जा सकता है।
5. एक दृष्टि में	इसमें एक दृष्टि में एक पृष्ठ पर जितनी भी प्रविष्टियाँ हैं देखी जा सकती हैं।	इसमें एक दृष्टि में केवल एक प्रविष्टि देखी जा सकती है।	इसमें भी एक दृष्टि में केवल एक प्रविष्टि देखी जा सकती है।
6. टिकाऊपन (Durability)	चूँकि पंजिका के कागज बहुत पतले एवम् कमजोर होते हैं इसलिए यह अधिक टिकाऊ नहीं रह पाती है।	इसकी शीट मध्यम प्रकार की होती है इसलिए कुछ टिकाऊ होती है।	इसके पत्रक काफी सुदृढ़ कागज के होते हैं इसलिए अधिक टिकाऊ होते हैं।
7. उपयोग (Use)	एक समय में केवल एक उपयोक्ता इसका अवलोकन कर सकता है।	इसमें भी एक समय में केवल एक व्यक्ति ही अवलोकन कर सकता है।	इसे एक समय में एक से अधिक लगभग 4-5 व्यक्ति अवलोकन कर सकते हैं।
8. स्थान (space)	यह केवल एक पंजिका होती है इसलिए ग्रन्थालय का नगण्य कहने योग्य स्थान घेरती है।	यह पंजिका से भारी पुलिन्दानुमा होती है इसलिए यह भी अधिक स्थान नहीं घेरती है।	इसमें अन्य दोनों की अपेक्षा कई गुना अधिक स्थान प्रसूची केबिनेट के लिए आवश्यक है।
9. आधार (Base)	यह किसी भी संहिता पर आधारित नहीं होती है।	यह भी किसी संहिता पर आधारित नहीं होती है।	इसमें पत्रकों को किसी संहिता के आधार पर तैयार किया जाता है।
10. लागत (Cost)	इसका कोई मूल्य नहीं होता है इसका मूल्य एक पंजिका के मूल्य के बराबर है।	यह व्यय साध्य न होकर श्रम साध्य अधिक है तथा कुछ धन शीट क्रय करने में अवश्य होता है।	यह श्रमसाध्य के साथ-साथ अत्यधिक व्ययसाध्य भी है।
11. आवश्यक	इसमें प्रविष्टियाँ	इसमें भी प्रविष्टियाँ	चूँकि इसमें प्रविष्टियाँ किसी

अन्तर का आधार	पुस्तक प्रसूची	शीफ प्रसूची	पत्रक प्रसूची
प्रशिक्षण (Training)	सामान्य रूप से की जाती हैं इसलिए इसे निर्मित करने के लिए प्रशिक्षित व्यक्ति की आवश्यकता नहीं होती है।	सामान्य रूप से ही की जाती हैं इसलिए प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती है।	संहिता के आधार पर की जाती हैं इसलिए गहन प्रशिक्षण आवश्यक होता है।
12. उपयोगिता (Utility)	यह प्रसूची अधिकांश रूप से सार्वजनिक ग्रन्थालयों तथा उन ग्रन्थालयों में उपयोग में लाई जाती है जो इसे मुद्रित कराना चाहते हैं।	यह अधिकतर सचल ग्रन्थालयों में उपयोग में लायी जाती है।	यह सभी प्रकार के ग्रन्थालयों में उपयोग में लाई जाती है।

प्रश्न-5 : प्रारम्भ से लेकर वर्तमान युग तक प्रसूची के विकास की संक्षिप्त रूप से परिपूर्ण विवेचना कीजिए ?

प्रसूची किसी भी ग्रन्थालय का एक अनिवार्य एवम् महत्वपूर्ण उपकरण होता है जिसका उपयोग ग्रन्थालय में संग्रहीत सामग्री में से उपयोक्ता के उपयोग की सामग्री की पहचान एवम् खोज करने में किया जाता है। ग्रन्थालय प्रसूचियों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है तब से लेकर आज तक प्रसूची किस स्थिति में पहुँच चुकी है इसके इतिहास एवम् विकास पर हम संक्षेप में विचार प्रस्तुत कर रहे हैं।

1. आरम्भिक युग (Preliminary Period)—प्रसूची से सम्बन्धित असीरिया-बेबीलोनिया की मिट्टी की पट्टिकाओं से इस बात का संकेत होता है कि प्रसूची किसी न किसी रूप में उपरोक्त सभ्यता में भी उपयोग की जाती थी। इसका समय 668-626 ई.पू. माना जाता है। ये पट्टिकाएँ मुद्रण संदर्शिकाएँ जैसी ही थीं जिनमें आख्या आदि सम्बन्धी ग्रन्थपरक डेटा खुदे होते थे। ये पट्टिकाएँ साधारण खोज विधियों के रूप में कार्य करती थीं। पट्टिका रूपी प्रसूची का प्रचलन ईसवीं सन् की सात शताब्दियों तक चलता रहा। छठवीं शताब्दी में **केसियोडोरस** संस्थाओं द्वारा प्रस्तुत प्रसिद्ध कृति में उस समय की महत्वपूर्ण व्याख्यात्मक संदर्शिका के साथ विद्युत प्रतिकृति के रूप में कार्य किया। इसके आगे चलकर जाँच सूची संकलित करने के प्रयास हुए। 8वीं शताब्दी की रोमन चर्च को **ग्रेगरी** महान द्वारा दिए गए ग्रन्थों की सूची प्राचीनतम धर्मस्थलों की ग्रन्थालय प्रसूची थी। यह संगमरमर की पट्टिका होती थी जिस पर कुछ ग्रन्थपरक कृतियों के विवरण को अंकित किया गया था। इसी क्रम की अन्य प्रसूची **एलाक्विन** द्वारा पद्य में निर्मित यार्क के मठों की प्रसूची थी जो प्रसिद्ध लेखकों की ग्रन्थसूची थी।

2. जाँच सूची का युग (Inventory Period) — **लुईस पायस** (Louis Pious) जिनका समय (814-840 ई.) था ने एक आदेश के द्वारा उस समय के सभी धर्मस्थलों एवम् चर्चों के लिए उनके द्वारा संग्रहीत समस्त ग्रन्थों की सूची बनाना अनिवार्य कर दिया जो अधिगृहीत

सामग्री की जाँच के लिए उपयोग की गई थी इसीलिए इसे जाँच सूची का नाम दिया गया। अधिग्रहीत सामग्री को बाइबिल, अन्य धार्मिक ग्रन्थों और धर्म निरपेक्ष कार्यों के क्रम में कार्यों के महत्व के अनुसार व्यवस्थित किया गया। जाँच सूची के युग में भी ईसा पूर्व की सूचियों का प्रचलन चलता रहा था।

3. खोज तालिकाओं का युग (Search List Period) — खोज तालिकाओं का युग (1600-1800) माना जाता है। इस समयावधि की सेन्ट मार्टिन्स प्राचोरी ऑफ डोवर, दा सायोन तथा ब्रेटन मोनास्टरी आदि की प्रसूचियाँ के संलेखों में अन्तर्विषयी टिप्पणियाँ, सम्पादकों के नाम, अनुवादक इत्यादि जैसे अतिरिक्त विवरण सम्मिलित किए गए तथा लेखक एवम् अन्य अनुक्रमणिकाएँ प्रदान की गईं। **गेस्नर, ट्रेफलेरस** तथा मान्सेल आदि महान ग्रन्थ सूचीकारों से 16वीं शताब्दी इस क्षेत्र में प्रसिद्ध रही। उल्लेखनीय योगदान **मोन्सेल** का रहा जिसने अँग्रेजी ग्रन्थों की ग्रन्थ सूची प्रकाशित की थी तथा उसमें कुल नामों के द्वारा बने संलेखों के साथ-साथ सम्पादकों, विषय-शीर्षकों के अन्तर्गत निर्मित संलेखों के व्यवस्थापन हेतु वर्णानुक्रमी प्रक्रिया अपनाई थी। समरूप आख्या की विचारधारा भी **मान्सेल** की ही देन है।

4. आधुनिक प्रसूची (Modern Catalogue) — 19वीं शताब्दी तक आते आते प्रसूची को खोज सूची के रूप में माना जाता था। इसके रूप को सुधारने हेतु लेखक, शब्दकोशीय, वर्गीकृत तथा वर्णानुक्रमी-वर्गीकृत प्रसूचियों के सापेक्षिक गुणों पर विशद् विवेचन किये जाने का क्रम जारी हुआ। लेखक तथा आख्या प्रसूचियों का निर्माण किया जाने लगा। लेखक प्रसूची से ही शब्दकोशीय प्रसूची का विकास सम्भव हुआ है। **सोसाइटी ऑफ एन्टीक्वेरीज ऑफ लंदन** की मुद्रित पुस्तकों की 1816 में प्रकाशित सूची को सही अर्थों में प्रथम शब्दकोशीय प्रसूची माना जा सकता है। वर्गीकृत प्रसूची का उदय भी इसी काल में हुआ तथा ज्यों-ज्यों प्रसूची का उद्देश्य स्पष्ट होता गया त्यो-त्यों वर्गीकृत प्रसूची महत्व प्राप्त करती गई। शताब्दी के मध्य में वर्णानुक्रमी-वर्गीकृत प्रसूची ने भी लोकप्रियता प्राप्त की जो वस्तुत शब्दकोशीय तथा वर्गीकृत प्रसूची का मिश्रित रूप होता है। विषय शीर्षकों का चयन करने की प्रक्रिया एवम् संयोजी संरचना के निर्माण की कठिनाई के कारण एक उत्तम पद्धति अपनाने की आवश्यकता अनुभव हुई जिसके लिए मानक विषय शीर्षक तालिकाओं को संकलित करने के प्रयास प्रारम्भ हुए। **एएलए** ने 1895 में शब्दकोशीय प्रसूची के उपयोग हेतु **लिस्ट ऑफ सब्जेक्ट हैडिंग्स** नामक प्रसूची प्रकाशित की जो सभी प्रकार के ग्रन्थालयों हेतु उपयुक्त मानक प्रसूची मानी गई। इसके पश्चात **लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस लिस्ट ऑफ सब्जेक्ट हैडिंग्स** भी प्रकाशित हुई। ये सूचियाँ ग्रन्थपरक उपकरणों के रूप में उपयोगी सिद्ध हुईं और इन्होंने प्रसूचीकरण को भी प्रभावित किया।

5. मशीन-पठनीय प्रसूची (Machine Readable Catalogue) — कम्प्यूटर एवम् सूचना तकनीकियों में विकास के कारण आज मशीन-पठनीय प्रसूची का प्रचलन प्रारम्भ हो चुका है। इस प्रकार की प्रसूची में संलेखों को उन आरूपों में उपकल्पित किया जाता है जो कम्प्यूटर के परिचालन हेतु चुम्बकीय फीते या डिस्कों पर निवेश की आज्ञा प्रदान करते हैं। इसमें प्रसूची संलेखों तक पहुँच ऑनलाइन द्वारा होती है जो मुख्य कम्प्यूटर से सीधी जुड़ी होती है जिसका उपयोग किसी ग्रन्थ की खोज हेतु तुरन्त या किसी भी समय किया जा सकता है। ऑनलाइन

जैसे – प्रसाद की काव्य साधना — डा. बी.के. सिंह
Shakespeare : His works — Edward

लेखक किसी ग्रन्थ का विषय तब बनता है जब उसकी आत्मकथा, जीवन चरित्र, संस्मरण अथवा उसके विषय में आलोचना सम्बन्धी ग्रन्थों का प्रसूचीकरण किया जाता है। जब इन व्यक्तिगत नामों को एक विषय के रूप में लेखक संलेखों के साथ मिला दिया जाता है तब वह प्रसूची **नाम प्रसूची** कहलाती है।

(स) आख्या प्रसूची (Title Catalogue) – आख्या प्रसूची वह होती है जिसमें ग्रन्थों के संलेखों का निर्माण ग्रन्थों की आख्या से करके उन्हें वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है। चूँकि अनेक ग्रन्थ उनके लेखक की अपेक्षा आख्या से अधिक विख्यात होते हैं इसलिए ऐसे ग्रन्थों हेतु आख्या प्रसूची उपयोक्ताओं के लिए अत्यधिक उपादेय रहती है।

(द) विषय प्रसूची (Subject Catalogue) – वर्तमान का उपयोक्ता अपने ग्रन्थ को उसकी आख्या अथवा लेखक की अपेक्षा उसके विषय से माँग करता है क्योंकि उसे अपने से सम्बन्धित समस्त विषय पर ग्रन्थों की आवश्यकता होती है इसलिए उसकी ऐसी आवश्यकता को लेखक, नाम, आख्या प्रसूची पूर्ण नहीं कर सकती हैं। केवल विषय प्रसूची ही उसकी विषय सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति कर सकती है।

(य) सर्वानुवर्णी प्रसूची (Dictionary Catalogue) – सर्वानुवर्णी प्रसूची शब्दकोश की भाँति व्यवस्थित की जाती है इसलिए इसे **शब्दकोशीय** प्रसूची भी कहते हैं। इस प्रकार की प्रसूची में ग्रन्थों के लेखक, आख्या, विषय तथा नाम आदि समस्त प्रसूचियों को एक ही वर्णक्रम में व्यवस्थित कर दिया जाता है। इस प्रकार की प्रसूची अमेरिका में अधिक प्रचलित हुई थी।

2. वर्गीकृत प्रसूची (Classified Catalogue) — वर्गीकृत प्रसूची में जैसा कि इसका नाम है वर्गांक के अनुसार संलेख व्यवस्थित किये जाते हैं। यह प्रसूची विषय प्रसूची का ही एक रूप है। अन्तर केवल इतना है कि विषय प्रसूची में संलेख विषय के अनुसार व्यवस्थित किये जाते हैं जबकि वर्गीकृत प्रसूची में संलेख विषयों के वर्गांक के अनुसार व्यवस्थित किए जाते हैं।

इस प्रसूची की उपादेयता एवम् सफलता वर्गीकरण पद्धति पर अधिक निर्भर करती है जिसके अनुसार ग्रन्थों को वर्गांक प्रदान किए जाते हैं। चूँकि अधिकांश उपयोक्ता वर्गीकरण पद्धति द्वारा ग्रन्थों को प्रदत्त वर्गांक से परिचित नहीं होते हैं इसलिए यह सामान्य उपयोक्ता की पहुँच से बाहर रहती है। इसीलिए यह प्रसूची सार्वजनिक ग्रन्थालयों में उपयोग में नही लायी जाती है अधिकतर शैक्षणिक ग्रन्थालयों में लाई जाती है।

3. वर्णानुक्रमी-वर्गीकृत प्रसूची (Alphabetic-Classed Catalogue) — जैसा कि इस प्रसूची का नाम है यह प्रसूची वर्णानुक्रमी तथा वर्गीकृत प्रसूची दोनों के गुणों से युक्त है तथा वर्णानुक्रमी विषय प्रसूची तथा वर्गीकृत प्रसूची का एक परिष्कृत रूप है। इस प्रकार की प्रसूची में दोनों प्रकार की प्रसूचियों की सुविधा प्रदान की गई है। इसमें पहले ग्रन्थ के विषय का संलेख तैयार किया जाता है तथा इसके पश्चात् उस विषय-शीर्षक को उसके अन्तर्गत आने वाले सभी विषयों को वर्गांक के अनुसार व्यवस्थित किया जाता है।

इस प्रकार की प्रसूची में समस्त ज्ञान को कुछ प्रमुख वर्गों में विभाजित कर लिया जाता

है और उन समस्त प्रमुख वर्गों को वर्णक्रम में व्यवस्थित कर लिया जाता है इसके पश्चात् प्रति वर्ण के उप विभागों को वर्गांक के अनुसार व्यवस्थित कर लेते हैं। इस पूरे व्यवस्थापन को निम्न उदाहरण से आसानी से समझा जा सकता है। मान लो ग्रन्थालय में मात्र ग्रन्थालय विज्ञान से सम्बन्धित ग्रन्थ हैं।

ग्रन्थालय विज्ञान वर्णानुक्रम में	विशिष्ट ग्रन्थालय वर्गांक के अनुसार
23 Academic libraries	261 Children libraries
24 Local libraries	263 Prison libraries
25 Professional libraries	265 Women libraries
26 Specific libraries	268 Blind libraries

उपरोक्त उदाहरण में हम देख रहे हैं कि ग्रन्थालय विज्ञान विषय को वर्णानुक्रम (A, L, P, S प्रथम अक्षर है) में व्यवस्थित किया गया है उसके पश्चात **26 Special libraries** को वर्गांक (261, 263, 265, 268) के अनुसार व्यवस्थित किया गया है। अतः यह वर्णानुक्रमी-वर्गीकृत प्रसूची का उदाहरण है।

प्रश्न-9 : लेखक प्रसूची (Author Catalogue) किसे कहते हैं ? इसके गुण एवम् दोषों की भी व्याख्या कीजिए ?

प्रसूची की आन्तरिक संरचना के आधार पर वर्णानुक्रमी प्रसूची निर्मित की जाती है जिसके प्रकारों में से एक प्रकार **लेखक प्रसूची** होती है। सम्भवतः लेखक प्रसूची ही सर्वाधिक प्राचीन प्रसूचियों के सभी प्रकारों एवम् सम्मिश्रणों का आधार कहा जा सकता है तथा जो सर्वत्र किसी न किसी रूप में प्रचलित है।

लेखक प्रसूची को अन्य सभी प्रसूचियों में प्रमुख एवम् महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है क्योंकि अन्य सभी की अपेक्षा लेखक प्रसूची को उसके लेखक के नाम के आधार पर निश्चित करना अत्यन्त सरल है। उपयोक्ता अपने ग्रन्थ को अधिकांश रूप से उसके लेखक के नाम से ही याद रखते हैं और उसी के नाम से ग्रन्थालयों में ग्रन्थ की माँग करते हैं। इसलिए **लेखक प्रसूची** को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। किसी भी ग्रन्थालय की प्रसूची, लेखक प्रसूची के बिना सम्पूर्ण नहीं मानी जाती है। अतः यही कारण है कि लेखक प्रसूची को ही मुख्य प्रसूची माना जाता है और इसीलिए प्रसूची नियमावलियों (संहिताओं) में इस प्रसूची को प्रमुखता प्रदान की गई है।

परिभाषा (Definitions) :

वर्णानुक्रमी प्रसूची की लेखक प्रसूची वह प्रसूची होती है जिसमें ग्रन्थों के संलेख उनके लेखकों के नाम से वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किए जाते हैं। लेखक प्रसूची की परिभाषा इस प्रकार है - **लेखक प्रसूची किसी संकलन के ग्रन्थों की वह तालिका है जिनमें संलेख मुख्यतया लेखक के नाम से वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किए जाते हैं।** प्रायः लेखकों के नाम दो भागों में विभक्त रहते हैं पहले भाग में लेखक का **कुलनाम** या कोई उपाधि होती है तथा दूसरे भाग में लेखक का **अग्र** नाम होता है। लेखक के अतिरिक्त इस प्रसूची में सम्पादकों तथा अनुवादकों आदि के नाम के शीर्षकों से प्रस्तुत किए गए संलेखों को भी सम्मिलित किया जाता है।

लेखक प्रसूची का स्पष्टीकरण (Explaination of Author Catalogue) :

मान लो किसी ग्रन्थालय में निम्न ग्रन्थ संग्रहीत हैं जिनके लेखकों के नाम से संलेख निर्मित किए जा चुके हैं। इन्हें लेखक के अनुसार इस प्रकार (दायीं ओर लिखे हुए) उनके वर्णानुक्रम के अनुसार व्यवस्थित करेंगे।

Ram Swarup Gupta	Gupta, Ram Swarup
B.B. Jain	Jain, B.B.
Ram Gopal Sharma	Jain, K.P.
K.P. Jain	Ram Babu
B.L. Verma	Sharma, Ram Gopal
Ram Babu	Verma, B.L.

गुण (Merits) — लेखक प्रसूची सर्वाधिक उपयोग की जाने वाली प्रसूची है क्योंकि इसमें निम्न गुण एवम् विशेषताएँ विद्यमान हैं –

1. इस प्रसूची में एक लेखक के अनेक ग्रन्थ एक स्थान पर एकत्रित हो जाते हैं जो विषय अथवा आख्या के अनुसार प्रसूची में इधर-उधर बिखर सकते थे। इससे एक लेखक के समस्त ग्रन्थों का ज्ञान एक स्थान पर एक समय में आसानी से हो जाता है।
2. यह प्रसूची यह बताने में सक्षम होती है कि किसी अमुक लेखक का कोई अमुक ग्रन्थ ग्रन्थालय में उपलब्ध है अथवा नहीं ?
3. इस प्रसूची से ग्रन्थ का समस्त ग्रन्थपरक विवरण ज्ञात हो जाता है।
4. अनेक लेखक ग्रन्थों को अपने अन्य नामों अथवा छद्म नामों से लिखते हैं ऐसे नामों के लिए प्रतिनिर्देशि संलेख बनाकर संकेत किया जाता है
5. अनेक ग्रन्थों के शीर्षक समान होते हैं पर उनके लेखक अलग होते हैं अतः लेखक प्रसूची से ऐसे ग्रन्थों की पहचान की जा सकती है।
6. इस प्रसूची में एक ही आख्या के अनेक ग्रन्थों को पृथक करने में सहायता मिलती है।

दोष (Demerits) — लेखक प्रसूची में अनेक गुणों के होते हुए भी अनेक दोष भी हैं जो निम्न प्रकार हैं –

1. एक लेखक के अनेक रचित ग्रन्थ होते हैं अतः ऐसी स्थिति में ग्रन्थों को लेखक के नाम से याद रखना कठिन होता है।
2. इस प्रसूची का सबसे बड़ा दोष यह है कि लेखक संलेख बनाते समय अनेक बार लेखकों के नामों का वरण करना कठिन हो जाता है और उनमें से संलेख तत्व चयन करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। **जैसे** किसी लेखक का नाम - **हरि गोपाल सिंह राजपूत चौहान निर्मोही**। इसमें लेखक के नाम का संलेख तत्व अभिज्ञान करना अत्यन्त कठिन है।
3. लेखक प्रसूची से उपयोक्ताओं के अन्य अभिगमों जैसे – आख्या, विषय, सहकारक आदि की सन्तुष्टि नहीं हो पाती है।
4. लेखक प्रसूची से प्रत्येक ग्रन्थ का ज्ञान तब तक नहीं हो सकता जब तक कि उपयोक्ताओं को लेखक का नाम ज्ञात न हो अर्थात लेखक का नाम ज्ञात न होने पर अपने ग्रन्थ को निश्चित करना सरल नहीं है।

5. अनेक बार ऐसा होता है कि लेखक के नाम के किस तत्व से संलेख निर्मित किया गया है यह बात उपयोक्ता को ज्ञात नहीं होती है ऐसी अवस्था में उपयोक्ताओं को कठिनाई होती है।
6. किसी भी ग्रन्थालय में आवश्यक रूप से लेखक प्रसूची केवल ग्रन्थालय प्रसूची की आवश्यकता को सम्पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं कर सकती है अतः इसके पूरक के रूप में विषय प्रसूची भी प्रस्तुत करना आवश्यक होता है।

प्रश्न-10 : वर्गीकृत प्रसूची किसे कहते हैं ? इसके कौन से दो भाग होते हैं? समझाइये तथा साथ ही इसके गुणों की भी व्याख्या कीजिए ?

वर्गीकृत प्रसूची डा. रंगनाथन् द्वारा विकसित प्रसूची है जो विषय प्रसूची का ही एक रूप है जिसमें संलेख ग्रन्थ की वर्ग संख्या के अनुसार व्यवस्थित किए जाते हैं। डा रंगनाथन् प्रसूचीकरण के क्षेत्र में वर्गीकृत प्रसूची के ही महान समर्थक रहे थे इसलिए उन्होंने इस ओर ही अधिक ध्यान दिया और यही कारण था कि प्रारम्भ में उन्होंने मात्र वर्गीकृत प्रसूची के लिए ही हर दृष्टिकोण से परिपूर्ण प्रसूचीकरण संहिता का निर्माण किया लेकिन बाद में उन्होंने इसमें सर्वानुवर्णी प्रसूची के लिए भी नियमों को समाहित एवम् विकसित किया था।

ग्रन्थालयों में वर्गीकृत प्रसूची में संलेखों को ग्रन्थों के वर्गांक के आधार पर व्यवस्थित किया जाता है तथा ग्रन्थों के वर्गांक वर्गीकरण पद्धति के आधार पर निर्मित किए जाते हैं। डा. रंगनाथन् ने वर्गीकृत प्रसूची की परिभाषा इस प्रकार की है – **वर्गीकृत प्रसूची वह होती है जिसमें कुछ अंक संलेख तथा कुछ शब्द संलेख होती हैं**। कुछ अन्य विद्वानों ने भी वर्गीकृत प्रसूची की परिभाषाएँ निम्न प्रकार प्रस्तुत की हैं–

1. **वर्गीकृत प्रसूची एक विषय प्रसूची है जिसमें संलेखों को किसी मान्य वर्गीकरण पद्धति के आधार पर व्यवस्थित किया जाता है। व्यवस्थापन के आधार के रूप में अंकन या वर्गीकरण के चिन्हों का प्रयोग किया जाता है। – मारग्रेट मान**
2. **वर्गीकृत प्रसूची में संलेखों का व्यवस्थापन विषयानुसार सुव्यवस्थित क्रम में होता है। यह क्रम सामान्यतः फलकों पर पुस्तकों को व्यवस्थित करने के लिए प्रयुक्त वर्गीकरण पद्धति के अनुरूप होता है। – हेनरी शार्प**

डा. रंगनाथन् की ऊपर प्रस्तुत की गई परिभाषा में यह कहा गया है कि वर्गीकृत प्रसूची में कुछ अंक संलेख जिनके अग्र अनुच्छेद में ग्रन्थ के वर्गांक अंकित होते हैं तथा कुछ शब्द संलेख होती हैं जो ग्रन्थ के विषय-शीर्षकों के अनुसार निर्मित होती हैं। इस प्रकार वर्गीकृत प्रसूची के दो भाग होते हैं वर्गीकृत तथा वर्णानुक्रमी भाग।

1. वर्गीकृत भाग (Classified Part) — यह भाग वर्गीकृत प्रसूची का मुख्य भाग कहलाता है जिसमें ग्रन्थों के संलेखों का व्यवस्थापन वर्गांक के आधार पर होता है जो वर्गीकृत प्रसूची में विषयों के सुनियोजित एवम् संरचनात्मक प्रदर्शन को प्रस्तुत करता है। यह विधि अधीनस्थ एवम् सह-सम्बन्धित विषयों को योजनाबद्ध रूप में प्रस्तुत करती है तथा उन्हें एक तार्किक क्रम में व्यवस्थित करती है। इस भाग में प्रलेखों के मुख्य संलेखों के साथ-साथ प्रतिसंदर्भ संलेखों (CREs) को भी व्यवस्थित किया जाता है क्योंकि उपरोक्त दोनों प्रकार के संलेख वर्गांक के

द्वारा ही निर्मित किये जाते हैं अर्थात इनके अग्र अनुच्छेद में ग्रन्थों के वर्गांक अंकित किए जाते हैं।

2. वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका (Alphabetical Index)— वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका में ग्रन्थों से सम्बन्धित शब्द संलेख (Word Entries) व्यवस्थित किए जाते हैं जिसमें लेखक, विषय, आख्या (यदि हो), सहकारक, ग्रन्थमाला तथा ग्रन्थमाला सम्पादकों आदि के संलेखों को सम्मिलित किया जाता है। इन सभी संलेखों को वर्णक्रम में व्यवस्थित किया जाता है इसलिए इसे वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका कहते हैं। वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका प्रसूची के वर्गीकृत भाग के सहयोग के लिए होती है चूँकि इस प्रसूची के वर्गीकृत भाग में संलेखों को वर्गांक के अनुसार व्यवस्थित किया जाता है जो उपयोक्ताओं के समझ से परे की बात होती है। इसलिए पत्रकों पर वर्गांक अंकित करते समय उपयोक्ताओं हेतु यह आवश्यक है कि उन पर वर्गांक के विभाजनों के साथ समतुल्य शाब्दिक शब्द प्रदान किए जाएँ। वर्गीकृत प्रसूची में वर्गांकों के लिए प्रयुक्त उनके समतुल्य शाब्दिक शब्द को खण्ड शीर्षक (Featured headings) के नाम से जाना जाता है। ये शीर्षक प्रलेखों के वर्गांकों का उनके शाब्दिक समतुल्यों में अनुवाद है जो विषय के विभिन्न पदसोपानिक स्तरों को अभिव्यक्त करते हैं। इन खण्ड शीर्षकों से वर्ग निर्देशि संलेख निर्मित किए जाते हैं। इस प्रकार इस वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका में खण्ड शीर्षकों से निर्मित वर्ग निर्देशि संलेख, समस्त ग्रन्थ निर्देशि संलेख तथा प्रतिसन्दर्भ निर्देशि संलेखों को वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है। इस प्रकार वर्गीकृत प्रसूची का यह वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका वाला भाग सर्वानुवर्णी प्रसूची (Dictionary Catalogue) के सभी कार्यों को पूरा करता है अर्थात एक लेखक की समस्त कृतियों, एक आख्या विशेष के समस्त संस्करणों, विषयों के लिए प्रति संन्दर्भो इत्यादि को एक स्थान पर एक साथ रखती है तथा वर्गीकृत भाग में समस्त सम्बन्धित विषयों को एक साथ रखकर तथा वर्णानुक्रम में बिखरे हुए सम्बन्धित विषयों को एक साथ लाकर वर्गीकृत प्रसूची एक प्रसूची के रूप में समस्त कार्यों की पूर्ति करती है।

वर्गीकृत प्रसूची के गुण (Qualities of a Classified Catalogue) :

वर्गीकृत प्रसूची की उपरोक्त विशेषताओं के उपरान्त भी इसके अन्य कुछ गुण हैं जो निम्न प्रकार हैं –

1. इस प्रसूची का सबसे बड़ा गुण यह है कि यह ग्रन्थालय में उपलब्ध समस्त ग्रन्थों हेतु एक विषयवार गाइड के रूप में कार्य करती है अर्थात एक विषय विशेष और उससे सम्बन्धित सभी विषयों से सम्बन्धित सभी संलेखों को एक साथ एक स्थान पर एकत्रित कर देती है।
2. प्रसूची में संलेखों का व्यवस्थापन ग्रन्थालय में निधानियों पर प्रलेखों के व्यवस्थापन को परिलक्षित करता है।
3. प्रसूची से अपनी वान्छित पुस्तक खोजने हेतु उपयोक्ता को प्रसूची में एक ओर से दूसरी ओर भटकना नहीं पड़ता है।
4. किसी भी असुविधा के बिना प्रसूची को अनेक भागों में मुद्रित किया जा सकता है।
5. यह प्रसूची ग्रन्थालय के संग्रह को प्रदर्शित करने वाले विषयों की समृद्धि एवम् कमी

को एक ही दृष्टि में प्रस्तुत कर देती है।

6. यह प्रसूची विशिष्ट उद्देश्यों हेतु अध्ययन सूची तथा विषय ग्रन्थसूची के संकलन की सुविधा प्रदान करती है।

प्रश्न-11 : सर्वानुवर्णी प्रसूची एवम् वर्गीकृत प्रसूची में क्या अन्तर है समझाइये ?

ग्रन्थालय प्रसूचियों के आन्तरिक स्वरूपों में से सर्वानुवर्णी एवम् वर्गीकृत प्रसूचियाँ सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। सर्वानुवर्णी प्रसूची में लेखक संलेख, विषय संलेख तथा नाम संलेखों को एक ही क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। दूसरी ओर वर्गीकृत प्रसूची वर्गांक के अनुसार व्यवस्थित होती है। यहाँ सर्वानुवर्णी (शब्दकोशीय) तथा वर्गीकृत प्रसूची की विशेषताओं और पक्षों के संदर्भ में इनकी क्षमताओं और सीमाओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

सर्वानुवर्णी प्रसूची (Dictionary Catalogue)— सर्वानुवर्णी प्रसूची को शब्दकोशीय प्रसूची भी कहते हैं। चूँकि यह प्रसूची एक शब्दकोश की भाँति व्यवस्थित होती है इसलिए सभी संलेख एक वर्णानुक्रम में व्यवस्थित होते हैं। इस प्रसूची में चार प्रकार के संलेखों के समुच्चय व्यवस्थित किए जाते हैं तथा प्रत्येक समूह में विभिन्न प्रकार के ग्रन्थपरक तत्व (डेटा तत्व) सम्मिलित होते हैं। इसके प्रथम समूह में लेखक और सहकारक सम्मिलित होते हैं। दूसरे समूह में आख्या संलेखों को तथा तीसरे समूह में विषय संलेखों को सम्मिलित किया जाता है और चौथे समूह में विभिन्न प्रकार के अन्य संदर्भों को सम्मिलित किया जाता है। परन्तु ये सभी समूह एक ही वर्णानुक्रम में व्यवस्थित होते हैं तथा इस प्रसूची के सभी संलेख शब्द संलेख कहलाते हैं।

वर्गीकृत प्रसूची (Classified Catalogue)— वर्गीकृत प्रसूची डा. रंगनाथन् द्वारा प्रतिपादित प्रसूची है जिसमें संलेख वर्गांक के अनुसार व्यवस्थित किए जाते हैं। वर्गीकृत प्रसूची में कुछ संलेख **अंक संलेख** होते हैं जिनमें ग्रन्थ की वर्ग संख्या अग्र अनुच्छेद में अंकित की जाती है तथा कुछ संलेख **शब्द संलेख** होते हैं जिसमें इतर संलेखों को सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार देखते हैं कि वर्गीकृत प्रसूची के दो भाग होते हैं वर्गीकृत भाग तथा वर्णानुक्रमी भाग। वर्णानुक्रमी भाग अनुक्रमणिका का कार्य करता है और इसमें ग्रन्थों के लेखकों, आख्याओं (यदि आवश्यक हो), सहकारकों, विषयों तथा ग्रन्थमालाओं के संलेखों के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के अन्य संदर्भ संलेखों तक को सम्मिलित किया जाता है। इन दोनों में अन्तर निम्न प्रकार है –

तुलनात्मक पक्ष	सर्वानुवर्णी प्रसूची	वर्गीकृत प्रसूची
1. व्यवस्थापन	इस प्रसूची में ग्रन्थों के लेखक, आख्या, विषय, सहकारक आदि संलेखों को एक ही वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है।	इस प्रसूची में संलेखों को दो भाग (1) वर्गीकृत भाग तथा (2) वर्णानुक्रमी भाग में अलग-अलग व्यवस्थित किया जाता है।
2. लेखक तथा	एक ही लेखक की कृतियों, एक ही	लेखकों एवम् कृतियों की सम्बद्धता

तुलनात्मक पक्ष	सर्वानुवर्णी प्रसूची	वर्गीकृत प्रसूची
आख्या संलेखों का सह-सम्बन्ध	कृति के विभिन्न संस्करणों, एक कृति के विभिन्न अनुवादों आदि को एक साथ व्यवस्थित किया जाता है।	का कार्य इस प्रसूची के वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका द्वारा किया जाता है।
3. विषय सह-सम्बद्धता	वर्णानुक्रमी व्यवस्था होने के कारण सम्बन्धित विषय बिखरे रहते हैं परन्तु सन्दर्भ संलेख का प्रावधान होने के कारण इन्हें एक साथ लाया जा सकता है।	इसमें विषयों का सरंचनात्मक एवम् संगठित व्यवस्थापन होता है अतः उन्हें सम्बन्धों के साथ प्रस्तुत करती है।
4. बिखरे हुए सम्बन्धित विषय	इस प्रसूची में बिखरे हुए सभी सम्बन्धित विषयों को एक साथ लाया जा सकता है।	इस प्रसूची की वर्णानुक्रमी अनुक्रमाणिका इस कार्य को करती है।
5. विधियों का प्रावधान	**देखें** एवम् **इसे भी देखें** शीर्षकों के द्वारा विषय सम्बन्धों को साथ रखा जा सकता है।	इस बात का ध्यान इस प्रसूची में वर्गीकृत भाग रखता है।
6. वर्गीकरण से सम्बन्ध	इस प्रसूची में विषय अभिगम सन्तुष्ट किया जाता है पर वह किसी भी वर्गीकरण पद्धति से स्वतंत्र या निरपेक्ष रहता है।	यह प्रसूची पूर्ण रूप से कोलन वर्गीकरण पद्धति पर आधारित है।
7. नवीन विषय संलेख का ऑकलन	इस प्रसूची में नवीन ग्रन्थों के विषय-शीर्षकों को बिना किसी व्यवधान के ऑकलित किया जा सकता है।	इस प्रसूची में नवीन विषयों को उपयुक्त सह-सम्बन्ध वाले विषय के साथ रखा जा सकता है

प्रश्न-12 : संघ-प्रसूची से आशय समझाते हुए संघ प्रसूची से ग्रन्थालयों के उपयोक्ताओं को क्या लाभ होते हैं ? विवेचना कीजिए ?

संघ प्रसूची (Union Catalogue) का आशय किसी क्षेत्र विशेष के ग्रन्थालयों की सम्मिलित प्रसूची से होता है। यह क्षेत्र कोई भी राष्ट्र, राज्य अथवा क्षेत्र विशेष हो सकता है। उपयोक्ताओं तथा सन्दर्भ ग्रन्थालयियों को अन्य ग्रन्थालयों में उपलब्ध वान्छित प्रलेखों की जानकारी प्रदान करने हेतु संघ प्रसूची महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है।

संघ प्रसूची (Union Catalogue) दो शब्दों से मिलकर बना है – संघ (Union) तथा प्रसूची (Catalogue)। इसलिए संघ प्रसूची का सीधा-सा आशय संगठित प्रसूची अर्थात् दो या दो से अधिक ग्रन्थालयों की संगठित प्रसूची से होता है। इस प्रकार संघ प्रसूची किसी क्षेत्र विशेष के अनेक ग्रन्थालयों में संग्रहीत प्रलेखों की वह सूची है जिसे पारस्परिक सहकारिता के आधार पर संकलित किया जाता है। संघ प्रसूची सभी प्रकार के प्रलेखों के लिए बनाई जा सकती है। जैसे – पुस्तकों की, पत्रिकाओं की, फिल्म आदि की।

परिभाषा (Definition) :

दो या दो से अधिक ग्रन्थालयों के सभी ग्रन्थों की प्रसूची जिसमें उन समस्त ग्रन्थालयों

के नाम दिये हों जहाँ उन ग्रन्थों की प्रतियाँ प्राप्त की जा सकें संघ प्रसूची कहलाती है। एक संघ प्रसूची समस्त प्रकार के ग्रन्थों को सम्मिलित कर सकती है अथवा उनमें से किसी एक प्रकार के ग्रन्थों तक भी सीमित रह सकती है। — **रंगनाथन्**

उद्देश्य (Objectives) :

कोई भी ग्रन्थालय ऐसा नहीं है जो अपने उपयोक्ताओं की ग्रन्थ सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं अकेला ही कर सके। इसलिए उक्त ग्रन्थाय को अन्य ग्रन्थालयों के प्रलेखों पर भी निर्भर रहना पड़ता है। अन्य ग्रन्थालयों के प्रलेखों की सूचना उपयोक्तओं को संघ प्रसूची के माध्यम से दी जाती है। इस प्रकार संघ प्रसूची का उद्देश्य उन सभी ग्रन्थालयों में संग्रहीत प्रलेखों के बारे में सूचना उपलब्ध कराना होता है जिन ग्रन्थालयों में वे प्रलेख उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार संघ प्रसूची उन सभी ग्रन्थालयों के प्रलेखों की प्रसूची होती है जहाँ ग्रन्थ उपलब्ध होता है।

लाभ एवम् उपयोगिता (Advantages and Utility) :

ग्रन्थालयों में संघ प्रसूची की सुबिधा प्रदान करने से उपयोक्ताओं को निम्न लाभ प्राप्त होते हैं –

1. संघ प्रसूची से जिस अन्य ग्रन्थालय का नाम ज्ञात होता है उस ग्रन्थालय में उपलब्ध प्रलेखों के बारे में सूचना प्रदान करती है।
2. ग्रन्थालय में उपलब्ध न होने की स्थिति में अन्य ग्रन्थालयों से ग्रन्थों की पूर्ति होने से अर्न्ग्रन्थालय ऋण सेवा को प्रोत्साहन मिलता है जिससे प्रलेखों की खोज करने में लगने वाले समय की बचत होती है। इसलिए संघ प्रसूची समय की बचत करने का एक साधन है।
3. संघ प्रसूची का प्रावधान होने से ग्रन्थालय ऐसे अनावश्यक अथवा बहुमूल्य ग्रन्थों को क्रय किये बिना अपना कार्य चला सकता है जिनकी माँग एवम् आवश्यकता उपयोक्ताओं को कभी-कभार ही होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि संघ प्रसूची अनावश्यक प्रलेख-संग्रह को रोकती है।
4. यदि संघ प्रसूची अनुसंधान पत्रिकाओं से सम्बन्धित है तो संकलित पत्रिकाओं के जीवन में घटित होने वाले सभी परिवर्तनों को सूचित करती है।
5. ग्रन्थालय में जो-जो ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है अर्थात् अनुपलब्ध साहित्य पर प्रकाश डालती है।
6. वांङ्मयसूचियों (Bibliographies) के संकलन तथा प्रतिलिपि के निर्माण कार्यों में यह सहायक सिद्ध होती है।
7. संघ प्रसूची के माध्यम से ग्रन्थालय विशेष में उपलब्ध ग्रन्थों की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।
8. इस प्रसूची के अवलोकन से यह भी ज्ञात होता है कि माँग के अनुसार देश में अथवा अभीष्ट भाषा में किस विषय पर ग्रन्थ प्रकाशित नहीं है।
9. ग्रन्थालय विनिमय कार्यक्रम में संघ प्रसूची से सहायता प्राप्त होती है।

उपरोक्त परिभाषाओं से यही निष्कर्ष निकलता है कि संलेख प्रसूची में ग्रन्थ का एक अभिलेख है तथा यह ग्रन्थ का लिखित प्रमाण होता है। चूँकि संलेख उपयोक्ता के विभिन्न अभिगमों से ग्रन्थ तक पहुँचने में सहायता करती है तथा उधर ग्रन्थ के समस्त विवरण को लिखित रूप में उपयोक्ता के समक्ष प्रस्तुत करती है इसलिए संलेख प्रसूची तथा प्रसूचीकरण का आधार है।

संलेखों का प्रकार (Kinds of Entries) :

ग्रन्थालय यदि उपयोक्ताओं के समस्त अभिगमों को सन्तुष्ट करने का उद्देश्य रखते हैं तो उन्हें प्रति ग्रन्थ अनेक संलेख निर्मित करना आवश्यक होता है क्योंकि ग्रन्थ से सम्बन्धित एक संलेख उपयोक्ताओं के मात्र एक अभिगम को सन्तुष्ट कर सकती है। जबकि प्रसूची से समस्त अभिगमों को सन्तुष्ट करने की अपेक्षा की जाती है इसलिए एक ग्रन्थ से सम्बन्धित अनेक संलेख निर्मित करना आवश्यक होता है। अब यह प्रश्न उठता है कि इनका वर्गीकरण कैसे किया जाये। विभिन्न विद्वानों ने संलेखों का वर्गीकरण भिन्न-भिन्न प्रकार से किया है लेकिन संलेखों से सम्बन्धित सर्वमान्य वर्गीकरण निम्न प्रकार है –

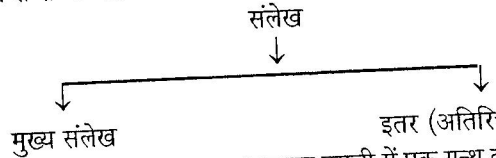

(अ) मुख्य संलेख (Main Entry) – ग्रथालय प्रसूची में एक ग्रन्थ के लिए अनेक संलेख निर्मित करने पड़ते हैं क्योंकि उपयोक्ता एक ग्रन्थ को विभिन्न अभिगमों से खोज कर सकता है जैसे – लेखक अथवा आख्या से अथवा वांन्छित विषय से ग्रन्थों को खोजना। इसलिए ग्रन्थालय प्रसूची में हम अनेक संलेख बनाते हैं। लेकिन मूल संलेख एक ग्रन्थ के विषय में अधिक सूचना (डेटा) प्रदान करता है इस मूल संलेख को **मुख्य संलेख** कहते हैं।

(ब) इतर संलेख (Added Entries) – मुख्य संलेख के अतिरिक्त किसी भी प्रलेख की अन्य जितनी भी संलेख बनना सम्भव हों वे सभी इतर या अतिरिक्त संलेख कहलाती हैं। वैसे तो मुख्य संलेख ही उपयोक्ताओं के अधिकांश अभिगमों को सन्तुष्ट करने की क्षमता रखती है फिर भी उपयोक्ताओं की माँगें भिन्न-भिन्न प्रकार की हो सकती हैं अतः उन उपयोक्ताओं के अन्य अभिगमों को सन्तुष्ट करने के लिए अन्य संलेखों का भी निर्माण किया जाता है जिन्हें **इतर संलेख** (Added Entries) कहते हैं।

इतर संलेख आख्या, विषय, सहलेखक, सम्पादक, अनुवादक, ग्रन्थमाला आदि की होती हैं। सामान्य रूप से मुख्य संलेख के अन्तर्गत ग्रन्थ का सम्पूर्ण विवरण दिया जाता है लेकिन अतिरिक्त संलेखों में केवल उन्हीं डेटाओं (अर्थात सूचनाओं) का उल्लेख किया जाता है जो अत्यन्त आवश्यक होते हैं। डा. रंगनाथन् ने इतर संलेखों से सम्बन्धित कुछ विचार व्यक्त किए हैं जो निम्न प्रकार हैं –

1. किसी भी ग्रन्थ की कम से कम इतर संलेख निर्मित की जानी चाहिए।
2. इन संलेखों में ग्रन्थों का ग्रन्थपरक विवरण कम से कम दिया जाना चाहिए।

3. केवल उतने ही और उन्ही इतर संलेखों का निर्माण किया जाय जो उपयोक्ताओं के लिए नितान्त उपयोगी हों।
4. जो प्रसूची पत्रक इतर संलेखों के निर्माण हेतु प्रयोग किया जाये उसका आकार मुख्य संलेख निर्मित किए जाने वाले पत्रक से छोटा होना चाहिए लेकिन ऐसा होता नहीं है।

प्रश्न-16 : मुख्य संलेख की परिभाषा करते हुए उसके कार्यों की भी व्याख्या कीजिए तथा मुख्य संलेख की संरचना भी समझाइये ?

ग्रन्थालयों में आने वाले उपयोक्ताओं के अनेक-प्रकार के अभिगम होते हैं उनके ये अभिगम उनकी ग्रन्थ से सम्बन्धित माँगों से होते हैं। उनकी ये माँगें, ग्रन्थ की आख्या, ग्रन्थ के लेखक, सहलेखक, सम्पादक अथवा ग्रन्थ के विषय इत्यादि की हो सकती हैं। ग्रन्थालयों में उपयोक्ताओं की इन्हीं विभिन्न प्रकार की माँगों को सन्तुष्ट करने के लिए अनेक संलेखों का निर्माण करना पड़ता है जिनमें एक संलेख मुख्य संलेख होता है जो उपयोक्ताओं के सर्वाधिक अभिगमों को संतुष्ट करने में सहायक होती है। इसी संलेख को **मुख्य संलेख** कहते हैं। इस मुख्य संलेख की सहायता से ही ग्रन्थ से सम्बन्धित अन्य सभी इतर संलेखों का निर्माण होता है जो उपयोक्ताओं के अन्य सभी अभिगमों को संतुष्ट करती हैं।

मुख्य संलेख किसी भी ग्रन्थ की सर्वाधिक महत्वपूर्ण संलेख होती है जो उपयोक्ताओं के सर्वाधिक अभिगमों को सन्तुष्ट करने की क्षमता रखती है। यह संलेख ग्रन्थ से सम्बन्धित पूर्ण ग्रन्थपरक विवरण प्रस्तुत करती है तथा अन्य संलेखों के निर्माण हेतु एक कुंजी का कार्य करती है। चूँकि अधिकतर व्यक्ति किसी भी ग्रन्थ को उसके लेखक के नाम से ही अधिक याद रखते हैं इसलिए मुख्य संलेख अधिकांश रूप के लेखक के नाम के अन्तर्गत ही निर्मित की जाती है। लेकिन कभी-कभी आख्या अथवा सहकारक के नाम के अन्तर्गत भी मुख्य संलेख निर्मित की जाती है।

परिभाषाएँ (Definitions) :

1. यह एक विशिष्ट संलेख होती है जो ग्रन्थ के बारे में महत्तम सूचना देती है। **– सीसीसी।**
2. यह किसी ग्रन्थ का पूर्ण प्रसूची अभिलेख है जो एक संलेख के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। **– एएसीआर।**
3. मुख्य संलेख प्रसूची की प्रमुख संलेख होती है। **– विश्वकोश**

मुख्य संलेख के कार्य (Functions of Main Entry) :

मुख्य संलेख किसी भी ग्रन्थ का एक आधारभूत संलेख है जिसमें ग्रन्थ से सम्बन्धित अधिक से अधिक सूचनाएँ दी जाती हैं। मुख्य संलेख निम्न कार्य निष्पादित कर सकती है–

1. किसी भी ग्रन्थ की मुख्य संलेख ग्रन्थ का सर्वाधिक ग्रन्थात्मक विवरण प्रस्तुत करती है।
2. मुख्य संलेख उन उपयोक्ताओं की सहायता करती है जिन्हें केवल ग्रन्थों के लेखक ही ज्ञात होते हैं।

3. मुख्य संलेख किसी भी लेखक के समस्त ग्रन्थों का ज्ञान करा देती है।
4. यह एक लेखक के समस्त ग्रन्थों के विभिन्न संस्करणों तथा अनुवादों का भी ज्ञान करा देती है।
5. चूँकि जितनी भी इतर संलेख ग्रन्थ की बनना सम्भावित होती हैं उन सभी का उल्लेख संकेत के रूप में मुख्य संलेख के संकेत अनुच्छेद में किया जाता है इसलिए अन्य सभी इतर संलेखों के लिए यह एक कुंजी का कार्य करती है।
6. मुख्य संलेख प्रायः लेखक के शीर्षक से बनाई जाती है परन्तु कभी-कभी किसी नियम के अनुसार आख्या अथवा सम्पादक के नाम से भी बनाई जा सकती है इसलिए यह ऐसी स्थिति में उन उपयोक्ताओं की भी सहायता करती है जिन्हें ग्रन्थ की केवल आख्या या सम्पादक याद हैं।
7. चूँकि मुख्य संलेख में ग्रन्थ से सम्बन्धित समस्त सूचनाएँ जैसे – लेखक, सम्पादक, आख्या, प्रकाशन वर्ष, स्थान, प्रकाशक का नाम, आकार, पृष्ठों की संख्या, ग्रन्थमाला, ग्रन्थमाला सम्पादक आदि दी जाती हैं इसलिए यह ग्रन्थ से सम्बन्धित समस्त सूचनाएँ उपयोक्ताओं को प्रदान करती है।

मुख्य संलेख का प्रारूप (Sketch of the Main Entry) :

नीचे दोनों प्रसूची संहिताओं के अनुसार मुख्य संलेख का प्रारूप प्रस्तुत किया गया है।

(अ) सीसीसी के अनुसार मुख्य संलेख –

	2:55 N97	
		SHARMA (Brij Mohan). Theory of cataloguing. Ed 3. (Library science series).
	6371	○

(ब) एसीआर-2 के अनुसार मुख्य संलेख –

2:55 N97	Sharma, Brij Mohan	
		Theory of cataloguing. 2nd ed. – Agra : Y.K. Publishers, 1997 x, 340p.; 23 cm. (Library science series).
6371		1. Cataloguing 2. Library science I. Title (Series).
		○

प्रश्न-17 : सीसीसी के अनुसार इतर (अतिरिक्त) संलेख कितने प्रकार के होते हैं? प्रत्येक की संक्षेप में विवेचना कीजिए।

उपयोक्ताओं के अभिगम अनेक होते हैं और उन्हीं से वे ग्रन्थालय में अपने वान्छित ज्ञान की माँग करते हैं। वैसे तो मुख्य संलेख ही उपयोक्ताओं के अभिगमों को सन्तुष्ट करने की क्षमता रखती है फिर भी उपयोक्ताओं की माँगे विविध प्रकार एवम् प्रकृति की होती हैं अतः ऐसे उपयोक्ताओं के इन अभिगमों को सन्तुष्ट करने के लिए अन्य संलेखों का भी निर्माण किया जाता है जिन्हें इतर संलेख कहते हैं। इतर संलेख आख्या, विषय, सहलेखक, सम्पादक, अनुवादक, ग्रथमाला आदि के अन्तर्गत बनाई जाती हैं। सामान्य रूप से मुख्य संलेख के अन्तर्गत ग्रन्थ का सम्पूर्ण विवरण दिया जाता है लेकिन अतिरिक्त संलेखों में केवल उन्हीं तत्वों को प्रस्तुत किया जाता है जो अत्यन्त आवश्यक होते हैं।

सीसीसी के अनुसार इतर संलेख (Added Entries according to CCC) :

सीसीसी में इतर संलेख की सरल एवम् स्पष्ट शब्दों में परिभाषा दी गई है कि इतर संलेख मुख्य संलेख के अतिरिक्त कोई अन्य संलेख हैं। सीसीसी में रंगनाथन् ने निम्न प्रकार की इतर संलेखों का संकेत दिया है।

1. **प्रति संदर्भ (अन्तर्विषयी) संलेख (Cross Reference Entry)** – अन्तर्विषयी संलेख ग्रन्थ के अंश के विशिष्ट विषय से सम्बन्धित होती है ये उपयोक्ता के विषय अभिगम को सन्तुष्ट करती है। इस संलेख का मुख्य उद्देश्य अल्प परन्तु बहुव्यापी ग्रन्थों से महत्वपूर्ण विषयों को संलेख के माध्यम से व्यक्त करना है। इस प्रकार के संलेख एक ग्रन्थ को प्रभुत्व केन्द्र (Focus) वाले वर्ग में प्रविष्ट करने की अपेक्षा किसी अन्य वर्ग में प्रविष्ट करता है। उदाहरण के लिए माना कोई ग्रन्थ Text Book of Physics है तथा जिसमें Electronics विषय पर भी विवरण दिया हुआ है। यहाँ मुख्य वर्ग Physics है लेकिन हम वर्ग Electronics के लिए प्रति सन्दर्भ

प्रश्न-पत्र : तृतीय

ग्रन्थालय वर्गीकरण (सैद्धान्तिक)
Library Classification (Theory)

प्रश्न-1 : ज्ञान एवम् ज्ञान-जगत से आप क्या समझते हैं ? ज्ञान-जगत की संरचना पर प्रकाश डालते हुए उसकी विशेषताओं की भी विवेचना कीजिए ?

मनुष्य एक चिन्तनशील प्राणी है उसके इस चिन्तनशीलता के गुण के कारण उसके मस्तिष्क में समय-समय पर नवीन विचार आते रहते हैं। ये नवीन विचार ही एक संगठित रूप में ज्ञान कहलाते हैं। अतः हम कह सकते है कि जो कुछ मनुष्य को ज्ञात होता है वह सब कुछ ज्ञान कहलाता है अर्थात् विचारों का समूह ही ज्ञान है। ज्ञान शब्द का शाब्दिक अर्थ **अनुभूति + विश्वास** से होता है। जब मनुष्य को किसी नवीन विचार की अनुभूति होती है तथा वह अनुभूति पर विश्वास करता है तब इस अनुभूति एवम् विश्वास के मेल से वे नवीन विचार **ज्ञान** का रूप धारण कर लेते हैं।

ज्ञान-जगत (Universe of Knowledge) :

ज्ञान की एक प्रमुख विशेषता है कि वह सभी दिशाओं एवम् क्षेत्रों में निरन्तर बढ़ता रहता है क्योंकि मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वैज्ञानिकों/ शोधकर्ताओं द्वारा निरन्तर अनुसंधान किये जाते हैं जिससे ज्ञान निरन्तर वृद्धि करता है। इस प्रकार जगत में जितना भी ज्ञान समाहित हो चुका है उस समस्त समाहित ज्ञान के समूह को **ज्ञान-जगत** कहा जाता है।

ज्ञान-जगत की विशेषताएँ (Characteristics of Universe of Knowledge) :

विशेषता से आशय किसी वस्तु का गुण अथवा गुणात्मक विश्लेषण है। इसके द्वारा यह जानने में सहायता मिलती है कि उस वस्तु विशेष का स्वरूप क्या है? इसलिए ज्ञान-जगत के स्वरूप को ज्ञात करने के लिए उसकी विशेषताओं का अध्ययन करना आवश्यक है। ये विशेषताएँ निम्न हैं –

1. ज्ञान-जगत अनंत है (It is infinite universe) — ज्ञान-जगत में विद्यमान सत्वों की संख्या का अनुमान लगाना असंभव होता है क्योंकि सत्वों का परिसीमन करना सम्भव नहीं होता है क्योंकि निरन्तर नवीन विचारों की उत्पत्ति होती रहती है। इससे उन्हें ज्ञात करना सम्भव नहीं होता है। इसलिए कहा जाता है कि ज्ञान-जगत अनंत है, उसकी कोई सीमा नहीं है।

2. विप्लवकारी गतिशील (Turbulantly Dynamic) — आविष्कारों, खोजों एवम् अनुसंधानों के नवीन निष्कर्षों एवम् परिणामों के फलस्वरूप निरन्तर नवीन विचारों एवम् विषयों की उत्पत्ति होती रहती है। भूतकाल में अनुसंधान कार्य केवल प्रतिभाशाली व्यक्तियों द्वारा ही किया जाता था इसलिए ज्ञान का विकास किसी सीमा तक स्थिर रहता था। आधुनिक समय में संगठित सतत् अनुसंधान (Relay Research) के कारण नवीन से नवीन सूक्ष्म विषयों का निरन्तर विकास हो रहा है। इसी कारण यह कहा जाता है कि ज्ञान का विस्फोट हो रहा है। अतः इस बात से यह स्पष्ट है कि ज्ञान-जगत विप्लवकारी गति से निरन्तर वृद्धि करता है।

3. निरन्तरता (Continuum) — ज्ञान-जगत में कुछ क्षेत्र अखोजी भी रह जाते हैं जिन्हें अनुसंधान के द्वारा भरा जाता है। इस बात का अर्थ यह है कि विषयों का सृजन चलता रहता है, यह रुकता नहीं है अर्थात् निरन्तरता है। भूतकाल में प्रतिभाशाली व्यक्तियों द्वारा अनुसंधान किए जाने के कारण ज्ञान की सृष्टि अत्यधिक समय तक स्थिर ही रहती थी परन्तु आजकल Relay Research के द्वारा सतत् रूप से नवीनतम सूक्ष्म विषयों की सृष्टि हो रही है। इसलिए ज्ञान की सृष्टि में निरन्तरता बनी रहती है।

4. बहुआयामी (Multidimensional) — ज्ञान-जगत की एक यह भी विशेषता है कि वह बहुरूपी एवम् बहुआयामी है। ज्ञान का विकास कई दिशाओं में होता है। ज्ञान की इसी विशेषता को देखते हुए **रंगनाथन्** ने ज्ञान-जगत की तुलना **वट वृक्ष** (Banyan Tree) से की है जिसकी शाखाओं के स्वतः ही उपरोपण से नये वट वृक्ष तथा उसकी शाखाओं के परस्पर जुड़ने से कई नई शाखाएँ एवम् उप-शाखाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। इसी प्रकार ज्ञान रूपी वट वृक्ष से बहुआयामी वृहद् एवम् सूक्ष्म विषयों की निरन्तर वृद्धि होती रहती है।

5. सुसंगतत (Coherence) — **नीलमेघन्** महोदय ने ज्ञान-जगत् को एक प्रणाली कहा है। हम जानते हैं कि किसी भी प्रणाली में अनेक घटक या उप-प्रणालियाँ होती हैं जिनमें आपस में सम्बन्ध होता है। यह सम्बन्ध प्रणाली में संगठित रहता है जिससे सम्बद्धता तथा सुसंगतता बनी रहती है। इस प्रणाली के सभी घटक या उप-प्रणालियाँ इस प्रकार एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं कि किसी एक घटक में परिवर्तन होने पर सभी घटकों में कुछ न कुछ परिवर्तन आ जाता है और फलस्वरूप ज्ञान की सृष्टि प्रभावित होती है।

6. स्वतन्त्रता (Independence) — यदि ज्ञान-जगत् के किसी भाग का परिवर्तन उसी भाग को प्रभावित करता है तो वह स्वतंत्रता कहलाती है। आजकल निरन्तर अनुसंधान के कारण कुछ ऐसे विषयों का निर्माण हो रहा है जो कई विषयों से मिलकर बनते हैं जैसे– Petrology + Ocean Chemistry + Ocean Engineering + Ocean Biology = Ocean Science

7. प्रगतिशील व्यवस्थापन (Progressive Systematization) — आजकल अनुसंधान के फलस्वरूप दो विषय मिलकर एक नवीन विषय का निर्माण कर रहे हैं। जैसे –

Biology + Chemistry → Biochemistry

Biology + Physics → Biophysics

इससे ज्ञात हो रहा है कि ज्ञान-जगत में प्रगतिशील व्यवस्थापन दिखाई पड़ रहा है जिसके कारण दो विषयों के संयोग से एक नवीन विषय बनता है जो स्वतंत्र विषय का रूप धारण कर लेता है।

प्रश्न-2 : विषयों के निर्माण की विभिन्न विधियों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए ?

हम जानते हैं कि ज्ञान निरन्तर वर्धनशील होता है क्योंकि निरन्तर हो रहे अनुसंधानों के फलस्वरूप नित नवीन-विषयों की सृष्टि होती रहती है जिनकी संरचना विधि अलग-अलग होती है। विषयों की संरचना का अध्ययन सर्वप्रथम **डा. रंगनाथन्** ने 1950 में अपनी पुस्तक Prolegomena में किया था। उस समय उन्होंने विषय-निर्माण की केवल 4 विधियों का उल्लेख किया। 1973 में **नीलमेघन्** महोदय ने इसमें कुछ परिवर्तन एवम् संशोधन किए तथा इन्हें निम्न प्रकार व्यवस्थित किया ।

1. पटलीकरण (Lamination) — **लेमीनेशन** शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द Laminee से हुई है जिसका अर्थ Separable layer से होता है। इस प्रकार इस विधि में एक परत के ऊपर दूसरी परत रखने से विषय का निर्माण होता है अर्थात् एक मूल वर्ग या एक पक्ष को इस प्रकार रखा जाता है कि दोनों मिलकर विभाजित होने लायक एक पतली परत (Layer) का निर्माण करते हैं। यह प्रक्रिया निम्न दो प्रकार की होती है –

(अ) **Kind-1 :** इस प्रक्रिया में एक या अधिक एकल पक्षों को मूल विषयों के साथ जोडकर मिश्रित विषय का निर्माण किया जाता है। जैसे – एक पक्ष Wheat तथा मूल वर्ग Agriculture इसलिए इन दोनों के संयोग से विषय Agriculture of Wheat बनता है।

(ब) **Kind-2 :** इस प्रक्रिया में किसी मूल विषय की प्रजातियों (Species) की परत को एक साथ रखकर मिश्रित मूल विषय का निर्माण किया जाता है। जैसे – दो मूल वर्ग Magnetism तथा Nuclear Physics को मिलाकर एक मिश्रित विषय Magnetism in Nuclear Physics बनता है।

2. विखण्डन (Fission) — विखण्डन का आशय खण्डों में विभाजित होने से होता है इसलिए यह वह विधि है जिसमें किसी मूल विषय या एकल का उप-खण्डों में विभाजन होता है। जैसे– Universe of Knowledge → Natural science, Humanities and Social sciences में विखण्डित हो जाती है। इसी प्रकार Philosophy → Logic, Epistomology, Metaphysics, Ethics आदि में विखण्डन किया गया है।

3. विच्छेदन (Dissection) — यह वह विधि है जिसमें एकल जगत को दो समकक्ष वर्गों में विच्छेदित किया जाता है। इन विच्छेदित वर्गों को समकक्ष वर्ग (Coordinated Classes) कहा जाता है। जैसे –

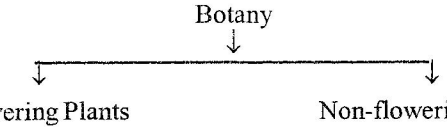

4. अनाच्छादन (Denudation) — यह वह विधि है जिसमें किसी मूल विषय का अनाच्छादन करने पर जो विषय प्राप्त होता है उसका विस्तार कम होता है पर उसकी गहनता बढ़ती जाती है। इस प्रकार हम सामान्य से विशिष्ट की ओर अग्रसर होते हैं। अतः इस विधि के आध

ार पर शृंखला की कड़ियों का निर्माण होता है। इस प्रकार जो वर्ग बनते हैं वे एक दूसरे के अधीनस्थ होते हैं। इसलिए उन्हें अधीनस्थ वर्ग (Subordinated Classes) कहते हैं। **उदाहरण**—

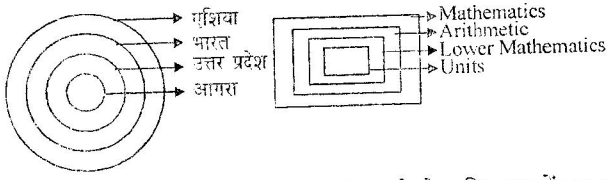

5. विलयन (Fusion)—विलयन का आशय दो या दो से अधिक तत्वों का एक दूसरे में विलय होकर दूसरा तत्व बनने से होता है। जैसे – आक्सीजन तथा हाइड्रोजन मिलकर पानी बनाते हैं। ठीक उसी प्रकार जब दो विषय मिलकर एक मिश्रित विषय का निर्माण करते हैं और मिश्रित होने वाले विषय अपनी स्वयं की विशेषताओं को त्याग देते हैं। **उदाहरण** – Astronomy + Physics → Astrophysics तथा Biology + Chemistry → Biochemistry

6. आसवन (Distilation)—आसवन वह प्रक्रिया है जिसमें एक शुद्ध पदार्थ प्राप्त होता है। जिस प्रकार आसवन के द्वारा शुद्ध पानी प्राप्त किया जाता है ठीक इसी प्रकार विषय भी प्राप्त किए जाते हैं। जब किसी विषय की एक या कई शाखाएँ ज्ञान की वृद्धि के कारण विकसित होकर अपने ही मूल वर्ग के समान समकक्ष वर्ग का निर्माण करती हैं तो इस क्रिया को **आसवन** कहते हैं। **उदाहरण** – Research methodology, Statistical analysis, Management science, Mathematical techniques आदि।

7. संचयन (Agglomeration)—अँग्रेजी भाषा के Agglomeration शब्द का अभिप्राय किसी वस्तु को लपेटना या लपेट कर गोल बना देना या गोलाकार रूप में साथ-साथ एकत्रित करने से होता है। इस प्रकार इसका आशय एक से अधिक विषयों को संचित कर नवीन विषयों का निर्माण करना है। इस प्रक्रिया को पहले **रंगनाथन्** ने Partial Comprehension नाम दिया था। **उदाहरण** –

A → Sciences
M → Miscelleneous class
B to L → Natural sciences
N to S → Humanities

8. शिथिल समुच्चय (Loose Assemblage)—विषयों के निर्माण में यह विधि भी एक विशिष्ट प्रक्रिया है। जब दो या अधिक एकलों अथवा विषयों को एक स्थान पर एकत्रित कर उनके पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है तो जटिल विषय का निर्माण होता है। **उदाहरण** – Mathematics for Physicists तथा Philosophy and Psychology.

9. समूहन (Cluster)—अँग्रेजी भाषा के Cluster शब्द का आशय किसी एक प्रकार की साथ-साथ समूहित होने वाली वस्तुओं का संग्रह। जब एक ही समान विषय पर बहुत से विशिष्ट अध्ययन किए जाते हैं और परिणामस्वरूप जिन विषयों की उत्पत्ति होती है उन्हें समूहन कहते हैं। **उदाहरण** – Indology, Oceanography, Nipplogy, Gandhiana आदि।

प्रश्न-3 : वर्गीकरण शब्द की व्याख्या एवम् परिभाषा करते हुए वर्गीकरण के प्रकार भी बताइये ?

वर्गीकरण शब्द जिसे अँग्रेजी में (Classification) कहते हैं जो लैटिन भाषा के (Classic) शब्द से निर्मित हुआ है जिसका उपयोग प्राचीन रोम में सम्पत्ति की दृष्टि से मनुष्य को द्वैत्वात्मक (Dichotomy) प्रथा के अनुसार दो श्रेणियों में विभक्त करने के लिए किया जाता था जैसे– बड़ा एवम् छोटा, धनी एवम् निर्धन, स्वामी एवम् दास। इस प्रकार Classic (क्लासिक) शब्द का अर्थ वस्तुओं के एक समूह से है जिसमें किसी समान गुण एवम् विशेषता के अनुसार उन्हें वर्गीकृत किया जाता है। इसके लिए वर्ग समूह में एकत्रित वस्तुओं में जिनका वर्गीकरण करना है कम से कम एक सामान्य विशेषता अथवा गुण अवश्य होता है।

वर्गीकरण के महान एवम् प्रसिद्ध विद्वान **ब्लिस** (H.E. Bliss) महोदय ने वर्गीकरण को समझाने हेतु उसके निम्न तीन चरण बताए हैं –

1. विभाजन करना (To Class)
2. वर्गीकृत करना (To Classify)
3. वर्गीकरण करना (Classification)

पहले चरण (विभाजन करना) में वस्तुओं को किसी समूह या वर्ग में रखने के लिए किसी समानता अथवा असमानता के आधार पर विभाजित किया जाता है। **दूसरे चरण** (वर्गीकृत करना) में अनेक वस्तुओं में से उनकी किसी भी विशेषता के आधार पर वर्ग अथवा उपवर्ग की रचना कर वर्गीकृत किया जाता है। **तीसरे चरण** (वर्गीकरण) में सभी वर्गों एवम् उपवर्गों को किसी उद्देश्य, अभिरुचि अथवा कुछ सिद्धांतों तथा नियमों को दृष्टि में रख कर क्रमबद्ध किया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्गीकरण का अर्थ एक समान विशेषताओं वाली वस्तुओं को एक साथ एक समूह में रखना है। इस दृष्टि से वर्गीकरण न केवल वस्तुओं का सामान्य समूहीकरण है बल्कि उन्हें एक सुव्यवस्थित एवम् तर्कसंगत क्रमबद्ध शृंखला में रखना भी है जिसमें उनके आपसी सम्बंध को निश्चित किया जा सके। साधारण शब्दों में यह कहा जा सकता है कि वस्तुओं को उनकी समान अथवा असमान विशेषताओं के आधार पर क्रमबद्ध करने को ही **वर्गीकरण** कहते हैं।

परिभाषाएँ (Definitions) :

1. वस्तुओं के वर्गीकरण का तात्पर्य वस्तुओं को उनकी सादृश्यता के अनुसार वास्तविक या आदर्श क्रमबद्ध शृंखला में व्यवस्थित करना और उनकी भिन्नताओं के अनुसार उन्हें एक दूसरे से पृथक करना है। **– स्टेनले जॉस्ट।**
2. वर्गीकरण वस्तुओं के विचारों को क्रमबद्ध करने के लिए संभावित उत्तम उपाय है। **– जे.एस.मिल्स।**
3. वर्गीकरण पृथक करने और एक समूह में रखने की प्रक्रिया है, इसके द्वारा एक समान वस्तुएँ एकत्रित की जाती हैं और भिन्न प्रकार की वस्तुएँ पृथक की जाती हैं। **– फिलिप्स ।**

उपरोक्त परिभाषाओं से हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि वर्गीकरण वस्तुओं का

किया जाता है जो किसी आधार पर किया जाता है जिसका कोई उद्देश्य भी होता है। वर्गीकरण किस वस्तु का करना है किस आधार पर करना है तथा विभिन्न विशेषताओं में से वर्गीकरण के लिए किस विशेषता का चयन करना है आदि सभी बातों को सुनिश्चित करने में मस्तिष्क निरन्तर क्रियाशील रहता है। यहाँ तक कि वर्गीकरण से प्राप्त होने वाले अन्तिम निष्कर्ष का भी पूरा चित्र मस्तिष्क में बन जाता है। उद्देश्य की पूर्ति के परिसीमन की परिकल्पना भी मस्तिष्क पहले से ही कर लेता है। इस प्रकार मस्तिष्क की लिप्तता के कारण यह कहा जा सकता है कि **वर्गीकरण एक मानसिक प्रक्रिया है।**

वर्गीकरण के प्रकार (Types of classification) :

अब हम जान चुके हैं कि वर्गीकरण में वस्तुओं अथवा विचारों को उनके सादृश्य के अनुसार वर्गों या समूहों में व्यवस्थित किया जाता है और उन्हें सम्मिलित करके एक बड़े वर्ग समूह का निर्माण किया जाता है। परम्परा की दृष्टि से वर्गीकरण निम्न दो प्रकार का होता है।

1. प्राकृतिक वर्गीकरण (Natural Classification)—जब वस्तुओं का वर्गीकरण प्राकृतिक गुणों अथवा मौलिक समानता एवम् भिन्नता अथवा विशेषताओं की मात्रा के आधार पर किया जाता है तब ऐसे वर्गीकरण को प्राकृतिक (नैसर्गिक) वर्गीकरण कहते हैं। उदाहरण के लिए यदि हम पौधों का वर्गीकरण प्रकृति के किसी गुण अथवा विशेषता के आधार पर करें जैसे **पुष्पदार पौधे** एवम् **पुष्पहीन पौधे** तब यह वर्गीकरण प्राकृतिक वर्गीकरण कहलाता है।

2. कृत्रिम वर्गीकरण (Artificial Classification)— वस्तुओं के कृत्रिम गुणों के आधार पर किया गया वर्गीकरण कृत्रिम वर्गीकरण कहलाता है। यदि पौधों का वर्गीकरण कृत्रिम गुण जैसे **बड़ी पत्तियों वाले पौधे** तथा **छोटी पत्तियों वाले पौधे**। यह वर्गीकरण कृत्रिम वर्गीकरण है क्योंकि छोटी पत्ती एवम् बड़ी पत्ती का होना एक कृत्रिम गुण है न कि प्राकृतिक गुण।

इस प्रकार ऊपर के उदाहरण में

1. **प्राकृतिक वर्गीकरण :** (पुष्पदार पौधे एवम् पुष्पहीन पौधे) यहाँ वर्गीकरण का आधार प्राकृतिक है।
2. **कृत्रिम वर्गीकरण :** (छोटी पत्ती वाले पौधे एवम् बड़ी पत्ती वाले पौधे) इसमें वर्गीकरण का आधार कृत्रिम है।

प्रश्न-4 : ग्रंथालय वर्गीकरण को समझाइये ? इसकी ग्रंथालयों में क्यों आवश्यकता होती है ? विवेचना कीजिए ।

वर्गीकरण की आवश्यकता प्रत्येक जगह दिखाई पड़ती है। मनुष्य में स्मृति एवम् विचार शक्ति के गुण के कारण ही वर्गीकरण की धारणा का विकास हुआ है। जैसे ही किसी एक प्रकार की वस्तुओं की संख्या में वृद्धि होती है वैसे ही उनको सजातीय समूहों में व्यवस्थित करने की तथा इन समूहों को अनुकूल क्रम में व्यवस्थित करने की इच्छा एवम् आवश्यकता अनुभव होती है इसी प्रकार प्रलेखों (पाठ्य सामग्रियों) का अत्यधिक संख्या में प्रकाशन होने

की कारण उन्हें वर्गीकरण करने की आवश्यकता अनुभव की गई। प्रलेखों को वर्गीकृत करने की प्रक्रिया ही **ग्रंथालय वर्गीकरण** कहलाती है। ग्रंथालय वर्गीकरण में प्रलेखों के विषयों को वर्गीकृत किया जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि ग्रंथालय वर्गीकरण ज्ञान की वह शाखा है जो ज्ञान के क्षेत्र में स्वीकृत, स्पष्ट एवम् सूक्ष्म तथा क्लिष्ट विषयों को अनुकूल क्रम में व्यवस्थित करने हेतु उपयोग में लाई जाती है।

परिभाषाएँ (Definitions) :

अनेक विद्वानों ने **ग्रंथालय वर्गीकरण** को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है –

1. ग्रंथालय वर्गीकरण पुस्तक के विशिष्ट विषय के नाम को क्रमसूचक अंकों की अधिमान्य कृत्रिम भाषा में अनुवाद करना है। — **रंगनाथन्**
2. ग्रंथालय वर्गीकरण पुस्तकों में निहित ज्ञान का वर्गीकरण है जिसमें पुस्तक के भौतिक स्वरूप के कारण आवश्यक समायोजन किया जाता है। — **मारग्रेट मान**
3. ग्रंथालय वर्गीकरण ग्रंथों को निधानियों पर व्यवस्थित करना है अथवा पाठकों हेतु अत्यधिक उपयोगी बनाने का विवरण है। — **सेयर्स**

उपरोक्त परिभाषाओं का विश्लेषण करने के पश्चात यह निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि ज्ञान के समस्त सम्बंधित विषयों को एक वर्ग में एकत्रित करना ही ग्रंथालय वर्गीकरण है इसके द्वारा ग्रंथों को विभिन्न समूहों में रखा जा सकता है।

ग्रंथालय वर्गीकरण की आवश्यकता (Need of Library Classification):

वर्गीकरण की ग्रंथालयों में क्यों आवश्यकता होती है अथवा वर्गीकरण का क्या महत्व है इसके लिए निम्न बिन्दुओं पर विचार किया जाता है।

1. निधानियों पर क्रम व्यवस्था (Arrangement on Shelves)— वर्गीकरण की सहायता से ग्रन्थों को सहायक एवम् सुविधाजनक क्रम में निधानियों पर आसानी से व्यवस्थित किया जाता है जिससे उपयोक्ताओं को अपना वान्छित ग्रंथ प्राप्त करने में सहायता प्राप्त होती है।

2. पुनर्व्यस्थापन (Re-arranging of books) — जो ग्रंथ उपयोक्ताओं द्वारा अध्ययन करने के बाद लौटाये जाते हैं उन्हें यथावत् उसी क्रम में पुनर्व्यस्थित करने में ग्रंथालय वर्गीकरण ही उपयोग में लाई जाती है। निधानियों में ग्रंथों के क्रम को सुव्यवस्थित रखने में वर्गीकरण एक अत्यन्त ही उपादेय एवम् महत्वपूर्ण विधि है।

3. ग्रंथों के संग्रह का आकलन (Counting of Collection) — वर्गीकरण के आधार पर ही ग्रंथालय के संग्रह में कितने ग्रंथ संग्रहीत हैं इसकी गिनती अथवा अनुमान लगाया जाता है तथा संग्रह में सभी विषयों का एक समान रूप से प्रतिनिधित्व करने में वर्गीकरण से ही सहायता मिलती है।

4. विषयानुसार माँग की पूर्ति (Subject Approaches)— ग्रंथालयों में अनेक उपयोक्ताओं द्वारा ग्रंथों की माँग उनके विषय के अनुसार भी की जाती है। अतः एक ही विषय से सम्बंधित ग्रंथों को एक ही स्थान पर वर्गीकरण के द्वारा व्यवस्थित करने से ऐसे ग्रन्थों का उपयोग किया जा सकता है। विषय के अनुसार ग्रंथों की क्रमव्यवस्था केवल ग्रंथालय वर्गीकरण द्वारा ही सम्भव है।

5. प्रसूचीकरण से सहजीविता (Symbiosis with cataloguing) — ग्रंथालयों में प्रसूचीकरण की दृष्टि से वर्गीकरण का अत्यन्त महत्व है जिसे क्रियाशील बनाने में वर्गीकरण का एक मात्र योगदान होता है। ग्रंथों का प्रसूचीकरण तभी सम्भव हो सकता है पहले जब उनका वर्गीकरण कर लिया गया हो। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वर्गीकरण के बिना प्रसूचीकरण असम्भव है।

6. संग्रह का प्रर्दशन (Display of Collection) — प्रसूची में ग्रंथों के संग्रह का पूरा विवरण होता है और प्रसूची के द्वारा ही संग्रह का प्रर्दशन उपयोक्ताओ के सम्मुख होता है लेकिन प्रसूचीकरण, वर्गीकरण के बिना असम्भव है। इसलिए कहा जा सकता है कि संग्रह का प्रसूची के माध्यम से प्रर्दशन वर्गीकरण द्वारा ही सम्भव होता है।

7. संग्रह का सत्यापन (Stock Verification of Collection) — ग्रंथालय के सम्पूर्ण संग्रह का वार्षिक सत्यापन जब भी किया जाता है वह वर्गीकरण के द्वारा ही सम्भव हो पाता है।

8. सांख्यकीय डेटा (Statical Data) — ग्रंथालयों में ग्रंथों से सम्बन्धित तरह-तरह के सांख्यकीय डेटा जैसे – वार्षिक प्रतिवेदन, आदि तैयार करने में वर्गीकरण अत्यन्त आवश्यक है एवम् महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। कितने ग्रंथ प्रदान किये गये हैं? कितनी पत्रिकाएँ प्रदान की गई हैं? आदि बातों से सम्बंधित डेटा वर्गीकरण के माध्यम से ही सम्भव हो सकते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त बिन्दुओं पर विचार करते हुए हम देखते हैं कि ग्रंथालयों में वर्गीकरण की अत्यन्त तीव्र आवश्यकता होती है। इसकी महत्ता को देखते हुए सेयर्स महोदय ने कहा था कि **वर्गीकरण ग्रंथालयों की आधार शिला है।**

प्रश्न-5 : वर्गीकरण पद्धतियों की विभिन्न प्रणालियों की विवेचना कीजिए ?

यदि हम प्रारम्भ से अब तक विकसित हुई प्रमुख वर्गीकरण पद्धतियों का अवलोकन एवम् विश्लेषण करें तो कवल दो प्रकार की प्रणालियाँ ही हमारे सामने आती हैं वे प्रणालियां निम्न प्रकार हैं।

1. परिगणनात्मक प्रणालियाँ (Enumerative Patterns) — ग्रंथालय पद्धतियों की इस प्रकार की प्रणालियाँ वे होती हैं जिनमें ज्ञान-जगत के सम्पूर्ण अतीत एवम् वर्तमान के सभी विषयों का उल्लेख एक वरीयतापूर्ण सहायक क्रम में उनकी अनुसूची (Schedules) में कर दिया जाता है। इस प्रकार भूत एवम् वर्तमान के जितने भी संभावित विषय हैं उनका तथा उनके वर्गों का उल्लेख इनकी अनुसूची में प्रस्तुत कर दिया जाता है तथा उनके अंकन (वर्गांक) उनके समक्ष लिख दिये जाते हैं। **मिल्स** महोदय इस प्रकार की प्रणालियों के सन्दर्भ में कहते हैं कि इस प्रकार की पद्धति में अंकित वर्गों के अन्तर्गत सरल तथा कुछ संयुक्त विषयों को सम्मिलित किया जाता है तथा अंकित वर्गो को पूर्वनिर्मित वर्गांक प्रदान कर दिये जाते हैं। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि जिन संयुक्त अथवा जटिल विषयों को अंकित नही किया गया है एवम् पूर्वनिर्मित वर्गांक नही दिए गए हैं उन्हे स्पष्ट करना सरल नही है।

परिगणनात्मक प्रणालियाँ दो प्रकार की होती हैं –

(अ) शुद्ध परिगणनात्मक प्रणाली (Pure Enumerative Pattern) — इस प्रकार की प्रणाली का सर्वोत्तम उदाहरण, संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रीय ग्रंथालय **लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस** द्वारा प्रतिपादित Library of Congress Classification Scheme है।

(ब) लगभग परिगणनात्मक प्रणाली (Almost Enumerative Pattern) — इस प्रकार की प्रणाली में अतीत एवम् वर्तमान के जितने भी संभावित विषय हैं उनके एवम् उनके वर्गो की एक वृहत् अनुसूची प्रस्तुत कर दी जाती है तथा उन्हें अंकन (वर्गांक) प्रदान कर दिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ सामान्य एकलों की तालिका भी प्रस्तुत की जाती है तथा मूल विषयों के साथ मिश्रित विषयों का भी उल्लेख अनुसूची में होता है। जगह-जगह पर सामान्य एकलों का उपयोग करके मिश्रित विषयों के वर्गांक भी निर्मित किये जा सकते हैं। इसके प्रमुख उदाहरणों में Subject Classification Scheme (J. D. Brown) तथा Decimal Classification Scheme (Melvil Dewey) के नाम दिये जा सकते हैं।

2. पक्षात्मक प्रणाली (Faceted Patterns) — वे प्रणालियाँ जो पक्षों (Facets) पर आधारित होती हैं पक्षात्मक वर्गीकरण प्रणालियाँ कहलाती हैं। ये निम्न प्रकार की हो सकती हैं –

(अ) लगभग पक्षात्मक प्रणाली (Almost Faceted Patterns) — इस प्रकार की प्रणाली के अन्तर्गत ज्ञान-जगत के सम्पूर्ण अतीत एवम् वर्तमान के सम्भावित विषयों की एक वृहत् अनुसूची प्रस्तुत कर दी जाती है और उन्हें अंकन (वर्गांक) प्रदान कर दिये जाते है। इसके अतिरिक्त सामान्य एकलों एवम् विशिष्ट एकलों का प्रावधान भी किया जाता है। जितने भी मिश्रित विषयों के वर्गांक बनाने होते है उनको प्रत्येक विषय से सम्बन्धित सामान्य एकलों तथा विशिष्ट एकलों की सहायता से निर्मित कर सकते हैं। इसके लिए संयोजी चिन्हों (Connecting symbols) का प्रयोग करना पड़ता है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण फिड (FID) द्वारा विकसित Universal Decimal Classification Scheme (Paul Otlet and Henery La Fontane) हैं।

(ब) पूर्ण पक्षात्मक प्रणाली (Rigidly Faceted Patterns) — इस प्रणाली में ज्ञान-जगत के सम्पूर्ण अतीत एवम् वर्तमान के सम्भावित विषयों की एक वृहत् अनुसूची प्रस्तुत कर दी जाती है जिसमें सामान्य एकलों तथा विशिष्ट एकलों का भी उल्लेख होता है। परन्तु संयुक्त विषयों का कोई उल्लेख नही होता है। संयुक्त विषयों के वर्गांक मूल विषयों, सामान्य एकलों तथा विशिष्ट एकलों की सहायता से निर्मित किए जाते हैं जिसके लिए संयोजी चिन्हों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार की प्रणाली में एक विशेष बात यह होती है कि प्रत्येक विषय के लिए अलग-अलग पक्ष-सूत्रों का प्रावधान किया गया होता है जिनके अनुसार ही विषयों के वर्गांक निर्मित किये जाते हैं। इस प्रकार की प्रणाली का सर्वोत्तम उदाहरण डा॰ रंगनाथन् द्वारा प्रणीत् Colon Classification (6th edition) है।

(स) स्वतंत्र रूप से पक्षात्मक प्रणाली (Freely Faceted Pattern) — इस प्रकार की प्रणाली में विषयों के मूल पदों को अंकन (वर्गांक) में परिवर्तित कर दिया जाता है तथा इसमें मूल विषय के साथ-साथ संयुक्त विषयों के लिए पहले से ही पक्ष सूत्रों का प्रावधान नहीं होता है। इसमें संयुक्त विषयों को पक्ष-विश्लेषण द्वारा ज्ञात किया जाता है तथा पक्षों को अभिधारणओं एवम् सिद्धान्तों के आधार पर निश्चित किया जाता है तथा पक्षों के संश्लेषण (जोड़ने) हेतु

किया गया है। डीवी ने कभी इन्हें रूप विभाजन, कभी मानक उपविभाजन आदि नाम दिए हैं। डीडीसी में इनका प्रावधान Table-1 में इस प्रकार है–

01	Philosophy and Theory	06	Conference, Commissions
02	Outlines or Handbook	07	Study and teaching
03	Encyclopaedia/Dictionary	08	Collection
04	Essays/Lectures	09	Historical and geographical treatments
05	Serials/Periodicals		

7. सापेक्षिक अनुक्रमणिका (Relative Index)— डीडीसी के साथ संलग्न अनुक्रमणिका सामान्य प्रकार की न होकर एक विशेष प्रकार की सापेक्षिक अनुक्रमणिका है जिसमें समस्त विषयों के साथ-साथ उनके पर्यायवाची एवम् एक विषय का दूसरे विषय से सम्बन्ध आदि भी दर्शाए गये हैं। इससे वर्गीकार को अपना विषय खोजने में कोई कठिनाई नही होती है।

8. संयोजी चिन्हों का पूर्ण अभाव (Lack of Connecting Symbols)— इस पद्धति में अन्य पद्धतियों की तरह विषयों के पक्ष अंकों का संश्लेषण करने में संयोजी चिन्हों की कोई आवश्यकता नहीं होती है। मात्र एक दशमलव बिन्दु तीन अंकों के बाद आँखों को आराम एवम् बोलने में सुविधाजनक बनाने हेतु किया जाता है।

9. सरल पद्धति (Simple Scheme)— डीडीसी सबसे सरल पद्धति है इसलिए वर्गीकार को समझने एवम् वर्गांक बनाने में कोई असुविधा नही होती है। इसमें वर्गांक भी चूँकि शुद्ध अंकन से निर्मित होते हैं इसलिए वर्गांक को याद करने, लिखने एवम् टाइप करने में असुविधा नहीं होती है।

इन सभी उपयोगी विशेषताओं के कारण डीडीसी का उपयोग विश्व में सर्वाधिक रूप से किया जाता रहा है। इसकी विशेषताओं के सन्दर्भ में **ब्राउन** महोदय ने कहा था कि डीडीसी समस्त वर्गीकरण पद्धतियों में अत्यधिक सर्वव्यापी एवम् प्रतिष्ठित पद्धति है। **सेयर्स** महोदय ने भी इसकी प्रसंशा इन शब्दों में की है — **सर्वव्यापकता, ग्राह्यता, प्रसार योग्य अंकन, उत्कृष्ट स्मरणशीलता तथा अनुक्रमणिका इसकी मुख्य विशेषता हैं।**

प्रश्न-10 : रंगनाथन् द्वारा प्रणीत् कोलन वर्गीकरण पद्धति (सीसी) की विशेषताओं की विवचना कीजिए ?

भारत में ग्रंथालय विज्ञान के जनक माने जाने वाले **डा. रंगनाथन्** द्वारा प्रणीत् कोलन वर्गीकरण पद्धति भारत में अभिकल्पित प्रथम एवम् अकेली वर्गीकरण पद्धति है। रंगनाथन ने अनेक प्रचलित वर्गीकरण पद्धतियों का सूक्ष्मता से अध्ययन करने के पश्चात् एक ऐसी पद्धति का निर्माण करने का विचार किया जो ग्राह्य एवम् वर्धनशील हो अर्थात् भविष्य में सृजित होने वाले नवीन विषयों को भी अपने में समाहित कर सके। उनका 1924 में प्रारम्भ किया गया यह परिश्रम 1933 में कोलन वर्गीकरण के रूप में सबके सम्मुख आया। सन् 1960 तक इसके 6 संस्करण प्रकाशित हो चुके थे। इसका 7वाँ संस्करण भी अनेक परिवर्तनों एवम् संशोधनों के साथ प्रकाशित हो चुका है जिसका ग्रन्थालयों में वर्गीकरण हेतु प्रयोग तथा अध्ययन-अध्यापन में उपयोग करना प्रारम्भ हो चुका है। लेकिन कहा जाता है कि इसका 7वाँ संस्करण अति दुरूह है जिसके कारण अनेक ग्रन्थालय इसका उपयोग करने में अभी

संकोच कर रहे हैं इसलिए अध्ययन की दृष्टि से हम इसके 6वें संस्करण के पुनर्मुद्रित प्रति (1963) के आधार पर इसकी विशेषताओं की विवेचना कर रहे हैं –

1. पक्षात्मक प्रणाली (Faceted Pattern)— सीसी पक्षात्मक प्रणाली है अर्थात इसके सभी मुख्य वर्गों एवम् मूल विषयों को पक्षों में विभाजित किया गया है। इसका 6वाँ संस्करण पूर्ण पक्षात्मक है तथा 7वाँ संस्करण स्वच्छन्द पक्षात्मक है।

2. कोलन नामकरण क्यों (Why it is called Colon Classification)— रंगनाथन् ने इसके प्रथम संस्करण में ही पक्ष अंकों को जोड़ने के लिए कोलन चिन्ह (:) का उपयोग किया था इसलिए उसी के नाम पर उन्होंने इसका नाम कोलन वर्गीकरण पद्धति रखा।

3. वैश्लेषी-संलेशणात्मक पद्धति (Analytico-synthetic Scheme) — इस पद्धति में विषय को पहले पक्ष-विश्लेषण के द्वारा पक्षों में विभाजित किया जाता है फिर पक्षों के अंकों को संयोजी चिन्हों की सहायता से जोड़ा (संश्लेषण) जाता है इसलिए इसे वैश्लेषी-संश्लेषणात्मक पद्धति माना जाता है।

4. पाँच मूलभूत श्रेणियों की अभिधारणा (5 Fundamental Categories)— इस पद्धति में किसी भी मुख्य वर्ग में अधिक से अधिक 5 मूलभूत श्रेणियों की अभिधारणा की अभिव्यक्ति की गई है। उनके अनुसार किसी भी विषय में 5 मूलभूत श्रेणियाँ विद्यमान हो सकती हैं जिनका विवरण निम्न प्रकार है –

व्यक्तित्व (Personlity)	→ [P]	संयोजी चिन्ह कौमा (,)
पदार्थ (Matter)	→ [M]	संयोजी चिन्ह सेमीकोलन (;)
उर्जा (Energy)	→ [E]	संयोजी चिन्ह कोलन(:)
स्थान (Space)	→ [S]	संयोजी चिन्ह डॉट (.)
काल (Time)	→ [T]	संयोजी चिन्ह विपर्यस्त कौमा (')

5. पक्ष-सूत्र (Facet Formula)— इस पद्धति में प्रत्येक मुख्य वर्ग हेतु पक्ष-सूत्र प्रस्तुत किए गये हैं जो रंगनाथन् की मौलिक देन हैं। इन्हीं पक्ष-सूत्रों के अनुसार प्रत्येक मुख्य वर्ग के विषयों के वर्गांक बनाये जा सकते हैं। **उदाहरण** –

Library Science	2 [P]; [M]: [E][2P]
Literature	O [P], [P2][P3], [P4]

6. सामान्य एकल (Common Isolates)— अन्य पद्धतियों की भाँति **सीसी** में भी सामान्य एकलों की व्यवस्था की गई है जिनका प्रयोग किसी भी मुख्य वर्ग के साथ करके संयुक्त विषयों का वर्गांक बनाया जा सकता है। ये ग्रन्थों के लेखकों के दृष्टिकोणों अथवा ग्रंथों के स्वरूपों का वर्गांक में प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं। सीसी में सामान्य एकलों की एक वृहत् तालिका **पृष्ठ 2.5 तथा 2.6** पर प्रस्तुत की गई है। इसमें सामान्य एकलों को दो प्रकारों में दिखाया गया है। सभी सामान्य एकलों को किसी विषय के वर्गांक में जोड़ने हेतु पक्ष-सूत्र प्रस्तुत किए गये हैं और उन्हीं के अनुसार इन्हें जोड़ा जाता है।

(अ) पूर्ववर्ती सामान्य एकल (Anteriosing C.I.)

(ब) परवर्ती सामान्य एकल (Posteriosing C.I.)

उदाहरण –

Bibliography for history	Va	(ACI)
Investigations in Physics	C:f	(PCI)

7. सह-सम्बन्धों का प्रावधान (Phase Relations) — दो मूल वर्गों, पक्षों या एकलों में आपस में सम्बन्ध प्रदर्शित करके नवीन विषयों की सृष्टि करने हेतु इस पद्धति में अनेक प्रकार के सह-सम्बंधों का प्रावधान किया हुआ है। इसके लिए सीसी में 5 सह-सम्बन्धों की एक तालिका **पृष्ठ 2.28** पर प्रस्तुत की गई है। इसके अनुसार इन सम्बधों को जोड़कर वर्गांक निर्मित किये जा सकते हैं। **उदाहरण** –

Psychology for doctors	S0bL
Comparison : Medical and Agriculture	L0eJ

8. मिश्रित अंकन का उपयोग (Use of Mixed Notations) — सीसी में मिश्रित अंकन का प्रयोग किया गया है जिसमें अरेबिक संख्याएँ (0 से 9 तक), अँग्रेजी वर्णमाला के दीर्घ अक्षर (A से Z), अँग्रेजी वर्णमाला के लघु अक्षर (i, o, l को छोड़कर) तथा दो ग्रीक वर्ण Δ तथा Σ आदि का उपयोग किया गया है।

9. पंक्ति तथा शृंखला में ग्राह्यता (Hospitality in Array and Chain) — पंक्ति एवम् शृंखला में ग्राह्यता उत्पन्न करने हेतु सीसी में अनेक सहायक विधियों (Devices) का प्रावधान किया गया है जो निम्न है –

वर्णानुक्रमी विधि (AD)	Hero cycle	→ D5125 H
कालक्रम विधि (CD)	DDC	→ 2: 5IM76
विषय विधि (SD)	Medical libraries	→ 24 (L)
भौगोलिक विधि (GD)	Indian history	→ V44
अध्यारोपण विधि (SID)	Rural women	→ Y15-31

10. ग्रंथांक का पक्ष-सूत्र (Facet Formula for Book Number) — सीसी के अतिरिक्त किसी भी वर्गीकरण पद्धति में ग्रंथों हेतु Book Number बनाने का प्रावधान नहीं है लेकिन इस पद्धति में अन्त के पृष्ठों पर ग्रंथांक निर्मित करने हेतु पक्ष-सूत्र दिया हुआ है जिसके अनुसार ग्रंथों के ग्रंथांक निर्मित किए जा सकते हैं।

उपरोक्त विशेषताओं को देखते हुए हम कह सकते हैं कि **सीसी** एक ऐसी पक्षात्मक वर्गीकरण पद्धति है जो आज के परिवेश में भी नवीन सृजित विषयों को वर्गीकृत करने में सक्षम है तथा यह सूक्ष्म से सूक्ष्म विचारों को वर्गीकृत कर सकती है। इसके विशेष गुणों के कारण ही इसकी उपयोगिता भारत के साथ-साथ विदेशों में भी दिन-प्रति-दिन बढ़ रही है।

प्रश्न-11 : डीडीसी एवम् सीसी का तुलनात्मक परीक्षण कीजिए ?

तुलनात्मक परीक्षण

तुलना का आधार	*डीडीसी (दशमलव वर्गीकरण)*	*सीसी (कोलन वर्गीकरण)*
1. प्रणेता	डीडीसी के प्रणेता अमेरिका के ग्रंथालय विज्ञान वेत्ता डा. मेल्विल डीवी थे।	सीसी के प्रणेता भारत में ग्रंथालय विज्ञान के जनक डा. एस.आर.रंगनाथन् थे।
2. संस्करण	डीडीसी का प्रथम संकरण 1876 में प्रकाशित हुआ था और अब तक इसके 22 संस्करण	सीसी का प्रथम संस्करण 1933 में प्रकाशित हुआ था आज तक इसके 7 संस्करण

तुलना का आधार	*डीडीसी (दशमलव वर्गीकरण)*	*सीसी (कोलन वर्गीकरण)*
	प्रकाशित हो चुके हैं। 22वाँ संस्करण 2004 में प्रकाशित हुआ है।	प्रकाशित हो चुके हैं।
3. नामकरण	डीडीसी आँखो को आराम एवम् उच्चारण में विराम देने हेतु दशमलव बिन्दु (Decimal) का इसके प्रथम संस्करण में प्रयोग किए जाने के कारण इसका नाम **दशमलव वर्गीकरण** (Decimal Classification) किया गया।	सीसी में विषयों के पक्ष अंकों को जोड़नें के लिए प्रथम संस्करण में कोलन (:) का उपयोग किए जाने के कारण इसका नाम कोलन वर्गीकरण (Colon Classifiaction) किया गया।
4. प्रणाली का रूप	डीडीसी परिगणनात्मक प्रणाली की संरचना पर आधारित है।	सीसी पक्षात्मक प्रणाली की संरचना पर आधारित है।
5. अंकन का प्रयोग	डीडीसी में मात्र 0 से 9 तक की संख्याओं का उपयोग किया गया है इसलिए इसमें शुद्ध अंकन का प्रयोग है।	सीसी में संख्याओं के साथ-साथ अग्रेंजी वर्णमाला के दीर्घ एवम् लघु अक्षरों का भी उपयोग किया गया है। इसलिए इसमें मिश्रित अंकन का प्रयोग है।
6. मुख्य वर्गों की रूप रेखा	डीडीसी में ज्ञान-जगत को दस श्रेणी विभाजन (Decachotomy) आधार पर मात्र दस भागों में विभाजित किया गया है।	सीसी में सम्पूर्ण ज्ञान-जगत को बहुश्रेणी विभाजन (Poloychotomy) के आधार पर अनेक भागों में विभाजित किया गया है।
7. अनुसूची	डीडीसी की अनुसूची एक संख्यक है अर्थात् एक ही अनुसूची है जिसका आकार बहुत वृहत् है। इसमें सभी सम्भावित पदों के पूर्व निर्मित अंकन दिये हुए हैं।	सीसी की अनुसूची बहुसंख्यक आधार की है जिसमें सभी पदों हेतु पूर्वनिर्मित अंकन नही हैं। विश्लेषण एवम् संश्लेषण किया जाता है।
8. संयोजी चिन्ह	डीडीसी में मात्र 0 को ही संयोजी चिन्ह के रूप में कहीं-कहीं उपयोग करने का प्रावधान है अन्य कोई संयोजी चिन्ह उपयोग नहीं किया जाता है।	सीसी में पक्षों को जोड़ने के लिए अनेक संयोजी चिन्हों का प्रावधान किया गया है। , ; : . ' () आदि कई संयोजी चिन्ह उपयोग में लाये जाते हैं।
9. सहायक विधियाँ	डीडीसी में प्रमुख रूप से ग्राह्यता प्राप्त करने हेतु Add Device का प्रयोग किया जाता है जो विषय विधि के रूप में कार्य करती है।	सीसी में अनेक जैसे AD, SD, CD, GD, SID, आदि सहायक विधियों का उपयोग किया गया है।
10. अनुक्रमणिका	डीडीसी की अनुक्रमणिका एक विशेष प्रकार की अनुक्रमणिका है जिसे सापेक्षिक अनुक्रमणिका कहते हैं।	सीसी की अनुक्रमणिका साधारण प्रकार की है जिसे वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका कहते हैं।
11. ग्रंथांक	डीडीसी में ग्रंथों को ग्रंथांक प्रदान करने हेतु कोई प्रावधान नहीं है। इसमें **कटर** की लेखक सारणी की सहायता से ग्रंथांक निर्मित किया जाता है।	सीसी में ग्रंथाक प्रदान करने का पक्ष-सूत्र दिया गया है और उसकी सहायता से ग्रंथांक निर्मित किए जाते हैं।
12. वर्गीकरण की क्षमता	डीडीसी में सूक्ष्म विचारों (Micro Thoughts) को वर्गांक प्रदान करने में कठिनाई आती है क्योंकि इसमें ऐसा कोई प्रावधान नहीं है।	सीसी में सूक्ष्म से सूक्ष्म विचारों को सहायक विधियों के माध्यम से वर्गांक प्रदान किए जा सकते हैं।
13. संशोधन	डीडीसी का संशोधन एवम् विकास कार्य समय के परिप्रेक्ष्य में बड़ी तीव्र गति से चल रहा है और यही कारण है कि अब तक इसके 22 संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं।	सीसी के संसोधन एवम् विकास का कार्य बड़ी धीमी गति से चल रहा है। इसका प्रमाण है कि अब तक इसके कुल 7 संस्करण ही प्रकाशित हुए हैं।
14. पक्षपात	डीडीसी में अमेरिकी देशों, भाषाओं, धर्मों,	जबकि सीसी में ऐसा कोई आरोप नही

तुलना का आधार	डीडीसी (दशमलव वर्गीकरण)	सीसी (कोलन वर्गीकरण)
	साहित्य एवम् स्थानों को पूर्ण विशिष्टता प्रदान करने का पक्षपात पूर्ण होने का आरोप लगाया जाता रहा है।	लगाया जाता क्योकि इसमें भारतीयता एवम् विदेशों में कोई पक्षपात नही किया गया है।
15. उपयोग	डीडीसी का उपयोग विश्व के सभी देशों में किया जा रहा है इसलिए उपयोक्ता भी अत्यधिक है।	जबकि सीसी का उपयोग भारत में ही कुछ ग्रंथालयों में किया जाता है इसलिए इसके उपभोक्ता भी अत्यन्त कम है।

निष्कर्ष रूप में तुलनात्मक परीक्षण के आधार पर हम कह सकते हैं कि डीडीसी अपनी उपादेयता के कारण अत्यन्त लोकप्रिय हो रही है। वहीं सीसी केवल वृद्धि की ओर अग्रसर है।

प्रश्न-12 : डीडीसी, यूडीसी एवम् सीसी में मुख्य वर्गों की संरचना की विवेचना कीजिए ?

सन् 1876 से अबतक लगभग आठ ग्रंथालय वर्गीकरण पद्धतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। प्रारम्भ में परिगणनात्मक पद्धति से लेकर अब हम वैश्लेषी-संश्लेषणात्मक पद्धति की ओर आ पहुँचे हैं जो स्वछन्द पक्षात्मक होती है। इन पद्धतियों में किस प्रकार मुख्य वर्गों की संरचना की गई है उसका विवेचन किया जा रहा है।

1. डीडीसी में मुख्य वर्गों की संरचना (Structure of Main Classes in DDC) :

डीडीसी की संरचना में किसी स्पष्ट सैद्धांतिक आधार का प्रयोग नही किया गया है इसलिए इसके मुख्य वर्गों की संरचना दस श्रेणी विभाजन (Decachotomy) के आधार पर 10 विस्तृत भागों में विभक्त कर की गई है। मूल वर्ग परम्परागत शैक्षणिक विषयों अथवा अध्ययन के क्षेत्रों के आधार पर ही व्यवस्थित किये गये हैं। इसलिए डीडीसी पदानुक्रम पद्धति है जिसमें विषय-जगत को अरेबिक संख्याओं 0 से 9 तक के आधार पर निम्न 10 भागों में विभक्त किया गया है –

0.0 Generality
0.1 Philosohpy & Psychology
0.2 Religion
0.3 Social Sciences
0.4 Languages
0.5 Natural Sciences
0.6 Applied Sciences (Technology)
0.7 The Arts
0.8 Literature
0.9 Geography and History

व्यावहारिकता की दृष्टि से 0 तथा दशमलव विन्दु को विषय के वर्गांक में अन्तर्निहित माना जाता है इसलिए इन्हें मात्र 0, 1, 2, 3.....9 लिखा जाता है। इन सभी मुख्य वर्गों को पुनः 10 विभागों में तथा पुनः प्रत्येक विभाग को 10 उपविभागों में विभाजित किया गया है। इस प्रक्रिया को आवश्यकता के अनुसार आगे भी बढ़ाया जा सकता है।

2. यूडीसी में मुख्य वर्गों की संरचना (Structure of Main Classes in UDC) :

यूडीसी की मुख्य सारिणियों का क्रम डीडीसी पद्धति के समान्तर है इसलिए यहाँ भी ज्ञान-जगत को डीडीसी के समान ही 10 मुख्य वर्गों में विभाजित किया गया है जिन्हें 0 से 9 तक के अंक प्रदान किए गये हैं।

0 General Works
1 Philosophy, Psychology
2 Religion, Theology
3 Social Sciences
4 Linguistics, Languages
5 Natural Sciences and Mathematics
6 Applied Sciences
7 Fine Arts and Recreation
8 Literature
9 Geography, Biography, Histroy

तीन अंकों के बाद एक बिन्दु प्रयोग करने का नियम यूडीसी में भी प्रयोग किया गया है जो डीवी महोदय ने आँखों को आराम देने के लिए प्रयोग किया था अन्यथा इसका कोई भी महत्व नही है।

3. सीसी में मुख्य वर्गों की संरचना (Structure of Main Classes In CC) :

सीसी में मुख्य वर्गों की संरचना अन्य सभी वर्गीकरण पद्धतियों से अलग है तथा यहाँ मुख्य वर्गों का प्रतिष्ठापन ज्ञान-जगत बहुश्रेणी विभाजन के आधार पर किया गया है। रंगनाथन् ने मुख्य वर्गों के चार क्षेत्र (Zones) बनाये हैं। चारों क्षेत्रों में समाविष्ट मुख्य वर्गों के संकेत चिन्ह भी निश्चित किए हैं। मुख्य वर्गों को निम्न सारणी द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

क्षेत्र (Zone)	मुख्य वर्ग (Main Classes)	मुख्य वर्गों के नाम (Names with Notation)
Zone-1	1. Generalia approach main classes 2. Generalia main classes	a Generalia Bibliography k Generalia Encyclopaedia m Generalia Serials n Generalia Yearbook, Directory w Generalia Biography x Generalia Collection
Zone-2	Recently recognised main classes नवीन स्वीकार मुख्य वर्ग	1 Universe of knowledge 2 Library science 3 Book science 4 Journalism 5 Standardisation 6 Specification 7 Modelisation
Zone-3	Proper main classes यथार्थ मुख्य वर्ग	A Natural sciences B Mathematics F Technology J Agriculture M Useful Arts T Education ... ... Y Sociology Z Law
Zone-4	Newly emerging methodologies and techniques नवीन विधियाँ एवम् तकनीकियाँ	(g) Evaluation technique (a) Bibliographilogy (p) Conference technique (r) Administrative report technique (w) Biographology (y) Methodology of public relations

अतः इन वर्गांकों को लिखे जाने से ग्रंथों में क्रियाशीलता आती है।

5. प्रसूची का उपयोग संभव होता है – प्रसूची पत्रकों पर ग्रंथों के वर्गांक अंकित किये जाते हैं और अनेक ग्रंथालयों में प्रसूची वर्गांक के अनुसार ही व्यवस्थित होती है अतः प्रसूची का वास्तविक उपयोग अंकन के द्वारा ही सम्भव हो पाता है और अंकन के द्वारा ही ग्रन्थों की सही स्थिति प्रसूची के माध्यम से ही ज्ञात की जाती है।

6. अनुक्रमणिका की रचना – किसी भी वर्गीकरण पद्धति की अनुक्रमणिका (Index) अंकन के माध्यम से ही बनाई जा सकती है क्योंकि अनुक्रमणिका में विषयों के पदों के समक्ष ही उनके वर्गांक (अंकन) भी लिखे जाते हैं।

7. ग्रंथों का आदान-प्रदान संभव होता है – अंकन के द्वारा ही ग्रंथालयों में ग्रंथों को उपयोक्ताओं को आदान-प्रदान का कार्य सरलतम ढंग से सम्भव होता है।

8. पदों को स्मरण करने में सहायक – हम अनेक पदों को अंकन के माध्यम से ही याद करने में सफल हो पाते हैं अगर अंकन न होते तो यह कार्य सरल नही होता ।

प्रश्न-22 : अंकन के प्रकार बताते हुए उनके कार्य भी बताइये ?

ग्रंथालय वर्गीकरण का आधार अंकन होता है तथा अंकन का निर्माण प्रतीकों से होता है। अंकन वर्गीकरण की कृत्रिम भाषा है जिस पर वर्गीकरण पद्धति का सम्पूर्ण व्यावहारिक पक्ष आधारित होता है। अंकन के द्वारा ही वर्गीकरण में गतिशीलता आती है। अंकन के निम्न प्रकार होते हैं।

1. शुद्ध अंकन (Pure Notations) — जिस वर्गीकरण पद्धति में अंकन प्रणाली का आधार बनाने के लिए केवल एक ही प्रकार के अंकों का प्रयोग किया जाता है उसे **शुद्ध अंकन** कहा जाता है। वर्गीकरण के क्षेत्र में **मेलविल डीवी** ने अपनी दशमलव वर्गीकरण पद्धति (डीडीसी) में मात्र अरेबिक संख्याओं 1 से 10 तक का प्रयोग कर शुद्ध अंकन का प्रयोग किया है। इसी प्रकार विस्तारशील वर्गीकरण पद्धति (EC) में मात्र अँग्रेजी वर्णमाला के दीर्घ अक्षरों A से Z तक का प्रयोग शुद्ध अंकन के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं।

2. मिश्रित अंकन (Mixed Notations) — जब किसी भी वर्गीकरण पद्धति में मिश्रित अर्थात् मिले-जुले दो या तीन या कई तरह के अंकों का प्रयोग होता है तब प्रयुक्त अंकन को मिश्रित अंकन कहा जाता है। जैसे – रंगनाथन् की कोलन वर्गीकरण (CC) में अरेबिक संख्याओं 1 से 9 तक तथा अँग्रेजी वर्णमाला के दीर्घ अक्षर A से Z तक का उपयोग किया गया है जो मिश्रित अंकन का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।

3. पक्षात्मक अंकन (Faceted Notation) — ग्रंथों की बहुआयामी विषय-वस्तु को वर्गीकृत करने हेतु यदि बहुपक्षीय अंकन का उपयोग करके वर्गांक बनाया गया है तथा वर्गांक में प्रयुक्त अंकों को विभिन्न खण्डों में विभाजित करने के लिए जिन संकेत चिन्हों का प्रयोग किया गया है वे अंकों के लक्षण व स्वभाव आदि को अभिव्यक्त कर सकते हैं तो इस पहुपक्षीय अंकन को **पक्षात्मक अंकन** कहते हैं। **उदाहरण** –

Classification of periodicals in University of Rajasthan in 1997

इसका **सीसी** में वर्गांक → 234 ; 46:51.4437'N97

यूडीसी में वर्गांक → 027.7 : 05 : 025.4(540) "1997"

सीसी के वर्गांक में प्रयुक्त सभी संकेत चिन्ह अर्थगत संकेतक हैं तथा प्रत्येक संकेत चिन्ह आगे के अंक का अर्थ स्पष्ट करने में समर्थ है। इसलिए सीसी पद्धति का अंकन पक्षात्मक अंकन कहा जाता है जबकि **यूडीसी** के वर्गांक प्रयुक्त कोलन (:) चिन्ह अर्थहीन है केवल स्थान एवम् काल के लिए प्रयुक्त संकेत चिन्ह ही अर्थ संकेतक है इसलिए कुछ सीमा तक पक्षात्मक अंकन माना जा सकता है।

4. अपक्षात्मक अंकन (Non-Faceted Notation) — इस प्रकार के अंकन से बने वर्गांक में केवल एक ही खण्ड होता है अर्थात् विषय-वस्तु के बहुपक्षीय आयाम को वर्गीकृत करने के लिए जितने भी अंक प्रयुक्त होते हैं उनको एक खण्ड के रूप में लिखा जाता है। जैसे – **डीडीसी** के अनुसार Administrative regulations for elections in Australia का वर्गांक **342.940702636** बनता है जिसमें प्रयुक्त दशमलव बिन्दु अर्थहीन है तथा वर्गांकों से यह स्पष्ट नहीं होता है कि कौन-सा अंक विषय के किस तत्व को अभिव्यक्त करता है।

अंकन के कार्य (Functions of Notation) :

वर्गीकरण पद्धति के अस्तित्व का एक मात्र आधार अंकन ही होता है। अंकन ही वर्गीकरण पद्धति को उसका स्वरूप एवम् सार्थकता प्रदान करता है तथापि अंकन के प्रमुख कार्यों का उल्लेख उसकी उपयोगिता के आधार पर किया जाता है जो निम्न हैं –

1. अंकन वर्गीकरण पद्धति में वर्गों को स्थाई नाम प्रदान करता है।
2. अनुसूची में विषयों एवम् एकल विचारों को सहायक अनुक्रम में व्यवस्थित करता है।
3. अपने क्रमसूचक गुण के आधार पर विषयों को समकक्ष एवम् अधीनस्थ वर्गों में विभाजित कर उनके विकास के प्रत्येक स्तर को प्रर्दशित करता है।
4. वर्गीकरण पद्धति की वर्णानुक्रमी अनुक्रमणिका (Alphabetical Index) को क्रियाशीलता प्रदान करता है जिसके फलस्वरूप पद्धति में परिगणनात्मक वर्गों तक पहुँचा जा सकता है।
5. वर्णानुक्रमी प्रसूची तथा वर्गीकृत विषय प्रसूची को कार्यशील बनाता है।
6. निधानियों पर ग्रंथों की वर्गीकृत व्यवस्था को यान्त्रिक बनाता है।
7. उपयोक्ताओं को उनके वान्छित ग्रंथ तक पहुँचाता है।
8. आदान-प्रदान प्रक्रिया को सुचारुरूप से संचालित करने में सहायता करता है।
9. ग्रंथालय में प्रलेखन सेवाओं को गति प्रदान करता है।
10. ग्रंथालय के सम्बंध में विभिन्न प्रकार के डेटा व प्रतिवेदन तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है।
11. ग्रंथालय विज्ञान के 5 सूत्रों को क्रियान्वित करने में सहायक होता है।

प्रश्न-23 : अंकन की प्रमुख विशेषताओं की उदाहरण सहित विवेचना कीजिए ?

किसी भी वर्गीकरण पद्धति में अंकन का अत्यधिक महत्व होता है क्योंकि वर्गीकरण

का आधार ही अंकन है इसके अभाव में कोई भी वर्गीकरण पद्धति क्रियान्वित नही की जा सकती है। वर्गीकरण को क्रियान्वित करने के लिए अंकन में कुछ विशेषताओं का होना अत्यन्त आवश्यक है। सेयर्स महोदय ने वर्गीकरण में अंकन की निम्न विशेषताओं का प्रतिपादन किया है –

1. **सरलता (Simplicity)** — वही अंकन सरल माना जाता है जिसका उपयोग उपयोक्ता तथा ग्रंथालय के कर्मचारी आसानी से कर सकें, जिसको पढ़ने, लिखने एवम् याद करने में कोई असुविधा न हो तथा साथ ही जिसके अंकों व प्रतीकों तथा उनकी क्रमसूचक विशेषताओं से उसके उपयोगकर्ता पूर्णरूप से परिचित हों। दशमलव पद्धति (DDC) में प्रयुक्त अंकन 1 से लेकर 9 तक की संख्याएँ तथा विषय वर्गीकरण (SC) में प्रयुक्त A से Z तक के अक्षर। इन सभी को समझने एवम् प्रयोग करने में कोई असुविधा नहीं होती है ये ग्रंथों की विषय-वस्तु को सरल अंकों में व्यक्त करने की क्षमता रखते हैं।

2. **संक्षिप्तता (Brevity)** — अंकन की संक्षिप्तता अंकन प्रणाली के आधार के आकार पर निर्भर होती है। यदि पद्धति की अंकन प्रणाली का आधार बड़ा है तो अंकन उतना ही संक्षिप्त होगा तथा यदि आधार छोटा है तो अंकन उतना ही लम्बा होगा। जैसे **डीडीसी** तथा **यूडीसी** के अंकन का आधार केवल 10 अंक हैं जबकि **सीसी** में मिश्रित अंकन का उपयोग होने से पद्धति का आधार बड़ा है। इस बात को निम्न प्रकार से समझाया जा सकता है :

जिन वर्गीकरण पद्धतियों में अरेबिक संख्याओं अर्थात एक से दस तक की संख्याओं का उपयोग होता है तो उनके अंकन का आधार 10×10=100 और तीन अंकों का अंकन होने पर मात्र 10×10×10=1000 स्थान प्राप्त होते हैं लेकिन सीसी में रोमन वर्णमाला के A से Z तक 26 वर्णों के साथ 26×26 = 676 स्थान बनते हैं और तीन वर्णों के साथ 26×26×26=17576 स्थान प्राप्त होते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि ज्ञान के विभाजन में संख्याओं के उपयोग की अपेक्षा वर्णों के उपयोग से अधिक वर्गों का निर्माण होता है। मिश्रित अंकन का प्रयोग करने से अंकन प्रायः छोटे होते हैं।

विषय	डीडीसी अंकन	यूडीसी अंकन	सीसी अंकन
Psychology	150	159.9	S
Jainism	294.4	294.35	Q3

3. **ग्राह्यता (Hospitality)** — ग्राह्यता का अर्थ नवीन विषयों को अंकन में सही स्थान प्रदान करने की क्षमता से होता है। किसी भी वर्गीकरण पद्धति के अंकन में इस गुण का होना अनिवार्य एवम् महत्वपूर्ण है। वर्गीकरण प्रणाली की सम्पूर्ण सफलता उसके अंकन की ग्राह्यता पर आधारित होती है। यदि अंकन में यह गुण नहीं है तो कोई भी वर्गीकरण पद्धति इसके अभाव में आतिथेय (Uptodate) नहीं रखी जा सकती है। अंकन की ग्राह्यता के लिए वर्धनशीलता, विस्तारशीलता आदि पदों का भी उपयोग एक ही अर्थ एवम् उद्देश्य से किया जाता है। सेयर्स महोदय ने ग्राह्यता के इस गुण को स्पष्ट करते हुए कहा है कि -- किसी वर्गीकरण पद्धति में अंकन का निर्माण इस प्रकार करना चाहिए कि किसी अंकन के जोड़ से वर्गीकरण पद्धति में किसी भी स्थान पर किसी भी नवीन विषय को उसका उचित स्थान

प्रदान करने में अंकनों में किसी प्रकार के क्रम में अव्यवस्था न हो।

4. **स्मृति सहायक (Mnemonics)** — वर्गीकरण पद्धति में प्रयुक्त अंकन स्मृति सहायक होने चाहिए अर्थात् पद्धति में प्रयुक्त अंकनों को यदि बार-बार प्रयोग किया जाय तो उपयोक्ताओं को वे अंकन याद हो जाने चाहिए और यह तभी सम्भव है जब पद्धति के निर्माता ने विचार तथा अंकन धरातल पर इसके लिए पूर्ण योजना बनाई हो कि समान अर्थ वाले विषय, अवधारणाएँ अथवा एकल विचारों को अंकन स्तर पर एक ही अंक आवंटित किया जायेगा। जिससे कि समान अर्थ को अभिव्यक्त करने वाले ग्रंथों को वर्गीकृत करते समय वर्गीकार को तथा उन ग्रथों का बार-बार उपयोग करने वाले उपयोक्ताओं को यह याद हो जाये कि इस विषय के लिए इस पद्धति में क्या अंकन प्रयुक्त किया गया है। दूसरे शब्दों में स्मृति सहायक होने का अर्थ समान अर्थ वाली अवधारणाएँ, विषय अथवा एकल विचारों को सम्पूर्ण पद्धति में एक ही अंक से अभिव्यक्त किया जाना होता है। अंकन में स्मृति सहायक गुण मुख्यतः वर्गीकार के लिए अत्यन्त सहायक सिद्ध होता है क्योंकि अंकन के स्मृति में सहायक होने से उसे बार-बार वर्गीकरण पद्धति की सहायता नहीं लेनी पड़ेगी।

लगभग सभी वर्गीकरण पद्धतियों ने अपने अंकन को स्मृति सहायक बनाने का प्रयास विभिन्न माध्यमों से किया है जैसे – काल विभाजन, स्थान विभाजन, भाषा विभाजन, सामान्य एकल विचार आदि स्मृति में सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य विधियों का भी प्रावधान किया गया है। **पामर एवम् वेल्स** ने अंकन के इस गुण की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए बताया था कि वर्गों को प्रदान की जाने वाली ये यान्त्रिक विधियाँ हैं। वर्गीकरण पद्धतियों को आतिथेय रखने में इनसे सहायता मिलती है क्योंकि ऐसी विधियों में अंकन इस प्रकार से प्रयुक्त होते हैं कि उनका तात्पर्य निरन्तर एक ही होता है और सरलतापूर्वक स्मृति में धारण किया जा सकता है अतः इसे स्मृति सहायक का गुण कहते हैं।

प्रश्न-24 : किसी वर्गीकरण पद्धति में संयोजी चिन्हों का क्या आशय है? यूडीसी, डीडीसी तथा सीसी में किस प्रकार इनका उपयोग किया गया है। उदाहरण सहित समझाइये।

किसी भी वर्गीकरण पद्धति की अंकन प्रणाली दो प्रकार के चिन्हों -- (1) सारगर्भित चिन्ह, तथा (2) संयोजी चिन्ह से मिलकर बनती है जिनमें सारगर्भित चिन्ह वे होते हैं जो किसी विषय के विभिन्न पक्षों को अंकनों में प्रदर्शित करते हैं तथा संयोजी चिन्ह वे होते हैं जो उपरोक्त अंकनों को संयोजित (जोड़ने) के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं। सर्वप्रथम संयोजी चिन्हों का प्रयोग यूडीसी में किया गया था। रंगनाथन् ने भी अपनी सीसी में उपयोग किया और इनकी उपयोगिता के आधार पर इन्हें अनेक नामों से सीसी के विभिन्न संस्करणों में उपयोग किया। संयोजी चिन्हों को वास्तविक रूप में निम्न उदाहरण द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। मान लो कोई विषय – Classification of books in college libraries in India in 1970 है इसका सीसी में वर्गांक **233;14:51.44'N7** बनता है। इस वर्गांक में प्रयुक्त सेमीकोलन (;), कोलन (:), डॉट (.) तथा विपर्यस्थ कौमा (') सभी संयोजी चिन्ह हैं जो पक्षों 233, 14, 51, 44 तथा N7 को जोड़ने के लिए प्रयुक्त किए गए हैं।

6. टेलीफोन एवम् पत्राचार से प्राप्त सन्देश (Messages obtained by Telephone or Correspondence) — वैज्ञानिकों तथा अनुसंधानकर्त्ताओं के मध्य पत्राचार भी सू... प्राप्त करने का एक साधन बना हुआ है क्योंकि ये लोग पत्राचार करते समय अन्य बातों के साथ-साथ कुछ अनुसंधानिक महत्वपूर्ण तथ्यों का भी उल्लेख अपने पत्रों में करते हैं जो ... उपयोक्ताओं हेतु महत्वपूर्ण एवम् उपयोगी हो सकते हैं। इसी प्रकार टेलीफोन पर भी ... आपस में महत्वपूर्ण बातें होती हैं। ये सभी बातें अनौपचारिक स्रोतों की श्रेणी में आती हैं।

7. प्रगति कार्य (Work in Progress) — किसी भी अनुसंधान कार्य की प्रगति ... प्राप्त की जा सकती है जब वह प्रतिवेदन के रूप में पूर्ण हो जाता है। लेकिन यदि यह प्रगति किसी लेखक के द्वारा एकत्रित की जाती है तब अनौपचारिक रूप से सूचना प्राप्त की जा सकती है तथा समीक्षाओं में प्रकाशित की जा सकती है। इससे प्रगति कार्य एवम् उससे सम्बन्धित विवरण सम्बंधी सूचना प्राप्त हो जाती है।

8. पुनर्प्रतियाँ (Reprints) — पाण्डुलिपियाँ जो सेमीनारों में प्रस्तुत करने के लिए ... हैं उनकी प्रतियाँ सहयोगियों, सहपाठियों तथा वैज्ञानिकों को उपलब्ध कराई जा सकती हैं। इनसे उन लोगों को सहायता प्राप्त होती है जो सेमीनारों के लिए अपने आप को तैयार ... हैं तथा जो सेमीनार में प्रश्न करने हेतु बेहतर स्थिति में हो सकते हैं तथा जिस विषय पर सेमीनार में विचार-विमर्श चल रहा है उसे अच्छी तरह से समझने में सक्षम हो जाते हैं।

प्रश्न-3 : संस्थागत स्रोतों से आप क्या समझते हैं? आज ... संस्थागत सूचना स्रोतों के रूप में कौन-कौन से प्रकार के केन्द्र सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं ? समझाइये।

परम्परागत रूप से ग्रन्थालय ही उपयोक्ताओं को सुविधा एवम् सेवा प्रदान ... उद्देश्य से मध्यस्थ (Intermediator) के रूप मे कार्य करते आ रहे हैं। लेकिन अब ... में अन्य नवीन विशिष्ट प्रकार की सेवाएँ हमारे समक्ष आई हैं जो उपयोक्ताओं को सुलभ ... जा रही हैं। ये सेवाएँ ग्रन्थालय भी प्रदान करते हैं लेकिन उत्तम ढंग से एक विशेष प्र... केन्द्र ही प्रदान करने में सफल हो सकते हैं जो अपने क्षेत्र में विशिष्टता प्राप्त किये ... तथा एक संस्था के रूप में कार्य करते हैं। इसलिए ये सूचना के **संस्थागत स्रोत** (Institutional Sources) कहलाते हैं। इनमें सूचना केन्द्र, प्रलेखन केन्द्र, सूचना विश्लेषण केन्द्र ... केन्द्र प्रमुख हैं।

1. प्रलेखन केन्द्र (Documentation Centres) — ग्रन्थालय विशेषकर विशिष्ट ... अपने उपयोक्ताओं को विभिन्न प्रकार की सूचना सेवाएँ प्रदान करते हैं इनमें से कुछ प्रलेखन केन्द्र कहलाते हैं जिनका मुख्य उद्देश्य सूचना पुनर्प्राप्ति एवम् प्रकीर्णन की गति को ... है। ये प्रलेखन केन्द्र प्रायः संगठन से सम्बद्ध व्यक्तियों की माँगों की पूर्ति करते हैं ... मुख्य उद्देश्य पैतृक संस्था की आवश्यकताओं से सम्बद्ध होता है अर्थात् पैतृक ... उपयोक्ताओं को सेवा प्रदान करना ही इन केन्द्रों का उत्तरदायित्व होता है।

विश्व में यूनिस्को ने अनेक देशों में प्रलेखन केन्द्र स्थापित करने में अत्यधिक ... की है जो विभिन्न प्रकार की सेवाएँ प्रदान करते हैं। भारत में इन्सडॉक, सेन्डॉक, ... डेसीडॉक आदि अपने-अपने विषय क्षेत्रों में राष्ट्रीय स्तर के प्रलेखन केन्द्र हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र की एजेन्सियाँ प्रलेखन केन्द्र के रूप में कार्य कर रही हैं।

2. सूचना केन्द्र (Information Centres) — सूचना केन्द्र वास्तव में अन्य कुछ नहीं प्रलेखन केन्द्र ही होते हैं पर सूचना केन्द्र में प्रलेखों को महत्व न दिया जाकर प्रलेखों में निहित सूचनाओं को अधिक महत्व दिया जाता है। अर्थात् सूचना केन्द्र में सेवा प्रदान करने की इकाई प्रलेख न होकर सूचना ही होती है। सूचना के उपयोक्ता विशिष्ट क्षेत्रों से सम्बंधित होते हैं और इन्हें प्रलेखों की आवश्यकता न होकर उनमें निहित सूचना की ही मात्र आवश्यकता होती है।

3. सूचना विश्लेषण केन्द्र (Information Analysis Centres) — आज के नवीनतम परिवेश में उपयोक्ताओं के पास इतना समय नहीं है कि वे सूचना को खोजने में अपना अमूल्य समय लगा सकें। उसे तो सूचना केन्द्रों से यही अपेक्षा रहती है कि वे उसे उसकी वांछित सूचना को परिष्कृत करके ही उपलब्ध करायें। वे अपरिष्कृत (Raw) सूचना से संतुष्ट नहीं हो पाते हैं क्योंकि अपरिष्कृत सूचना के परिष्कृत करने हेतु उनके पास समय का अत्यन्त अभाव होता है उन्हें तो पूर्व परिष्कृत की हुई सूचना की आवश्यकता होती है। इसलिए सूचना विश्लेषण करने का कार्य सूचना विश्लेषण केन्द्रों का कार्य एवम् उत्तरदायित्व बन गया है। इस प्रकार **सूचना विश्लेषण केन्द्र** एक ऐसी संस्था के रूप में परिभाषित किए जा सकते हैं जो सूचना की अनुक्रमणिका, सारांश, अनुवाद, समीक्षा, संश्लेषण तथा मूल्यांकन आदि कार्य सम्पन्न करते हैं तथा सूचना का पूरी तरह से विश्लेषण करने के पश्चात् विश्लेषित सूचना उपयोक्ताओं को उपलब्ध कराते हैं। इस प्रकार सूचना-विश्लेषण केन्द्र उपयोक्ताओं को सुविधाजनक रूप में सूचना उपलब्ध कराने में एक अत्यन्त सक्षम सेवा व्यवस्था है।

4. डेटा केन्द्र (Data Centres) — डेटाकेन्द्र एक तरह से सूचना केन्द्र ही होते हैं पर वे सूचना को डेटाबेसों में संग्रह करते हैं जहाँ डेटाबेस डेटाओं का एक संगठित समूह होता है। डेटाबेस में डेटाओं का संग्रह दो प्रकार से किया जाता है। (अ) कार्ड्स, फाइल्स, लैजर्स आदि के माध्यम से किया जाता है तथा इनसे सूचना खोज मानव श्रम निधि (Manual) से की जाती है तथा (ब) दूसरी विधि सूचना को कम्प्यूटर के माध्यम से भी संग्रहीत की जाती है।

5. सन्दर्भ केन्द्र (Reference Centres) — प्रायः सन्दर्भ केन्द्र सूचना डेस्क कहे जाते हैं जो प्रमुख रूप से वैज्ञानिकों एवम् तकनीकी समुदायों हेतु सेवा प्रदान करते हैं। ये केन्द्र जैसा कि इनका नाम है उपयोक्ता द्वारा पूछताछ करने पर सूचनाएँ प्रदान करते हैं। ये केन्द्र उपयोक्ताओं को उन संगठनों या व्यक्तियों के बारे में सूचनाएँ देते हैं जहाँ से उपयोक्ता की वान्छित सूचना प्राप्त होने की सम्भावना होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रीय ग्रन्थालय का **राष्ट्रीय सन्दर्भ केन्द्र** एक उत्तम केन्द्र है जो महत्वपूर्ण सूचना स्रोतों की विस्तृत प्रसूची का रख-रखाव करता है साथ ही इन समस्त सूचना स्रोतों की एक निदेर्शिका प्रस्तुत करता है।

प्रश्न-4 : सूचना के नवीनतम इलैट्रोनिक माध्यमों की विशेषताओं सहित विवेचना कीजिए ?

एक समय था जब ग्रन्थालयों में सूचना का संग्रहण मुद्रित प्रलेखों जैसे — ग्रन्थ, सामयिकियाँ, मोनोग्राफ, पम्पलेट एवम् अनुसंधान प्रतिवेदन आदि में किया जाता था लेकिन

आज विभिन्न प्रकार की प्रौद्योगिकीयों के विकास एवम् उपयोग के कारण नवीनतम प्रकार के अमुद्रित रूप के स्रोतों में सूचना का संग्रहण किया जा रहा है जिनमें **इलैक्ट्रोनिक माध्यम** अत्यन्त ही महत्वपूर्ण हैं। इलैक्ट्रोनिक माध्यमों के द्वारा किसी भी सूचना का दूरस्थ स्थान तक भेजना तथा टेलीविजन पर प्रदर्शित करना अत्यन्त ही सरल हो गया है। इलैक्ट्रोनिक माध्यमों को दो वृहत् श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। (1) व्यक्ति से व्यक्ति माध्यम तथा (2) प्रसारण (Broadcasting) माध्यम। व्यक्ति से व्यक्ति माध्यम में सूचना टेलीफोन या टेलीग्राम के द्वारा पहुँचाई जाती है तथा प्रसारण माध्यम में सूचना को इलेक्ट्रोनिक तरंगों के रूप को इलेक्ट्रोमैग्नेटिक स्पेक्ट्रम (Electromagnetic Spectrum) में भेजना पड़ता है। प्रसारण माध्यमों में नवीनतम विकास सेटेलाइट संचार पद्धति का उपयोग किया जाता है।

इन इलैक्ट्रोनिक माध्यमों के अतिरिक्त सूचना के सम्प्रेषण में जो नवीनतम इलेक्ट्रोनिक माध्यम अभी कुछ समय पहले ही विकसित हुए हैं। वे निम्न प्रकार हैं –

1. ई-मेल (Electronic Mail) – ई-मेल परम्परागत प्रचलित डाक सेवा का ही नवीनतम विकल्प है जिससे कम्प्यूटर के माध्यम से सूचनाओं को सम्प्रेषित किया जाता है। इस प्रकार ई-मेल सूचनाओं अथवा प्रलेखों को इलेक्ट्रोनिक स्वरूप में भेजने की एक विधि है। ई-मेल पद्धति में वीडियो टर्मिनल के द्वारा सूचना का निवेश व निर्गम किया जाता है अथवा कम्प्यूटर के प्रिन्टर को वर्ड प्रोसेसर के साथ जोड़ने से भी यह क्रिया सम्भव है।

इसमें प्रत्येक उपयोक्ता को एक मेल बाक्स उपलब्ध कराया जाता है। उपयुक्त आदेशों एवम् निर्देशों का पालन करते हुए उपयोक्ता मेल बाक्स में सन्देशों की सूची का अध्ययन कर विशेष संदेश की विषय-वस्तु का प्रदर्शन तथा दूसरे उपयोक्ताओं को संदेश भेजने आदि का कार्य कर सकता है। सन्देश भेजते समय प्राप्तकर्त्ता का कम्प्यूटर पर उपस्थित रहना आवश्यक नहीं है। मेल बाक्स में संदेश तब तक संग्रहीत रहता है जब तक उसे प्राप्तकर्त्ता द्वारा पढ़ा या पढ़ नहीं लिया जाता है। इससे सर्वाधिक लाभ संदेश भेजने में लगने वाले समय में अत्यधिक कमी होना है तथा इसमें संदेश भेजने में अधिक व्यय भी नहीं करना पड़ता है तथा साथ ही कागज तथा समय दोनों की बचत भी होती है।

2. टेलीटेक्सूट एवम् वीडियोटेक्सूट (Teletext and Videotext) – टेलीटेक्सूट तथा वीडियोटेक्सूट दोनों ही पारस्परिक क्रिया करने वाली सेवाएँ हैं जो इनका उपयोग करने वाले को सूचना की संरचना तैयार करने की मदद करती हैं लेकिन इन दोनों की तकनीकि में अन्तर है। टेलीटेक्सूट में वायु में होकर संदेश संचरित होता है जबकि वीडियोटेक्सूट में संदेश केबिल में होकर संचरित होता है। वीडियोटेक्सूट में व्यक्ति सूचना प्राप्त करने के लिए टेलीफोन लाइन अथवा केबिल टेलीविजन लाइन पर एक सेन्ट्रल कम्प्यूटर से अपनी वान्छित सूचना प्राप्त कर सकता है। टेलीटेक्सूट इसके विपरीत वह पद्धति है जिसमें पूर्व में संग्रहीत की गई सूचना को माँग करने पर सुलभ कराया जाता है। टेलीटेक्सूट एवम् वीडियोटेक्सूट सूचना संचार की नवीनतम तकनीकियाँ हैं जिन्होंने इस क्षेत्र में क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। इन्होंने घरेलू टेलीविजन को कम्प्यूटर की शक्ति प्रदान करके मनोरंजन के माध्यम (टेलीविजन) को सूचना सम्प्रेषण के एक उपकरण के रूप मे परिवर्तित कर दिया है। इनके साथ ही वीडियोटेक्स एक सामान्य पद है जिसमें उपरोक्त दोनों ही समाहित होती हैं।

3. फैक्स (Fax) – इलैक्ट्रोनिक माध्यमों में टेलीफोन माध्यम ऐसा माध्यम था जिससे हम अपने स्वर (ध्वनि) को मात्र अपने ही देश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने में सफल हुए। इसके बाद टेलेक्स द्वारा विश्व के किसी भी स्थान को या किसी भी स्थान से सूचना को प्राप्त कर सकते हैं एवम् भेज भी सकते हैं। इसके बाद फैक्स या फेसीमाइल द्वारा किसी भी प्रकार के मूल ग्रन्थ, गणितीय प्रतिरूप, चित्र, चार्ट अथवा लिखित संदेश को एक स्थान से दूसरे स्थान को ज्यों का त्यों कुछ ही सैकिण्डों या मिनटों में सम्प्रेषित कर सकते हैं। फैक्स में संदेश भेजने की प्रक्रिया इस प्रकार चलती है।

जिन प्रलेखों को ग्रथालयों से भेजना होता है उनका सर्वप्रथम फैक्स मशीन द्वारा स्केन किया जाता है इसके बाद इनको विद्युत तरंगों में परिवर्तित करके साधारण टेलीफोन लाइन द्वारा भेज दिया जाता है। जहाँ सूचना भेजी जा रही है उस पर स्थित फैक्स मशीन टेलीफोन द्वारा प्राप्त करके उन विद्युत तरंगों को पूर्व स्वरूप में परिवर्तित कर देती है। इस प्रकार सूचना मूल रूप में प्राप्त हो जाती है।

4. केबिल टेलीविजन प्रणाली (Cable Television System) – यह प्रणाली तार सहित उच्च क्षमता युक्त संचार प्रणाली है इसमें सूचना केन्द्रीय संसाधन से प्रवाहित होकर प्रमुख वितरण केबिल के द्वारा सम्बद्ध पंक्तियों में होते हुए अन्त में गन्तव्य तक पहुँचती है। यह प्रणाली केबिल प्रणाली का विस्तार अथवा टेलीविजन सिग्नल्स को हवा में होकर वितरण करने हेतु स्थानापन्न प्रणाली है। केबिल टेलीविजन प्रणाली द्वारा स्थापित नेटवर्क के अन्तर्गत म्यूजीकल चैनलों के साथ-साथ विशिष्ट सूचना चैनल तथा सभी प्रकार के मूलपाठ सेवा प्रणालियों में निहित होती है जिनमें पारस्परिक क्रिया की क्षमता भी है जिनका उपयोग घरेलू, बैकिंग, अग्निशमन, पुलिस एवम् आपात्कालीन स्वास्थ्य सेवाओं के लिए सम्मिलित करके किया जा सकता है।

5. कम्प्यूटर नेटवर्किंग (Computer Networking) – समस्त संचार प्रणालियों में कम्प्यूटर उनकी आत्मा है। इलैक्ट्रोनिक कम्प्यूटर डिजीटल संचार विधि का प्रमुख उदाहरण है जिसमें जिस टेलीफोन नम्बर पर संदेश भेजना है उसका नम्बर अपने टेलीफोन नम्बर पर लगाइये और नम्बर मिल जायेगा। अनेक कम्प्यूटरों एवम् टर्मिनलों को जोड़कर संचार नेटवर्क स्थापित किया जा सकता है। कम्प्यूटर नेटवर्किंग में जब कम्प्यूटर एक दूसरे के साथ टेलीफोन पर सूचनाओं का आदान-प्रदान करते हैं तब सूचनाएँ एक विशिष्ट कोड में सम्प्रेषित की जाती हैं तब ये सूचनाएँ दूसरे कम्प्यूटर में पहुँचती हैं तब उन्हें दृश्य रूप में अथवा मुद्रित रूप में डीकोड किया जा सकता है।

प्रश्न-5 : सूचना स्रोतों के फिल्म माध्यम आरूपों के सभी प्रकारों की विवेचना कीजिए ?

ग्रन्थालयों में परम्परागत प्रलेखों जैसे – पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं के अतिरिक्त अमुद्रित आरूप में अन्य प्रकार की सामग्री भी आजकल संग्रहीत की जाती हैं। इस अमुद्रित सामग्री में अनेक ऐसी विशेषताएँ हैं जो उन्हें मुद्रित सामग्री से पृथक करती हैं। इस प्रकार की अमुद्रित सामग्री का उपयोग एक विशेष प्रकार के उपकरणों की सहायता से ही किया जा

सकता है। सामान्यतया अमुद्रित सूचना सामग्री में फिल्में, चुम्बकीय सामग्री तथा प्लास्टिक सामग्री ही सम्मिलित की जाती है। हमारा यहाँ उद्देश्य केवल फिल्म माध्यमों का विवरण प्रस्तुत करना है।

फिल्म माध्यम (Film Mediums) :

फिल्म माध्यम वे होते हैं जिनमें किसी भी प्रकार की फिल्में उपयोग में लाई जाती हैं। फिल्मों का पोलिस्टर आधार होता है जिस पर दूध जैसे सफेद तेलीय तरल पदार्थ की परत चढ़ी हुई होती है। इस परत पर जब कोई आकृति का प्रकाश आता है तो प्रकाश के स्थिरीकरण के द्वारा अन्य रासायनों की प्रक्रिया के प्रति उत्तर में आकृति का चित्र बनता है। फिल्म के किनारों पर दोनों ओर छिद्र होते हैं जिनका उपयोग फिल्म को कैमरा अथवा प्रोजेक्टर पर चलाने के लिए किया जाता है। इन पारदर्शी फिल्मों का उपयोग विभिन्न आरूपों में किया जाता है। फिल्म माध्यमों के अनेक प्रकार होते हैं –

1. सिनेमा फिल्में (Cinema Films) – सिनेमा फिल्में काफी लम्बी रीलों की होती हैं जिनमें आकृति उर्ध्वाधर रूप से व्यवस्थित होती है इनमें दोनों ओर छिद्र होते हैं। जब फिल्मों की रील को उपयुक्त गति से प्रोजेक्टर पर चलाकर पर्दे (Screen) पर दिखाया जाता है तब एक निरंतर गति का दृश्य (Scene) उपस्थित होता है। सिनेमा फिल्में कई आकारों में प्राप्त होती हैं। जिन फिल्मों में ध्वनि सुनाई देती है वे 35 मिमी तथा 16 मिमी के आकार में उपलब्ध हैं तथा ध्वनि रहित फिल्में 16 मिमी एवम् 8 मिमी आकार में उपलब्ध रहती हैं लेकिन अब ध्वनि रहित फिल्मों का प्रचलन बंद हो गया है।

2. फिल्म स्लाइड्स (Film Slides) – फिल्म स्लाइडें गत्ते अथवा प्लास्टिक फ्रेम पर चढ़ी हुई एकाकी फ्रेम फोटो ग्राफिक आकृतियाँ होती हैं। इन स्लाइडों का उत्पादन विभिन्न परिमाणों के आरूपों में किया जाता है जो 35 मिमी से 250 मिमी वर्ग के मध्य हो सकती है। स्लाइडों को एक संदूक में समुच्चयों के रूप में क्रम से रखा जाता है। बड़े प्रोजक्टरों के लिए बड़ी स्लाइड्स उपयुक्त रहती हैं।

3. फिल्म स्ट्रिप्स (Film Strips) – फिल्म स्ट्रिप्स फीते के रूप में होती हैं तथा ये दो अलग-अलग आरूपों में उपलब्ध आकृतियों का संग्रह होती हैं। वे आरूप एकाकी (अर्ध फ्रेम) तथा द्विगणित (पूर्ण फ्रेम) होते हैं। इनमें से प्रथम अर्थात् एकाकी (अर्ध फ्रेम) प्रोजेक्टर के द्वारा उर्ध्वाधर रूप में चलते हैं तथा दूसरे अर्थात् द्विगणित (पूर्ण फ्रेम) समानान्तर रूप से चलते हैं। फिल्म स्ट्रिप्स प्रायः लघु चक्राकार गेमेस्टर में आती है। जो आकृतियाँ इन फिल्म स्ट्रिप्स में बनी होती हैं उनकी व्याख्या करने वाली टिप्पणी इनके साथ ही प्रदान की जाती है।

4. माइक्रोफोर्म (Micro Forms) – माइक्रोफार्म किसी भी प्रलेख का एक ऐसा आरूप होता है जिसे अत्यन्त ही सूक्ष्म रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। यह एक जातीय पद है। इसमें कागज या अन्य सामग्री की प्लेट पर या रील फिल्म पर किसी भी आरूप में सूक्ष्म आरूप निर्मित किया जाता है। माइक्रोफोर्म विधि के आविष्कार से ग्रन्थालयों में स्थान की कमी की समस्या अधिकतम सीमा तक हल हो गई है। इनका प्रयोग आधुनिक समय में अत्यधिक मात्रा में किया जा रहा है। माइक्रोफोर्म एक तरह से परम्परागत प्रलेखों के सूक्ष्म आरूप होते हैं इनमें तथा परम्परागत प्रलेखों में आकार, परिमाण तथा सामग्री की प्रकृति सम्बन्धी अन्तर तो होता है परन्तु इनमें निहित अन्तर्वस्तु में कोई अन्तर नहीं होता है। माईक्रोफोर्म विभिन्न रूपों में उपलब्ध होते हैं।

(अ) माइक्रो फिल्म (Mirco Films) – यह एक पारदर्शक फिल्म होती है जिस पर मुद्रित सामग्री का कम किये हुए पैमाने पर फोटोग्राफिक अभिलेख होता है। इसमें भारी तथा दुर्लभ प्रलेखों का सूक्ष्मीकरण करके रखा जाता है। रोजाना प्रकाशित किसी समाचार-पत्र के एक वर्ष के सम्पूर्ण अभिलेख को 35 मिमी वाली एक रील में कम करके अभिलेखबद्ध किया जा सकता है जिसकी लम्बाई अधिक से अधिक सिगरेट के दो पैकिटों की लम्बाई के बराबर हो सकती है। यह बाजार में 35 मिमी तथा 16 मिमी वाले दो आकारों में उपलब्ध है। यह रंगीन अथवा स्वेत-श्याम सभी प्रकारों में उपलब्ध है। यह दो आरूपों **रौल फिल्म** तथा **स्ट्रिप्स फिल्म** में प्राप्य है।

(ब) माइक्रो फिश (Mirco Fiche) – यह पोस्टकार्ड के लगभग आकार (3" × 5" अथवा 4" × 6") की पारदर्शक फिल्म की शीट होती है। यह प्रलेखों की कई पंक्तियों की न्यून की गई आकृतियों से निर्मित होती है। इसमें चित्रों को फिल्म की पारदर्शी शीट पर रिपीट कैमरा की सहायता से उत्पादित किया जाता है। किसी मानक माइक्रोफिश में 60, 72 अथवा 98 फ्रेम हो सकते हैं। माइक्रोफिश की चोटी पर उसकी अन्तर्वस्तु से सम्बंधित सूचना अंकित होती है। ये रंगीन तथा स्वेत-श्याम दोनों प्रकारों में उपलब्ध होती है। माइक्रोफिल्म दो प्रकारों **सुपरफिश** तथा **अल्ट्राफिश** में उपलब्ध है।

(स) माइक्रो-ओपैक (Mirco-Opaque) – ये माइक्रोफिश के समान ही होते हैं इसमें तथा माइक्रोफिश में मात्र अन्तर इतना है कि इसमें सूचना फिल्म पर उत्पादित न करके सफेद अपारदर्शक पत्रक पर उतारी जाती है। ये अधिक लोकप्रिय नहीं है तथा धीरे-धीरे अप्रचलित से हो रहे हैं। माइक्रो-ओपैक प्रायः तीन आरूपों माइक्रोकार्ड, माइक्रोप्रिन्ट तथा माइक्रोटेप में उपलब्ध होते हैं। इनमें सर्वाधिक उपयोग किया जाने वाला माइक्रोकार्ड आरूप है जो 3"×5", 4"×6", 5"×8" तथा 6"×8" के आकारों में उपलब्ध है। एक माइक्रोकार्ड में लगभग 80 पृष्ठों की मुद्रित सामग्री समाहित हो जाती है।

(द) एपर्चर कार्ड (Aperture Cards) – यह लगभग 7"× 3" का अपारदर्शक पत्रक होता है ये एक तरह के पत्रक के टुकड़े होते हैं जिनमें एक खिड़की होती है जिसमें माइक्रोफिल्म लगाई जा सकती है। एपर्चर कार्ड पर 35 मिमी तथा 16 मिमी की कई फिल्में लगाई जा सकती हैं। पत्रक में आकृति के बारे में सूचना रहती है जिससे सूचना की छँटाई, भण्डारण एवम् पुनर्प्राप्ति में सहायता प्राप्त होती है।

(य) कम्प्यूटर द्वारा निर्गत माइक्रोफार्म्स (Comptuer output Microforms-COM) – प्रथम कॉम अभिलेखक 1957 में निर्मित किया गया था जिसके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से सूक्ष्म अभिलेखीकरण होता था तब इसे माइक्रोरिकार्डिंग (सूक्ष्म अभिलेखीकरण) कहते थे यह पैदैव बदलने वाली प्रक्रिया रही है इसके दो प्रकार **कॉम फिल्म** तथा **कॉम फिश** हैं।

प्रश्न-6 : ई-प्रलेख से आप क्या समझते हैं ? इनकी आज क्यों आवश्यकता है तथा इनसे क्या लाभ हैं ? समझाइये ।

परम्परागत रूप से मुद्रित ग्रन्थ ही ग्रन्थालयों में अधिकांश रूप से संग्रहीत किये जाते रहें है जिनमें अनेक गुण होते हुए भी कुछ कमियाँ भी होती हैं। जैसे कि एक स्थान से दूसरे स्थान को लाने ले जाने में असुविधा, कीमतों में वृद्धि तथा इनका रख-रखाव आदि। साथ ही इनमें सूचना को खोजना और उसे प्राप्त करना भी कठिन कार्य है। इसलिए इन कठिनाइयों के कारण ग्रन्थालयों में वर्तमान कम्प्यूटर एवम् प्रौद्योगिकियों के माध्यम से इलेक्ट्रोनिक रूप में सूचना उत्पादों का प्रादुर्भाव सम्भव हो सका है जो कभी असम्भव था।

प्रलेखों का डिजीटल रूपान्तरण **ई-प्रलेख** (E-Documents) कहलाता है जो इलैक्ट्रोनिक विधियों से संग्रहीत एवम् प्राप्त किये जा सकते हैं तथा इन्हें एक पर्सनल कम्प्यूटर से अथवा किसी ई-बुक्स रीडर की सहायता से पढ़ा जा सकता है। इस प्रकार ई-प्रलेख कई ढंग से पूर्ण कुशलता का साधन हैं जिन्हें आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। ई-प्रलेख मुद्रित प्रलेखों की अपेक्षा अधिक उपयोगी तथा लाभदायक होते हैं।

ई-प्रलेखों की आवश्यकता (Need of E-ducuments in Libraries) :

ग्रन्थालयों एवम् सूचना केन्द्रों में परम्परागत मुद्रित ग्रन्थों के स्थान पर इलेक्ट्रोनिक प्रलेखों की आवश्यकता निम्न कारणों से होती है –

1. संग्रहण की अपार क्षमता – इसमें सूचना का संग्रहण एक समय में बहुत अधिक मात्रा में किया जा सकता है।

2. खोज – चूँकि ई-बुक्स आधारभूत रूप में पाठ्य-आधारित फाइलें होती हैं इसलिए इनमें किसी भी ई-बुक्स के किसी भी एक भाग की खोज पूरा ग्रन्थ पढ़े बिना कर सकते हैं।

3. आकार – एक समय में पॉकेट पर्सनल कम्प्यूटर पर अधिक संख्या में ई-बुक्स को ले जाने के अतिरिक्त यह कम्प्यूटर न केवल किसी मुद्रित पुस्तक के आकार से छोटा होता है बल्कि यह पॉकेट पर्सनल कम्प्यूटर के अन्य सभी कार्य भी करता है।

4. डाउनलोड की सुविधा – उपयोक्ता के पर्सनल कम्प्यूटर में डाउनलोड करने के लिए ई-बुक्स की विषय-सूचियाँ उपलब्ध रहती हैं।

5. ई-बुक्स रीडर – ई-बुक्स की विषय-सूचियाँ हार्डवेयर विधि को समर्पित होती हैं जिसमें उच्च श्रेणी की गुणवत्ता का स्क्रीन होता है जिसमें ग्रन्थ पढ़ने की विशिष्ट क्षमता होती है।

6. वेब पर उपलब्धता – ई-बुक्स सर्विस प्रोवाईडर की वेबसाईट पर मौजूद रहती हैं इन्हें कुछ शुल्क देकर ई-बुक्स तक पहुँचा जा सकता है।

7. प्रतिलिपि की सुविधा – चूँकि कम्प्यूटर उच्च श्रेणी के प्रिन्टर्स से जुड़ा रहता है इसलिए यदि किसी उपयोक्ता को प्रति निकालनी है तो वह प्रिन्टर की सहायता से प्राप्त की जा सकती है।

ई-प्रलेखों से लाभ (Advantages of E-documents) :

ग्रन्थालयों के उपयोक्ताओं को ई-प्रलेखों से निम्न प्रकार लाभ होते हैं –

1. ये शीघ्रतम प्राप्त किये जा सकते हैं।

2. ये प्रत्येक क्षण अद्यतन एवम् संशोधित किए जा सकते हैं क्योंकि इनमें अन्तिम समय तक की सूचनाएँ सम्मिलित की जा सकती हैं।
3. ई-प्रलेखों के साथ कुछ अतिरिक्त सूचनाएँ भी उपयोक्ताओं को प्राप्त होती हैं। अधिकांश ई-प्रलेख बोनस रूप में अन्य अतिरिक्त सूचनाएँ भी प्रदान करते हैं जो प्रायः मुद्रित ग्रन्थ को क्रय करते समय नहीं प्राप्त की जा सकती हैं।
4. ई-प्रलेख अत्यन्त ही नगण्य स्थान घेरते हैं इसलिए ग्रन्थालयों की स्थान की समस्या का बिल्कुल अन्त हो गया है। अब ग्रन्थालयों की स्थापना हेतु स्थान की कोई आवश्यकता नहीं होती है।
5. ई-प्रलेखों के निर्माण में प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग नहीं होता है जबकि परम्परागत ग्रन्थों के निर्माण में कागज, धागा, लुग्दी, गत्ता आदि प्राकृतिक संसाधनों की आवश्यकता होती है।
6. इन्हें डेक्सटॉप, नोटबुक अथवा ई-मेल रीडर पर देखकर अपनी वान्छित सूचना को प्राप्त करना अत्यन्त सरल है अर्थात् यदि उपरोक्त उपकरण आपके पास हैं तो इसका अर्थ है कि आपके पास ग्रन्थालय उपलब्ध है।
7. सन्दर्भों को एक दूसरे से जोड़ा जा सकता है और अन्य सन्दर्भों को इलैक्ट्रोनिक प्रलेख में उचित स्थान दिया जा सकता है। पढ़ते समय हॉट लिंक्स (Hot links) पर क्लिक करके अधिक सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं।
8. ई-प्रलेखों में विश्व के किसी भी स्थान पर सूचना की खोज की जा सकती है तथा इनमें से सूचनाएँ भी त्वरित गति से प्राप्त की जा सकती हैं।

प्रश्न-7 : सीडी-रोम से आप क्या समझते हैं ? सीडी-रोम में क्या विशेषताएँ होती हैं ? विवेचना कीजिए ।

सूचना संग्रहण एवम् प्रकीर्णन के क्षेत्र में सीडी-रोम प्रौद्योगिकी का विकास एक महत्वपूर्ण एवम् अत्यन्त उपयोगी विकास माना जाता है। इस प्रौद्योगिकी के आविष्कार के फलस्वरूप सीडी-रोम का निर्माण सम्भव हो सका है जिसमें सूचनाओं के डेटाओं का संग्रह करने की अपार क्षमता है तथा साथ ही इसके माध्यम से इसमें से डेटाओं के अभिगम एवम् पुनर्प्राप्ति की प्रक्रिया अत्यन्त सरल एवम् सुविधाजनक हो गई है।

सीडी-रोम लैसर डिस्क का ग्रामोफोन रिकार्ड की भाँति 4.72 इंच व्यास का एक आरूप होता है जिसका आकार फ्लॉपी डिस्क से छोटा होता है तथा इसका डिस्क एक प्लास्टिक के कवर से ढका होता है इसलिए यह सुदृढ़ होता है। सीडी-रोम का पूरा नाम **कम्पैक्ट डिस्क रीड ऑनली मैमोरी** (Compact Disk-Read Only Memory) होता है। इसका उपयोग करने हेतु माईक्रो कम्प्यूटर का होना अति आवश्यक होता है। डिस्क का अवलोकन अथवा अध्ययन इसके रीडर द्वारा किया जाता है जिसे सीडी-रोम ड्राइव कहते हैं। सीडी-रोम रीडर में निहित होता है जिसका प्रकाश सीडी-रोम डिस्क की सतह में पहुँच जाता है। डिस्क के ऊपर दाग (Pits) तथा सतह लैसर के प्रकाश को प्रतिबिम्बित कर देता है इससे अंकों में सूचना संग्रह का कार्य सम्पन्न होता है। डिस्क पर इस तरह से अभिलेखबद्ध की गई कोई

भी सूचना डेटा अथवा चित्र परिवर्तित, संशोधित अथवा मिटाया नही जा सकता है। मात्र इसे केवल इसे पढ़ा (Read only) ही जा सकता है इसलिए इसे रोम (ROM — Read Only Memory) कहा जाता है। इस प्रकार की डिक्स को लगभग 100 वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। आकार में लघु तथा भार में अत्यन्त हल्का होने के कारण इसे कहीं भी ले जाया जा सकता है।

सीडी-रोम की विशेषताएँ (Characteristics of CD-ROM) :

सूचना संग्रहण एवम् वाहक के रूप में सीडी-रोम की उपयोगिता उसकी निम्न विशेषताएं के कारण होती है –

1. सुविधा जनक (Convienient) – सीडी-रोम का उपयोग करने में जो स्थिति ऑनलाइन खोज के लिए आवश्यक होती है उसकी आवश्यकता इसमें नही पड़ती है। इसलिए अत्यन्त ही सुविधाजनक है।

2. सरल (Easy) – सीडी-रोम डिस्क को संचालित करना अत्यन्त सरल होता है क्योंकि यदि एक बार इसकी प्रक्रिया किसी व्यक्ति द्वारा समझ ली जाती है तो वह पुनः बिना किसी सहायता के अपनी खोज स्वयं इसके माध्यम से कर सकता है जिससे सूचना पुनर्प्राप्ति में लगने वाले समय में बचत होती है तथा उपयोक्ता भी खोज में सरलता का अनुभव करता है।

3. विश्वसनीय (Reliable) — चूँकि सीडी-रोम का उपयोग करने में किसी बाहरी तत्व की आवश्यकता नहीं होती है इसलिए सीडी-रोम के द्वारा खोज करना ऑनलाइन खोज की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय होता है।

4. अल्पव्ययी (Economical) – सीडी-रोम का उपयोग करने हेतु माइक्रो कम्प्यूटर जिसे सूचना सेवाओं के अन्य कार्यों में भी उपयोग में लाया जाता है इसके उपयोग के काम में लिया जा सकता है जिससे अन्य व्यय करने की आवश्यकता नहीं होती है। इसके लिए मात्र सीडी-रोम प्लेयर जिसे ड्राइव भी कहते हैं की आवश्यकता पड़ती है जिसके लिए अत्यन्त अल्प धन व्यय करना पड़ता है। अतः यह अल्पव्ययी रहता है।

5. लघु आकार (Small size) – सीडी रोम एक तरह से डिस्क होता है जिसका आकार अत्यधिक छोटा 4.72" व्यास का होता है। इसकी मोटाई अल्पतम अर्थात 0.47 इंच तथा इसका भार केवल लगभग 25 ग्राम होता है। अतः इसके आकार एवम् भार के कारण इसे कहीं भी लाने ले जाने में कोई भी कठिनाई नहीं होती है। अतः यह अत्यन्त सुविधाजनक रहता है। इसकी संग्रहण क्षमता अत्यधिक है फिर भी यह अत्यन्त ही कम अर्थात इसकी क्षमता की उपेक्षा नगण्य स्थान घेरता है।

6. सुदृढ़ एवम् टिकाऊ (Robust and Durable) — सीडी-रोम का ऑप्टीकल डिस्क अधिक सुदृढ़ एवम् टिकाऊ होता है क्योंकि इसकी डिस्क पर प्लास्टिक की पर्त चढ़ी होती है। यह कम से कम 10 वर्ष तक सावधानी के साथ उपयोग में लाया जा सकता है तथा लघु होने के कारण इसकी सुरक्षा हेतु विशेष प्रयास की आवश्यकता नहीं होती है।

7. विशिष्ट क्षमता (Specific Capability) – सीडी-रोम एक अंकीय माध्यम है। इसमें किसी भी प्रकार के डेटाओं का संग्रहण एवम् समाहित करने की क्षमता इसमें निहित है। इसमें एक डिस्क पर मूलपाठ, ध्वनि, छायाचित्र आदि को भी समाहित किया जा सकता है। एक

एक डिस्क में 600 मैगाबाइट सूचना को संग्रहीत करने की क्षमता है जो किसी भी विश्वकोश के आकार वाले 2,50,000 मुद्रित पृष्ठों के बराबर होती है।

8. साफ्टवेयर नियन्त्रण (Software Control) – सीडी रोम डिस्क में किसी भी सूचना सामग्री को आकस्मिक रूप से कहीं से भी अवलोकन किया जा सकता है। कोई भी शब्द अथवा सूचना कभी भी खोजी अथवा देखी जा सकती है। इसमें ऑनलाइन डेटाबेस की तरह आन्तरिक रूप से भी सूचना खोजी जा सकती हैं। इस प्रकार यह सॉफ्टवेयर नियन्त्रण का एक अच्छा साधन है।

प्रश्न-8 : सन्दर्भ स्रोत के रूप में शब्दकोश का आशय समझाइये ? ये कितने प्रकार के हो सकते हैं ? इनकी उपयोगिता एवम् महत्व भी समझाइये।

किसी शब्द की बोधगम्यता प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम उस शब्द का अभिप्राय, अवधारणा तथा तात्पर्य से अवगत होना पड़ता है इसके लिए हमें **शब्दकोश** की आवश्यकता होती है अर्थात् शब्दों की व्युत्पत्ति, तात्पर्य, परिभाषा, प्रयोग आदि की जानकारी प्राप्त करने के लिए जिस ग्रन्थ का अवलोकन हम करते हैं वह **शब्दकोश** (Dictionary) कहलाता है। शब्दकोश में शब्दों को किसी सुनिश्चित अनुक्रम तथा व्यवस्था के अनुसार आँकलित एवम् व्यवस्थित किया गया होता है जो प्रायः अनुवर्णिक क्रम में होता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि **शब्दकोश शब्दों का व्यवस्थित भण्डार होता है।**

शब्दकोष के समान ही कुछ ऐसे भी सन्दर्भ स्रोत हैं जो शब्दों से सम्बंधित होते हैं लेकिन वे अपने अन्य नामों से जाने जाते हैं। उनका उद्देश्य तो वही होता है फिर भी कुछ अन्तर अवश्य होता है। उनके नाम ग्लोसरी (Glossary) लेक्सीकॉन (Lexicon), थिसोरस (Thesaurus) तथा वोकावुलरी (Vocabulary) हैं।

शब्दकोश निम्न प्रकार के होते हैं –

1. सामान्य भाषा शब्दकोश (General Language Dictionary) — ये सामान्य शब्दकोश कहलाते हैं क्योंकि ये किसी एक भाषा के सामान्य शब्दों से सम्बंधित होते हैं तथा अधिक लोकप्रिय एवम् सदैव उपयोग किए जाते हैं। इस प्रकार के शब्दकोश अपने उद्देश्य, आकार, तथा उपयोक्ता की उम्र के अनुसार वर्गीकृत किये जा सकते हैं। जैसे - Oxford English Dictionary.

2. विशिष्ट शब्दकोश (Special Dictionary) – वे शब्दकोश जो किसी विशेष उद्देश्य या किसी भाषा के अनुसार संकलित किये जाते हैं विशिष्ट शब्दकोश कहलाते हैं। जैसे –

Dictionary of Spellings.

English Pronouncing Dictionary.

3. विषय शब्दकोश (Subject Dictionary) – ये वे शब्दकोश होते हैं जो किसी विषय विशेष के पदों से सम्बंधित होते हैं विषय शब्दकोश कहलाते हैं। जैसे –

The McGraw Hill Dictionary of Modern Economics.

4. अनुवाद के लिए उपयोगी शब्दकोश (Dictionary useful for Translations)—

किसी एक भाषा के शब्दों के दूसरी भाषा में अर्थ प्रदान करने के लिए उपयोग किये जाने वाले शब्दकोश द्विभाषी एवम् बहुभाषी शब्दकोश कहलाते हैं। हम सभी **अँग्रेजी-हिन्दी शब्दकोश** या **अँग्रेजी-तमिल शब्दकोश** से परिचित हैं। ये शब्दकोश किसी विदेशी भाषा को याद करने का एक उपकरण हैं। जैसे –

Dictionary of English and Sanskrit.

शब्दकोशों की उपयोगिता एवम् महत्व (Utility and Importance) :

शब्दकोशों की उपयोगिता निम्न प्रकार होती है –

1. शब्दकोश का शब्दों की उत्पत्ति, अवधारणा, अभिप्राय, अर्थ तथा परिभाषा आदि जानने के लिए सन्दर्भ सेवा में विशेष महत्व है।
2. शब्दकोशों का उपयोग शब्दों की विकास प्रक्रिया, वर्तनी, सामासिक चिन्ह की प्रामाणिकता, सत्यापन एवम् जानकारी के लिए किया जाता है।
3. शब्दों के उच्चारण की प्रामाणिकता के लिये भी इनका उपयोग किया जाता है।
4. शब्दों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, उद्भव तथा व्युत्पत्ति की जानकारी के लिए उपयोग किया जाता है।
5. शब्दों की बोलचाल की भाषा का एक स्वरूप जानने के लिए उपयोग किया जाता है।
6. शब्दों के पर्यायवाची, विलोम तथा समानार्थी शब्दों को निश्चित करने के लिए उपयोग किया जाता है।
7. विदेशी पदों एवम् वाक्यांशों की जानकारी प्राप्त करने के लिए उपयोग किया जाता है।
8. उद्धरणों, कहावतों तथा मुहावरों एवम् वाक्यांशों की जानकारी प्राप्त करने के लिए उपयोग किया जाता है।

प्रश्न-9 : विश्वकोश किसे कहते हैं ? इसकी विशेषताएँ भी बताइये।

विश्वकोश का सन्दर्भ ग्रन्थों में एक महत्वपूर्ण स्थान होता है क्योंकि यह सर्वाधिक मात्रा में उपयोगकर्त्ताओं द्वारा उपयोग में लाया जाता है। विश्वकोश उस कृति को कहते हैं जिसमें सम्पूर्ण ज्ञान-जगत के सभी विषयों पर पूर्ण विवरण प्रस्तुत किया गया होता है जिससे वह प्रत्येक प्रकार के जिज्ञासु के प्रश्नों का उत्तर देने में सक्षम होता है। विश्वकोश में सभी विषयों का विवरण आलेख के रूप में वर्णानुक्रम में प्रस्तुत किए होते हैं जो वर्णनात्मक, व्याख्यात्मक, संख्यात्मक, ऐतिहासिक आदि रूप में चार्ट, चित्रों सहित प्रस्तुत किए गये होते हैं।

परिभाषा (Definition) :

विश्वकोश का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि किसी भी विषय-क्षेत्र का आधारभूत ज्ञान पूर्ण रूप से किन्तु संक्षेप में प्राप्त हो सके। प्रारम्भ में विश्वकोश केवल विद्वान व्यक्तियों के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु हुआ करते थे लेकिन आज विश्वकोश सामान्य ज्ञान वाले सामान्य पाठकों को दृष्टिगत रखकर निर्मित एवम् प्रकाशित किए जाते हैं। इनका उपयोग

किसी भी विषय अथवा प्रकरण की पृष्ठभूमि सम्बन्धी सूचना प्राप्त करने के लिए तथा स्वयं शिक्षा के लिए अत्यन्त उपयोगी होता है। अतः विश्वकोश की परिभाषा निम्न प्रकार होती है – **ज्ञान की सभी शाखाओं से सम्बन्धित विस्तृत सूचनाओं की वर्णानुक्रम में व्यवस्थित साहित्यिक कृति को विश्वकोश कहते हैं।**

विश्वकोश दो प्रकार के होते हैं –

1. सामान्य विश्वकोश (General Encyclopaedias) – ये वे विश्वकोश होते हैं जो किसी एक विषय विशेष से सम्बन्धित न होकर लगभग सभी विषयों की जानकारी प्रदान करते हैं। जैसे – Encylopaedia Britannica.
Encyclopaedia Americana.

2. विशिष्ट विश्वकोश (Special Encyclopaedias) – ये वे विश्वकोश होते हैं जो मात्र किसी एक ही विशिष्ट विषय की जानकारी प्रदान करते हैं। जैसे –

McGraw Hill Encylopaedia of Science and Technology.
Encyclopedia of Library and Information Science.

विश्वकोशों की विशेषताएँ (Characteristics) :

किसी भी विश्वकोश में निम्न **विशेषताएँ** होती हैं जो उसके विशिष्ट लक्षण कहे जाते हैं –

1. विश्वकोश सन्दर्भ सेवा प्रदान करने का सबसे प्रमुख, महत्वपूर्ण एवम् उपादेय उपकरण होता है।
2. विश्वकोश सम्पूर्ण ज्ञान-राशि को अपने में समाहित किए रहता है।
3. इसमें समस्त प्रकरणों पर सूचनात्मक लेख होते हैं।
4. यह किसी भी प्रकरण पर सम्पूर्ण परन्तु संक्षेप में विवरण प्रस्तुत करता है।
5. इसमें सामयिक घटनाओं का भी विवरण निहित होता है।
6. एक ही स्थान पर एक प्रकरण पर सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाती है।
7. यह किसी भी प्रकरण से सम्बन्धित उसकी पृष्ठभूमि सम्बन्धी सभी प्रश्नों के उत्तर देने में सक्षम होता है।
8. इसमें सूचनाओं का व्यवस्थापन सामान्यतया वर्णक्रम के अनुसार होता है इसलिए किसी भी व्यक्ति को इसे देखने में कोई असुविधा नहीं होती है।
9. यह विशिष्ट तथा सामान्य दोनों प्रकार से उपयोगकर्त्ताओं को जानकारी उपलब्ध कराता है।
10. इसके प्रकाशक विश्व के प्रतिष्ठित एवम् लोकप्रिय प्रकाशन संस्थान होते हैं।
11. इसलिए विश्वकोशों से प्राप्त सूचना प्रामाणिक तथा विश्वसनीय मानी जाती है।
12. विश्वकोश सामान्य पाठक, छात्र, अध्यापक, विशेषज्ञ आदि सभी की जिज्ञासा को सन्तुष्ट करने में सक्षम होते हैं।

उपरोक्त विशेषताओं एवम् लक्षणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि विश्वकोश पाठकों की जिज्ञासाओं का समाधान करने हेतु सन्दर्भ के पर्याप्त सहायक उपकरण माने जाते हैं जो सम्पूर्ण ज्ञान का भण्डार होते हैं।

प्रश्न-13 : राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों के महत्व एवम् उपयोगिता पर प्रकाश डालिए ?

किसी भी देश की समस्त ग्रन्थों की प्रकाशित सूची उस देश की राष्ट्रीय वांङ्मयसूची कहलाती है जिसमें देश में प्रकाशित, उस देश के नागरिकों द्वारा रचित, उस देश से सम्बंधित अथवा देश की भाषाओं में प्रकाशित सूची **राष्ट्रीय वांङ्मयसूची** कहलाती है। प्रमुख देशों की राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों के उदाहरण निम्न हैं –

Indian National Biblioragphy (India).
British National Bibliography (Great britain).
Bibliography de la France (France).

राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों का महत्व (Importance) :

राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों की महत्ता इस तथ्य के कारण मानी जाती है कि पूरे राष्ट्र के साहित्यिक उत्पादन का विवरण एक साथ एक ही स्रोत से शीघ्र ज्ञात हो जाता है। राष्ट्रीय वांङ्मयसूची ग्रन्थ-चयन के एक उपकरण के रूप में तथा प्रसूचीकरण एवम् वर्गीकरण का मार्गदर्शिका का कार्य करती है साथ ही यह राष्ट्रीय साहित्यिक सम्पदा के सम्प्रेषण के एक उपकरण एवम् साधन का कार्य करती है। किसी राष्ट्र के अतीत में क्या बौद्धिक क्रियाकलाप एवम् उत्पादन रहे हैं और नित्यप्रति कितनी प्रगति हो रही है उसका पूर्ण ज्ञान राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों से ही होना सम्भव होता है तथा राष्ट्रीय वांङ्मयसूची की सहायता से ही विशिष्ट विषय वांङ्मयसूचियों का संकलन एवम् रचना की जाती है।

सभी प्रकार की वांङ्मयसूचियों के संकलन का मुख्य स्रोत राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियां ही हुआ करती हैं इन्हीं वांङ्मयसूचियों के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व के साहित्यिक एवम् बौद्धिक क्रियाकलापों के उत्पादन का अनुमान लगाया जाता है।

राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों की उपयोगिता (Utility) :

राष्ट्रीय एवम् अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सभी प्रलेखों की जानकारी प्राप्त करने हेतु यूनेस्को (Unesco) ने सदैव इस प्रकार की वांङ्मयसूचियों के संकलन एवम् प्रकाशन को प्रोत्साहन प्रदान किया है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वांङ्मयात्मक नियन्त्रण की दृष्टि से सार्वभौमिक वांङ्मयात्मक नियन्त्रण हेतु राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों को अति आवश्यक माना गया है जिनके माध्यम से इस लक्ष्य की पूर्ति हो सकती है। वर्तमान में विश्व में अनेक देश राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों का प्रकाशन नियमित रूप से कर रहे हैं जिनमें 21 राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियां अति उत्तम मानी गयी हैं। राष्ट्रीय वांङ्मयसूचियों की निम्नांकित उपयोगिताएँ हैं –

(1) इससे किसी राष्ट्र विशेष की सम्पूर्ण साहित्यिक उपलब्धियों की पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है जो किसी अन्य वांङ्मयसूची से उपलब्ध नहीं की जा सकती है।
(2) किसी देश विशेष में प्रचलित भाषा/भाषाओं में प्रकाशित प्रलेखों की पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।
(3) इससे आने वाली पीढ़ी को उनके अतीत की साहित्यिक उपलब्धियों, संस्कृति एवम् बौद्धिक क्रियाकलापों की जानकारी प्राप्त होती है।

(4) इससे ज्ञान एवम् विद्वता का प्रवाह एवम् प्रसार होता है।
(5) इससे ग्रन्थ व्यावसायिकों को भी सहायता प्राप्त होती है और इससे व्यावसायिक वांङ्मयसूचियों की कमी की पूर्ति भी होती है।
(6) इससे ग्रन्थालयियों तथा विद्वानों को ग्रन्थ-चयन में सुविधा होती है और इस दृष्टि से इन्हें ग्रन्थ-चयन उपकरण भी माना जाता है।
(7) किसी देश विशेष में प्रकाशित सभी प्रलेखों के वांङ्मयात्मक नियन्त्रण की दृष्टि से राष्ट्रीय वांङ्मयसूची एक महत्वपूर्ण अभिलेख मानी गयी है।

प्रश्न-14 : जीवनचरित स्रोत क्या होते हैं ? इनकी क्या विशेषताएँ होती हैं ? समझाइये ।

बायोग्राफी (Biography) शब्द अँग्रेजी शब्द है जिसका अर्थ **पुरूषों के जीवन का इतिहास** होता है जिसे किसी व्यक्ति के उल्लिखित **जीवन का वृत्तान्त** अथवा **जीवन चरित्र** कहते हैं। संक्षेप में जीवन चरित्र वस्तुतः किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के जीवन वृत्तान्त का एक उल्लिखित प्रलेख होता है। जीवन-चरित्र का सम्बंध मानव के सभी क्रियाकलापों एवम् पक्षों से होता है अतः ऐसी कृतियों से अनेक प्रकार के विवरण प्राप्त होते हैं। अतः जीवनचरित स्रोत वे स्रोत होते हैं जिनमें अनेक कार्य क्षेत्रों, क्रियाकलापों तथा विषयों से सम्बधित महान पुरुषों, वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों, योद्धाओं, साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों, आदि के जीवन एवम् विशेषताओं तथा उपलब्धियों का विवरण प्राप्त होता है। ज्ञान के इन स्रोतों से उक्त देश के इतिहास का विवरण प्राप्त होता है। इतिहासकारों की उपयुक्त सामाग्री प्रस्तुत करने के लिए जीवनचरित स्रोतों का आश्रय लेना पड़ता है। अतः सूचना एवम् सन्दर्भ सेवा की दृष्टि से जीवनचरित स्रोत अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं क्योंकि लोगों में ऐसे महापुरूषों के विषयों की जानकारी प्राप्त करने की जिज्ञासा भी होती है।

जीवन-चरित स्रोत मूलतः उद्यत् सन्दर्भ स्रोतों (Ready Reference Sources) की कृतियाँ होती हैं इनसे व्यक्तियों के विषय में मूल तथ्यों की सूचना प्राप्त होती है और इससे प्रायः निम्न सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं –

1. किसी लेखक की मूल कृतियाँ कौन-कौन सी हैं? इस लेखक के विषय में अन्य लेखकों की कौन-सी कृतियाँ हैं।
2. किसी प्रमुख व्यक्ति को कितनी शिक्षा मिली है और कहाँ-कहाँ से ?
3. अमुक व्यक्ति ने किन-किन पदों को सुशोभित किया है ?
4. अमुक व्यक्ति का पूरा नाम क्या है ? और उसके नाम की वर्तनी क्या है ? इसके जन्म व मरण की तिथियाँ क्या हैं ?
5. अमुक व्यक्ति का जन्म कहाँ हुआ था और उसके माता पिता कौन थे? उसके पते क्या हैं ?

विशेषताएँ (Characteristics) – जीवनचरित स्रोतों की निम्न विशेषताएँ होती हैं–

1. अन्तर्राष्ट्रीय जीवनचरित स्रोत प्रायः प्रकाशन के देश के प्रति पूर्वाग्रह रखते हैं अतः अन्य देशों की अपेक्षा अपने देश की राष्ट्रीयता को अधिक महत्व एवम् स्थान प्रदान

करते हैं।

2. राष्ट्रीय जीवनचरित स्रोतों में अधिक महत्व राष्ट्रीय जीवनियों को दिया जाता है।
3. विषयोन्मुख तथा विशिष्ट प्रकार के जीवनचरित स्रोतों में प्रमुखतः सामान्य विषय के क्षेत्रों की अपेक्षा सम्बंधित विषय क्षेत्र में सूचना अधिक विस्तार से प्रस्तुत की जाती है अर्थात् किसी विषय जैसे – विज्ञान, साहित्य अथवा समाज विज्ञान के जीवनचरित स्रोतों में क्रमशः सम्बंधित विषय की जीवनियाँ होती हैं।
4. राज्य, क्षेत्र, स्थानीय स्तर के जीवन-चरित स्रोतों में इन क्षेत्रों के प्रमुख व्यक्तियों का विवरण अधिक दिया जाता है और राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के व्यक्तियों को इनमें स्थान नहीं मिलता है।
5. जीवित व्यक्तियों की जानकारी के लिए जीवनचरित स्रोतों का उपयोग किया जाता है।
6. लेखकों का जीवन चरित्र गैर-लेखकों की अपेक्षा ज्ञात करना सरल होता है। जीवनचरित स्रोतों में विवरणात्मक एवम् समीक्षात्मक दोनों विवरण मिलते हैं।
7. किसी समय विशेष की अवधि में प्रकाशित जीवन-चरित स्रोतों में तत्कालीन विचार एवम् अभिमत का प्रतिनिधित्व किया गया होता है अतः इनके आधार पर ही चयन किया जाता है और तद्नुसार सूचना की मात्रा भी प्रस्तुत की जाती है।

प्रश्न-15 : भौगोलिक सूचना स्रोतों से आप क्या समझते हैं ? इनके प्रत्येक प्रकार का विवरण भी कीजिए ?

भौगोलिक सूचना स्रोत जैसा कि इनके नाम से विदित होता है ये वे सूचना के स्रोत होते हैं जिसमें भूगोल विषय से सम्बंधित सूचनाएँ अर्थात् भौगोलिक सूचनाएँ निहित होती हैं जहाँ भौगोलिक सूचना का तात्पर्य पृथ्वी पर किसी विशिष्ट प्रकार की स्थिति एवम् पते से सम्बंधित विवरण तथा डेटा होते हैं। भौगालिक सूचना में पृथ्वी की सतह, विश्व के महाद्वीप एवम् देशों में विभाजन, जलवायु, पौधे, पशु-पक्षी, प्राकृतिक संसाधन, प्रदूषण कारक, पृथ्वी पर रहने वाले लोग तथा उनसे सम्बंधित उद्योग आदि आते हैं। भौगोलिक सूचना स्रोतों का उपयोग भौगोलिक प्रश्नों के समाधान के लिए किया जाता है। भौगोलिक प्रश्नों में नगरों, कस्बों, पर्वतों, झीलों, नदियों वनों आदि तथा उनकी स्थिति, विवरण तथा अन्य सूचनाओं से सम्बंधित प्रश्न होते हैं। जैसे – कलकत्ता नगर की स्थिति, उसके अक्षांस एवम् देशान्तर, तथा समुद्र तल से ऊँचाई, नागपुर से मद्रास की दूरी, विश्व तथा विभिन्न देशों एवम् उनके नगरों की जनसंख्या, भारत के किसी भी भाग की नदियाँ, हिमालय का तापमान, जलवायु, आदि प्रश्न। वर्तमान समय में भौगोलिक स्रोत अधिकांश ग्रन्थालयों में सन्दर्भ सूचना प्रदान करने के महत्वपूर्ण अंग बन चुके हैं। भौगोलिक प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने हेतु जो भौगोलिक स्रोत उपयोग में लाये जाते हैं उनमें **नक्शे** (मानचित्र), **एटलस** (मानचित्रावलियाँ), **ग्लोब**, **गजेटियर्स** तथा **यात्रा दर्शिकाएँ**) (Travel Guides) मुख्य होती हैं।

प्रकार (Kinds of Geographical Sources) :

भौगोलिक स्रोत जो सन्दर्भ कार्य हेतु ग्रन्थालयों में उपयोग में लाये जाते हैं वे निम्न प्रकार के हैं –

1. नक्शे, मानचित्रावलियाँ तथा ग्लोब (Maps, Atlases and Globes) – नक्शे भौगोलिक सूचना प्रदान करने के मुख्य स्रोत होते हैं। नक्शा एक रेखाचित्रीय प्रलेख होता है जिसमें किसी भी स्थान की स्थिति, दिशा, सीमा, आदि बड़े ही संक्षिप्त रूप में दिखाई जाती है तथा नक्शों का निर्माण एक गणितीय प्रक्रिया होती है जो मापों एवम् गणनाओं के द्वारा कठोरता के साथ नियन्त्रित की जाती है। मानचित्रावली एक खण्ड में बँधे हुए अनेक नक्शों का संग्रह होता है तथा ग्लोब पृथ्वी के धरातल को गोलीय रूप में प्रदर्शित करता है अर्थात् ग्लोब पृथ्वी के धरातल का गोलीय प्रदर्शन है। नक्शे एवम् मानचित्रावलियों की आवश्यकता एक सामान्य व्यक्ति के साथ-साथ विशेषज्ञों को भी अपने भौगोलिक प्रश्नों की संतुष्टि के लिए आवश्यकता होती है। नक्शे एवम् मानचित्रावलियाँ अनेक प्रकार के हो सकते हैं जिनमें सभी तरह के उपयोक्ताओं हेतु उपयोगी भौगोलिक सूचनाएँ निहित होती हैं। **उदाहरण** –

1. The Times Atlas of the World.
2. Atlas of India.
3. Maps of Mughal India.

2. गजेटियर (Gazetteers) – गजेटियर एक ऐसा भौगोलिक सन्दर्भ स्रोत है जो या तो एटलस की अनुक्रमणिका के अर्थ में लिया जाता है या एक स्वतंत्र सन्दर्भ स्रोत के रूप में प्रकाशित वह प्रलेख होता है जो किसी स्थान, देश या क्षेत्र विशेष के स्थानों के बारे में उपयोगी सूचना प्रदान करते हैं। इस प्रकार गजेटियर एक **भौगोलिक शब्दकोश** के समान होता है **जो स्थानों का शब्दकोश** भी कहा जा सकता है। इनका प्रकाशन क्षेत्र के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय या जिला स्तर पर भी होता है। अतः गजेटियर में सामान्यतया किसी शहर, जिले या स्थान के बारे में सूचना खोजी जा सकती है। एक सन्दर्भ स्रोत के रूप में गजेटियर किसी स्थान विशेष के बारे में ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, औद्योगिक, प्रशासनिक प्रकार की सूचनाएँ प्रदान करता है। गजेटियर क्षेत्र के अनुसार राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय तथा जिला स्तर पर प्रकाशित होते हैं। उनके उदाहरण निम्न प्रकार के हैं –

1. Webster's New Geographical Dictionary (International).
2. Chamber's World Gazetteers (International).
3. Imperial Gazetteers of India (National)
4. Bihar Districts Gazetteers (Local)

3. यात्रा दिग्दर्शिकाएँ (Travel Guides) — यात्रा दिग्दर्शिकाएँ यात्रियों के मार्गदर्शन हेतु सूचना प्रदान करने का एक अत्यन्त उपयोगी सन्दर्भ स्रोत हैं। यात्रियों को क्या देखना है? कहाँ ठहरना है? तथा किसी स्थान विशेष पर किस प्रकार पहुँचना है? ये सभी सूचनाएँ यात्रा दिग्दर्शिकाएँ प्रदान करती हैं। इस प्रकार यात्रा दिग्दर्शिकाएँ एक छोटी सी हस्त-पुस्तिकाएँ होती हैं जो यात्रियों का हर प्रकार का मार्गदर्शन करती हैं। ये दिग्दर्शिकाएँ किसी शहर, क्षेत्र या किसी देश के बारे में भौगोलिक सूचनाएँ प्रदान करती हैं तथा विशिष्ट दर्शनीय स्थानों के बारे में भी उपयोगी सूचनाएँ प्रदान करती हैं। इनमें निहित सूचनाएँ ऐतिहासिक, आर्थिक एवम् सामाजिक पहलुओं को भी प्रदर्शित करती हैं तथा साथ ही इनमें शहरों के नक्शे, चित्र एवम् एक दूसरे से दूरियाँ आदि को भी प्रदर्शित किया जाता है जो इन दिग्दर्शिकाओं की उपयोगिता

में वृद्धि करते हैं। ग्रन्थालयों में यात्रा दिग्दर्शिकाएँ सन्दर्भ ग्रन्थालयियों द्वारा स्थान विशेष, ऐतिहासिक दृश्य, आदि के बारे में विस्तृत सूचनाएँ प्रदान करने हेतु उपयोग में लाई जाती हैं। इन दिग्दर्शिकाओं में निहित कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों में किसी स्थान की जलवायु, रेलमार्ग, सड़क मार्ग, होटल आदि के नाम ठहरने हेतु, रेल सारिणी आदि प्रमुख हैं। **उदाहरण** –

Hill Resorts of India, Nepal and Bhutan.
Uttar Pradesh AZ.
South India : A Travel Guide.
Tourist Guides — India.

प्रश्न-16 : सांख्यिकीय स्रोत से आपका क्या आशय है ? इनका उपयोग करने में उपयोक्ताओं के समक्ष क्या समस्याएँ आती हैं ? समझाइये।

जिन स्रोतों से किसी भी प्रकार की गणना अथवा सांख्यिकी का ज्ञान प्राप्त होता है वे स्रोत **सांख्यिकीय स्रोत** कहलाते हैं। सांख्यिकी अंकीय तथ्यों एवम् डेटाओं के संकलन, वर्गीकरण, विश्लेषण एवम् प्रदर्शन से सम्बन्धित होती है। सांख्यिकी किसी भी क्षेत्र में भविष्य के क्रियाकलापों का खाका खींचने अथवा मानव क्रियाकलापों का अथवा विभिन्न क्षेत्रों की स्थिति का आँकलन करने में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। छात्रों को सांख्यिकी की आवश्यकता अपने तर्कों को मजबूत आधार प्रदान करने, प्रशासकों को उनके उत्तरदायित्व के सन्दर्भ में उनकी उपलब्धियों का स्तर निर्धारण करने तथा योजनाकार को भविष्य की विकासात्मक परियोजनाओं का खाका खींचने हेतु आवश्यकता होती है। अतः ग्रन्थालयों में सांख्यिकी तथ्यों से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने हेतु सांख्यिकीय सूचना स्रोतों का संग्रहण होना आवश्यक होता है।

सांख्यिकीय स्रोतों की आवश्यकता उद्योगों की स्थापना, अध्ययन-अध्यापन में, अनुसंधान तथा विभिन्न प्रकार के निर्णय लेने में होती है। ये स्रोत अनेक रूपों में होते हैं। सांख्यिकीय स्रोतों में कृषि, उत्पादन, आयात-निर्यात, पशु-पक्षी, जंगल, उद्योग, व्यापार, रोजगार, अर्थशास्त्र, शिक्षा, जनसंख्या, वित्त, संविधान एवम् सरकार, सिंचाई, ऊर्जा, परिवहन आदि से सम्बन्धित सूचनाएँ होती हैं। सांख्यिकीय स्रोतों के उदाहरण निम्न प्रकार हैं –

1. Demographic Year book (New York).
2. Statesman's Yearbook (London).
3. World Almanac : A book of facts (New York).
4. Census of India (India).
5. Guinness Book of World Records (New York).
6. Reserve Bank of India Bulletin (India).

किसी भी ग्रन्थालय के लिए सांख्यिकीय स्रोत उपादेय सूचनाओं के स्रोत होते हैं। इनको सूचना स्रोत के रूप में उपयोग करने में कुछ समस्याएँ आती हैं जो निम्न हैं

1. सांख्यिकीय स्रोत कभी अद्यतन नहीं होते हैं – सांख्यिकीय स्रोतों का संकलन एक समयसाध्य कार्य होता है जिसमें डेटा एकत्रित किये जाते हैं, प्रक्रियाबद्ध किये जाते हैं

तथा अन्त में एक सार्थक आरूप में रखे जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप इनके प्रकाशन में दो से तीन वर्ष का समय लग जाता है जिससे इन तीन वर्षो के सांख्यिकीय डेटा इन स्रोतों में नहीं आ पाते हैं। इलैक्ट्रोनिक प्रलेखों में हुए नवीन विकासों ने कुछ सीमा तक इस प्रकाशन प्रक्रिया के समय रूपी व्यवधान को रोकने में सफलता प्राप्त कर ली है लेकिन अभी भी सबसे अन्तिम डेटा सदैव उपलब्ध नहीं हो पाते हैं।

2. इनके द्वारा प्रदत्त सांख्यिकी उपयोगकर्त्ता की आवश्यकता के अनुरूप नहीं हो सकती है – इन स्रोतों द्वारा प्राप्त सांख्यिकी उस रूप में नहीं होती है जिस रूप में उपयोगकर्त्ता को आवश्यकता होती है जिसके परिणामस्वरूप उपयोगकर्त्ता को या तो दूसरा सूचना स्रोत अवलोकन करना पड़ता है अथवा सार्थक हल प्राप्त करने हेतु उसे पुनः गणना करनी पड़ती है।

3. इनकी विषयवस्तु समझने में कठिनाई होती है – जब तक कि उपयोगकर्त्ता सांख्यिकी के प्रारम्भिक पदों जैसे – आधार, संख्या, अनुपात, मध्यमान, अंकगणितीय मध्यमान आदि के बारे में ज्ञान नहीं रखता है तो उनके लिए स्रोतों में दी गई सांख्यिकी तथा साधारण सारणियों को समझना कठिन हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों में ग्रन्थालयी द्वारा उठाये गये प्रश्नों का विश्लेषण करने तथा उनके उत्तर प्रदान करने हेतु सन्दर्भ ग्रन्थालयी को सदैव तैयार रहना चाहिए।

4. सांख्यिकियों की अनुपलब्धता – उपयोगकर्त्ता को कभी-कभी अपने वान्छित प्रश्न के उत्तर के लिए सांख्यिकी की अनुपलब्धता की समस्या का भी सामना करना पड़ सकता है। यह इसलिए होता है कि सभी पहलुओं पर डेटाओं का संग्रहण करना सम्भव नहीं होता है। इसलिए पहले से ही तैयार डेटा सदैव उपलब्ध नहीं रह सकते हैं।

5. इसके अतिरिक्त सांख्यिकियाँ जो एकत्रित की जा चुकी हैं वे व्यक्तिगतता, व्यापारिक गोपनीयता, राज्य सुरक्षा जैसे कारणों से उपयोग हेतु उपलब्ध नहीं भी हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कारणों में इनका मूल्य भी होता है जिसका ग्रन्थालय की क्षमता के बाहर क्रय करना होता है।

प्रश्न-17 : त्वरित सन्दर्भ स्रोत त्वरित क्यों कहलाते हैं ? कौन-कौन से प्रलेख त्वरित सन्दर्भ स्रोत माने जाते हैं ? प्रत्येक का संक्षिप्त विवरण भी दीजिए।

त्वरित सन्दर्भ स्रोत सूचना प्रदान करने के वे स्रोत होते हैं जो उपयोक्ताओं के तथ्यात्मक प्रश्नों के उत्तर त्वरित गति से शीघ्रतम प्रदान करने के लिए संदर्भित किए जाते हैं। ये प्रायः धारावाहिक प्रकाशन होते हैं जो संक्षिप्त तथा सटीक सूचना प्राप्त करने हेतु अत्यन्त उपयोगी होते हैं। इन स्रोतों से तथ्यात्मक खोज सेवा प्रदान की जाती है। इसलिए इन्हें **पूर्णरूप से अद्यतन तथ्यात्मक ग्रन्थ** (Fact-Books thoroughly uptodate) के रूप में माना जाता है। त्वरित सन्दर्भ स्रोतों की श्रेणी में वार्षिकी, पंचांग, निर्देशिकाएँ आदि आती हैं जिनका विवरण निम्न प्रकार हैं –

1. वार्षिकी (Yearbooks) — त्वरित सन्दर्भ स्रोतों में वार्षिकी का महत्वपूर्ण स्थान होता